भोलानाथ तिवारी



प्रकाशक शब्दकार
2203 गली डकौतान
तुर्कमान गेट दिल्ली 110006
मूल्य पचीस रुपये
प्रथम संस्करण 1982
मुद्रक शान प्रिंटर्स शाहदरा दिल्ली 110032
आवरण चेतन दास
आवरण मुद्रक परमहंस प्रेस नारायणा नई दिल्ली
पुस्तक-बंध खुराना बुक बाइंडिंग हाउस दिल्ली 110006

शब्द विज्ञान

भोलानाथ तिवारी

शब्दकार

मध्यकालीन हिंदी साहित्य के ममज्ञ विद्वान्
श्रद्धेय नमदेश्वर चतुर्वेदी के लिए
जो मेरे लिए सवदा ही
प्रेरणा के अक्षय स्रोत रहे हैं।

लेखकीय

शब्दो के अध्ययन म बचपन से ही मेरा मन बहुत रमता रहा है तथा पिछले तीस बत्तीस वर्षों से मेरी यह मा यता रही है कि 'शब्दा का अध्ययन' अपन आप मे इतना महत्त्वपूण है कि अथविज्ञान, वाक्य विनान, रूपविज्ञान तथा ध्वनिविनान की तरह उसका भी अलग नाम हाना चाहिए तथा उसे भी भापाविज्ञान की एक स्वतत्र शाखा के रूप म स्वीकृति मिलनी चाहिए। यह पुस्तक मेरी उसी मा यता का मूत रूप है।

इसके पूव शब्दो के सवध म मेरी चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं शब्दो का जीवन, 'शब्दा का अध्ययन, 'पारिभाषिक श दावली कुछ समस्याएँ तथा 'शब्दो की कहानी'। इस पाचवी पुस्तक 'श विज्ञान के रूप म मैंने शब्द विपयक अपन पूरे चिंतन को एक सैद्धातिक अध्ययन का रूप देने का प्रयास किया है। यों, इस दिशा म पहली पुस्तक होने के कारण, इसकी अपनी सीमाएँ भी है। आशा है आग काम करनवा न इस विषय को अधिक पूणता प्रदान कर सकेंगे।

—भोलानाथ तिवारी

अनुक्रमणिका

1
शब्दविज्ञान

यह नाम

जिस प्रकार अर्थ, वाक्य, रूप तथा ध्वनि के अध्ययन को क्रमशः अर्थविज्ञान, वाक्यविज्ञान, रूपविज्ञान तथा ध्वनिविज्ञान कहते हैं, उसी प्रकार शब्दों के अध्ययन को 'शब्दविज्ञान' नाम दिया जा सकता है।

नाम का औचित्य

सन 1949 में एम० ए० की परीक्षा देने के बाद, जिन दिनों मैं अपनी पुस्तक 'भाषाविज्ञान' की पांडुलिपि को अंतिम रूप दे रहा था, मेरे सामने अध्यायों के नामकरण की एक समस्या आई। अंग्रेजी में भाषाविज्ञान की शाखा के रूप में उस समय प्रायः चार का उल्लेख परंपरागत ग्रंथों में मिलता था Semantics, Syntax, Morphology, Phonetics। इनके आधार पर मैंने इन विषयों से सम्बद्ध अध्यायों को अर्थविज्ञान, वाक्यविज्ञान, रूपविज्ञान तथा ध्वनिविज्ञान नाम दिया। समस्या थी 'शब्द' की। शब्दों के अध्ययन के लिए अंग्रेजी में कोई भी नाम उस समय तक प्रचलित नहीं था, और जहां तक मैं जानता हूँ, आज भी नहीं है। मेरे मन में आया कि जब अर्थ वाक्य, रूप, ध्वनि के अध्ययन को हम अर्थविज्ञान वाक्यविज्ञान, रूपविज्ञान, ध्वनिविज्ञान कहते हैं तो शब्द के अध्ययन को शब्दविज्ञान कहा जा सकता है। यह सोचकर भी मैं अपने शब्दवाले अध्याय को शब्दविज्ञान नाम नहीं दे सका, क्योंकि अंग्रेजी में कोई नाम नहीं था, जिसके प्रतिशब्द के रूप में मैं 'शब्दविज्ञान' नाम का प्रयोग कर सकूं। जहां तक मुझे याद है, मैंने उस अध्याय का शीर्षक 'शब्द' रखा था। बाद में कदाचित् 1954 में जब उसका दूसरा संस्करण निकला तो मैंने शब्दों के सभी प्रकार के अध्ययनों के लिए 'शब्दविज्ञान' नाम का प्रयोग करने का निश्चय कर लिया था, तथा चूंकि अंग्रेजी में इसका समानार्थी कोई शब्द नहीं था, अतः मैंने Word के आधार पर, 'शब्दविज्ञान' के लिए, अंग्रेजी Morphology के सादृश्य पर Wordology शब्द गढ़ लिया था। उसके बाद के भी संस्करणों में शब्दविज्ञान के साथ अंग्रेजी प्रतिशब्द के रूप में मैं *Wordology* शब्द का प्रयोग करता रहा हूँ।

मेरे कई अपरिचितों, परिचितों तथा मित्रों ने मेरे इन दोनों नामों का विरोध

किया तथा जैसाकि प्रायः होता है, कुछ महानुभावों ने इन दोनों का सकर म मजाक उड़ाने का भी यत्न किया।

एक बार कदाचित उदयपुर विश्वविद्यालय में कोई सेमिनार चल रहा था। दिल्ली से मैं तथा कुछ और लोग गए थे। मुझे भाषा के अध्ययन की अनुनातन प्रवृत्तियों पर बोलना था। वह सेशन हिंदी अंग्रेजी का संयुक्त था, अतः मुझे मिश्रित भाषा में बोलने को कहा गया था। वहाँ मैंने अच्छा अवसर देखा तथा शब्दविज्ञान की विस्तार से चर्चा की तथा उसके प्रतिशब्द रूप में, अंग्रेजी में Wordology शब्द अपनाने का सुझाव दिया। अनुकूल तथा तीखी सभी प्रकार की प्रतिक्रियाएँ आईं। राजस्थान के एक भाषाशास्त्री ने कहा कि 'शब्दविज्ञान में जो कुछ भी आ सकता है उसे रूपविज्ञान में रखा जा सकता है। इसी तरह Wordology की भी आवश्यकता नहीं। Morphology में उसकी सभी बातें आ जाती हैं। मेरा उत्तर था

(क) रूपविज्ञान रूपों के अध्ययन विश्लेषण का विज्ञान है। रूप सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं कारकीय रूप और क्रिया रूप। रूप और शब्द एक नहीं होते। शब्द का केवल अर्थ होता है किन्तु रूप या पद में अर्थ के अतिरिक्त वाक्य के अन्य घटकों से अपने को जोड़ने की शक्ति भी होती है। शब्द में सम्बन्धतत्त्व जोड़ने से रूप/पद बनते हैं सुप्तिङन्त पद। लड़का शब्द है तो 'लड़के ने', लड़के को लड़के से आदि पद या रूप हैं। इस तरह रूपविज्ञान शब्दों से रूपों की रचना का विज्ञान है।

(ख) किसी भी भाषा में सर्वदा शब्द एक नहीं होते। हिंदी में जो शब्द आदिकाल में प्रयुक्त होते थे भक्तिकाल में वे ही शब्द नहीं थे इसी तरह रीतिकाल तथा आधुनिक काल में भी बहुत से शब्द लुप्त हो गए तथा बहुत से नए आ गए। इस तरह किसी भी भाषा की शब्द-संपदा उसके शब्दभाण्डार या शब्दसमूह का अध्ययन पुराने शब्दों के लुप्त होने तथा नए शब्दों के आ जाने का अध्ययन शब्दविज्ञान' में हो सकता है रूपविज्ञान में नहीं।

(ग) इस तरह Morphology को हिंदी में रूपविज्ञान नाम दें या 'पदविज्ञान', शब्दों से संबद्ध सभी प्रकार के अध्ययनों को उस (रूपविज्ञान या पदविज्ञान) में नहीं रखा जा सकता। वह तो मूलतः रूपों या पदों की रचना के (वर्णनात्मक ऐतिहासिक, तुलनात्मक या व्यतिरेकी) अध्ययन का विज्ञान है।

इसके बाद अंग्रेजी के एक विद्वान् ने कहा कि यह ठीक है कि पद या रूप के विशेष अर्थ के कारण पदविज्ञान तथा रूपविज्ञान में शब्दविज्ञान नहीं रखा जा सकता, किंतु अंग्रेजी Morphology में केवल रूप या पद रचना का अध्ययन नहीं आता, बल्कि शब्द रचना का अध्ययन भी आता है अतः Morphology के रहते किसी Wordology जैसे शब्द की आवश्यकता नहीं।

मेरा उत्तर था—

अंग्रेजी में Wordology लें या न लें, यह अंग्रेजीवालों की इच्छा पर निर्भर

करता है, मेरा तो यह सुझाव मात्र है। हाँ, यह मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि शब्द की रचना का अध्ययन तो Morphology म आ सकता है किंतु शब्द सम्बन्धी सभी अध्ययन उसमे नही आ सकते। उदाहरण के लिए चॉसर के जमान की अग्रेजी मे जो शब्द चलते थे, वड् सवथ के जमाने म वे नही थे तथा जो वड् सवथ के जमाने मे चलते थे, आज नही हैं। इस तरह हर जमान मे कुछ श द प्रयाग से निकल जाते हैं तथा कुछ नए शब्द प्रयोग मे आ जाते हैं। नए शब्दा के इस तरह आने तथा पुराने शब्दो के जाने का अध्ययन, शब्दो के अध्ययन या शब्दविनान म तो आता है किंतु आप शायद खुद ही इस तरह के अध्ययन को Morphology मे रखना नही पसद करेंगे।

स्वभावत उन प्रश्नकर्ता महोदय की खामोशी का अथ मैंन सहमति ली और बात आगे बढी।

अग्रेजी के ही एक दूसरे व्यक्ति ने कहा कि डॉ० तिवारी की इस बात स मैं सहमत हूँ कि शब्दो से सबधित सभी अध्ययन Morphology मे नही रखे जा सकते और भाषाविज्ञान की कोई और शाखा उसके लिए अपेक्षित है जिसके लिए 'शब्दविज्ञान' नाम ठीक है, किंतु Wordology की जरूरत नही। Lexicology मे शब्दा के सभी प्रकार के अध्ययन को समेटा जा सकता है।

इस सबध म मेरा विनम्र निवेदन यह था कि Lexicology यूनानी भाषा के lexis तथा legein से बना है। lexis का अथ है 'शब्द तथा legein का अथ है 'बोलना अर्थात शब्दा के बारे मे बोलना अर्थात शब्दविज्ञान, किंतु आज जहा तक मेरी जानकारी है, अग्रेजी मे Lexicology शब्द का प्रयोग 'कोशविज्ञान के लिए हो रहा है तथा Lexicography का 'कोशकला' के लिए। कहना न होगा कि 'कोशविनान' और 'शब्दविज्ञान' एक नही ह। इस तरह मेरे विचार म 'शब्द-विज्ञान' के ठीक अर्थ मे अग्रेजी म कम-स कम इस समय कोई शब्द नही है, और उस कमी की पूर्ति के लिए Wordology शब्द बुरा नही है। इन सबके बावजूद भी यदि अग्रेजी वाले Wordology शब्द न लेना चाह तो भला मुझे क्या आपत्ति हो सकती है।

इस पर एक अग्रेजी के ही व्यक्ति न कहा कि इस नए अथ मे अग्रेजी म Wordology का स्वीकार करने म मुझे कोई आपत्ति नही दीखती। अग्रेजी म एक शब्द है linguist, जिसका सामान्य अथ है 'कई भाषाएँ जाननेवाला'। इम शब्द का प्रयाग कुछ लोग भाषाविज्ञानवेत्ता के लिए भी करते हैं। इस द्विअथता से बचने के लिए एक बार डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा न इग्लैंड म अपने किसी भाषण म भाषाविज्ञानवेत्ता के लिए linguistics मे linguistician शब्द बना लन का सुझाव दिया था। इस पर प्रसिद्ध अग्रेज ध्वनिविज्ञानवेत्ता डैनियल जोन्स न कहा था कि शब्द अच्छा है, आप भारतीय इसका प्रयोग शुरू करें वहा से हम लाग इसे ल लेंगे।

खैर, आगे चलकर मैंने अग्रेजी शब्द Wordology पर अपना आग्रह ता छोड

दिया किंतु 'शब्दविज्ञान' तब से प्रयुक्त करता आ रहा हूँ, और इधर मैंने पाया है कि मेरे आधार पर कई अन्य लोग भी भाषाविज्ञान की एक शाखा के रूप में शब्दविज्ञान का प्रयोग कर रहे हैं। या उसके साथ एक स्थान पर मैंने Wordology का भी कोष्ठक में प्रयोग देखा है।

तो यह है भाषाविज्ञान की एक शाखा के रूप में 'शब्दविज्ञान' नाम की कहानी और उसका औचित्य।

इस तरह ध्वनिविज्ञान, रूपविज्ञान तथा अर्थविज्ञान की तरह ही शब्दविज्ञान भी भाषाविज्ञान की एक शाखा है और प्रस्तुत पुस्तक का संबंध इस नई शाखा से ही है।

शब्दविज्ञान का प्रतिपाद्य

शब्दविज्ञान चूंकि शब्दों के अध्ययन का विज्ञान है, अतः शब्दों से संबद्ध सभी प्रकार के अध्ययन इसमें समाहित किए जा सकते हैं। इस दृष्टि से 'शब्द की परिभाषा', 'शब्दों का वर्गीकरण', 'शब्दरचना', 'शब्दार्थ और उसमें परिवर्तन', 'शब्दों की व्युत्पत्ति', 'शब्द समूह और उसमें परिवर्तन', 'नामों का अध्ययन', 'ध्वनि की दृष्टि से शब्दों का अध्ययन', 'शब्दकोशविज्ञान', तथा 'प्रयोग और समाज की दृष्टि से शब्दों पर विचार' आदि इसके प्रतिपाद्य या वर्ण्यविषय हैं।

शब्दविज्ञान की शाखाएँ

उपर्युक्त बातों को दृष्टि में रखते हुए शब्दविज्ञान की मुख्यतः निम्नांकित शाखाएँ मानी जा सकती हैं—

शब्दरचनाविज्ञान

इसमें शब्दों के निर्माण या उसकी रचना का अध्ययन होता है। कहना न होगा कि भाषा में शब्द दो प्रकार के होते हैं: रूढ़ और यौगिक। शब्दनिर्माण-विज्ञान में प्रायः यौगिक शब्दों की रचना का अध्ययन होता है किंतु रूढ़ शब्दों का अध्ययन भी इस रूप में हो सकता है कि वे शब्द कैसे बन गए।

शब्दार्थविज्ञान

इसमें 'शब्दार्थ क्या है', 'वह कितने प्रकार का होता है', 'उसमें परिवर्तन किन किन कारणों से तथा कितने प्रकार का होता है' आदि शब्द के अर्थ-संबंधी अनेकानेक प्रकार की बातों का अध्ययन किया जा सकता है। यह सर्वेत्य है कि अर्थ केवल शब्द का ही नहीं होता, शब्द के अतिरिक्त शब्द से बड़ी भाषिक इकाई का भी होता है और ऐसा भी होता है कि शब्द से बड़ी इकाई का कोई अर्थ हो, जो उसमें प्रयुक्त शब्दों में न हो। उदाहरण के लिए Is Ram तथा going इन शब्दों में क्या का अर्थ नहीं है किंतु Is Ram going ? वाक्य में, इसके घटक

(तीन पदो) के अतिरिक्त 'क्या' का भी अथ है। इस तरह शब्दाथ पूरे भापाथ का एक अग है, और मात्र उसी का अध्ययन शब्दाथविज्ञान मे होता है। इसके विपरीत अथविज्ञान में शब्द, पद, पदवध, वाक्य, प्रोक्ति आदि सभी का अथ मवधी अध्ययन आ जाता है।

शब्दसमूहविज्ञान

किसी व्यक्ति, भापा या बोली द्वारा प्रयुक्त होने वाले या हुए शब्दा के समूह को शब्दसमूह (Vocabulary) या शब्दभाण्डार कहते हैं। किसी (व्यक्ति, भापा या बोली पुस्तक आदि) का शब्दसमूह कैसा है, उसके कौन कौन से घटक है तथा उसमे क्या कभी परिवतन हुए है, यदि हुए है तो कब कब हुए है तथा किन कारणा से हुए हैं आदि बातो का अध्ययन शब्दसमूहविज्ञान का प्रतिपाद्य माना जा सकता है।

नामविज्ञान

वसे तो प्रत्येक सज्ञा शब्द किसी न किसी के नाम होते हैं किंतु नामविज्ञान का सबध प्राय व्यक्तिवाचक सज्ञाओ से है। इसमे व्यक्तिनाम, स्थाननाम, नदी-नाम, पवतनाम आदि व्यक्तिवाचक सज्ञाओ या नामो का अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन शुद्ध भापिक दृष्टि से भी हो सकता है तथा सांस्कृतिक दृष्टि से भी। इसमे नामो का निर्माण या उनकी रचना, उनका अथ तथा उनकी व्युत्पत्ति आदि पर विचार किया जाता है अत 'शब्द' से सबधित शब्दनिर्माणविज्ञान, शब्दाथविज्ञान तथा व्युत्पत्तिविज्ञान आदि भी अशत इसमे आते है।

शब्दध्वनिविज्ञान

भापा के ध्वनीय घटको का अध्ययन शब्द के स्तर पर भी हो सकता है तथा शब्द से बडी भापिक इकाई के स्तर पर भी। उदाहरण के लिए हिंदी म अनुतान (Intonation) का अध्ययन शब्द-स्तर पर न होकर वाक्य के स्तर पर होना है। ऐसे ही बहुत सी सधियां ऐसी है जो हिंदी मे शब्द-स्तर पर नहीं मिलती, अपितु वाक्य-स्तर पर मिलती ह। जैसे आध+सर=आस्सेर, मार+डाला=माड्-डाला। शब्दध्वनिविज्ञान से मेरा आशय है शब्द के स्तर पर किसी भापा की ध्वनियो का अध्ययन। इसे वड फोनालॉजी (Word Phonology) का समानार्थी माना जा सकता है। तो इस प्रकार ध्वनि की दृष्टि से शब्द का अध्ययन शब्द-ध्वनिविज्ञान है।

व्युत्पत्तिविज्ञान

इसम सभी प्रकार के शब्दो की व्युत्पत्ति का अध्ययन किया जाता है। यह ध्यान देने की बात है कि सस्कृत मे उपसग, प्रत्यय और धातु से जो शब्द

व्युत्पत्ति दी जाती है, वह तत्त्वत आधुनिक अर्थों म व्युत्पत्ति न होकर शब्द रचना है। व्युत्पत्ति से आशय है किसी शब्द का उद्भव और उसका अथ, ध्वनि तथा एक भाषा स दूसरी भाषा म जाने आदि का पूरा इतिहास।

शब्दकोशविज्ञान

यह शब्दो का कोश बनाने का विज्ञान है जो शब्दो के उच्चारण, उनकी व्याकरणिक कोटियाँ व्युत्पत्ति तथा अथ आदि से सबद्ध है। यह सकेत्य है कि कोश-विज्ञान और शब्दकोशविज्ञान पूणत एक नही है। क्योकि कोश तो शब्द से अलग अन्या (लोकोक्तिकोश उद्धरणकोश प्रयोगकोश) का भी हो सकता है इसी-लिए यहाँ कोशविज्ञान' का प्रयोग न करके 'शब्दकोशविज्ञान' का प्रयोग किया जा रहा है।

शब्दप्रयोगविज्ञान

इसका सबध शब्दो के प्रयोग स है। प्रत्येक भाषा मे शब्दो के प्रयोग के विषय म कुछ सतकताएँ बरतनी पडती हैं। उदाहरण के लिए प्रत्येक भाषा मे कुछ शब्द तो ऐसे होते है जिनके प्रयोग के सबध म ऐसा कुछ बहुत निश्चित नही होता कि उनका प्रयोग किन शब्दो के साथ करें तथा किनके साथ न करें। दूसरी ओर कुछ शब्दो के सबध म एस नियम होते हैं। उदाहरण के लिए 'भोजन' और 'खाना हिंदी म सभी पर्याय हैं, किंतु जहाँ तक क्रिया शब्द का प्रश्न है 'भोजन क साथ 'करना का प्रयोग होता है (मैंने भोजन किया) तो 'खाना के साथ 'खाना का (मैंने खाना खाया)। यदि कोई व्यक्ति मैंने 'भोजन खाया तथा मैंने खाना किया प्रयोग करे तो प्रयोग की दृष्टि स अशुद्ध होगा। दो भाषाओ मे भी इस प्रकार के अतर मिलते है। अंग्रेजी म रेडियो के साथ प्ले (खेलना) चलता है किंतु हिन्दी म रेडियो क साथ खेलना' का प्रयोग नही होता, 'बजाना का होता है। इसी प्रकार पर्यायो म अतर वचन और लिंग का ध्यान आदि भी शब्द-प्रयोग की दृष्टि से विवेच्य विषय हैं।

समाजशब्दविज्ञान

समाज के परिप्रेक्ष्य मे या समाज की जानकारी के लिए शब्दो का अध्ययन समाजशब्दविज्ञान का विषय है।

2
शब्द

व्युत्पत्ति

'शब्द' का मूल अर्थ है 'ध्वनि'। इसकी व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में पर्याप्त मत-भेद हैं। 'शप्' 'शब्द्', आदि एक से अधिक धातुओं से इसका सम्बन्ध जोड़ा जाता है। अधिक प्रचलित मत यह है कि शब्द का सम्बन्ध 'शब्द' धातु से है (शब्द + घञ्), जिसका अर्थ है 'शब्द करना', 'ध्वनि करना' या 'बोलना' आदि। या कुछ लोग 'शब्द' को 'शब्द' से बनी नामधातु भी मानते हैं। अंग्रेजी शब्द word (डच woord, जर्मन wort, गोथिक waurd, आइसलैंडिक orth, लैटिन verbum) का सम्बन्ध भी 'बोलना' या 'ध्वनि करना' से है। अरबी 'लफ्ज' भी मूलतः 'मुँह से फेंका हुआ' या 'ध्वनि किया हुआ' या 'बोला हुआ' है। इस प्रकार 'शब्द' के विभिन्न भाषाओं में प्राप्त पर्याय भी मूलतः एक-दूसरे से बहुत दूर नहीं हैं।

परिभाषा

संसार की सभी भाषाओं को दृष्टि में रखते हुए शब्द की सभी दृष्टियों से पूर्ण परिभाषा देना प्रायः असम्भव-सा है। इस विषय पर विचार करते हुए येस्पर्सन, वान्द्रिये, डैनियल जोन्स तथा उल्डल आदि अनेक विद्वानों ने इस असम्भवता को स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है। इस असम्भवता के बावजूद शब्द की अनेकानेक परिभाषाएँ दी गई हैं। पतंजलि कहते हैं 'श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्य प्रयोगेणाभिज्वलित आकाशदेशः शब्दः'। अर्थात् शब्द, कान से प्राप्य, बुद्धि में ग्राह्य, प्रयोग से प्रस्फुरित होने वाली आकाशव्यापी ध्वनि है। पतंजलि ने विस्तार में भी 'शब्द' पर विचार किया है जिसके निष्कर्षस्वरूप कहा जा सकता है उनकी दृष्टि में उच्चरित, श्रव्य, बुद्धिग्राह्य और अर्थबोधक ये चार विशेषण शब्द की विशिष्टता की ओर संकेत करते हैं। दूसरे शब्दों में शब्द वह है जो उच्चरित, श्रव्य, बुद्धिग्राह्य और अर्थबोधक हो। पतंजलि एक स्थान पर कहते हैं—'प्रतीतपदार्थको लोके ध्वनिः शब्दः'। अर्थात वह ध्वनि जिससे व्यवहार या लोक में पद के अर्थ की प्रतीति हो, शब्द है। 'शृंगारप्रकाश' में आता है, 'येनोच्चारितेन अर्थः प्रतीयते स शब्दः'। अर्थात् जिसके बोलने से अर्थ की प्रतीति हो, वह (ध्वनि) शब्द है।

पश्चिम[1] में भी इस दृष्टि से काफी प्रयास हुए हैं। पामर शब्द को ऐसी लघुतम भाषिक इकाई मानते हैं जो एक पूर्ण उच्चार के रूप में काम कर सके। उल्मैन इसे भाषा की लघुतम महत्त्वपूर्ण इकाई कहते हैं। एनटिवसल शब्द को विचार और अर्थ की स्वतन्त्र इकाई मानने के पक्ष में हैं। मेये इसे अर्थ और ध्वनि समूह का ऐसा योग मानते हैं जिसका व्याकरणिक प्रयोग हो सके। ब्लूमफील्ड इसे भाषा का लघुतम मुक्त रूप कहते हैं। रावर्टसन और कसिडी शब्द को वाक्य में लघुतम स्वतन्त्र इकाई मानते हैं। स्वीट इसे लघुतम आर्थिक इकाई कहते हैं। अनेक अन्य विद्वानों ने भी ऐसी ही या इससे मिलती जुलती बातें कही हैं।

अब तक हम लोग 'शब्द' के विषय में विभिन्न भारतीय तथा अभारतीय विद्वानों की परिभाषाओं से परिचित होते रहे, अच्छा हो कि पहले शब्द की भाषा में स्थिति देखें फिर शब्द की विशेषताओं पर विचार करें और तब उन विशेषताओं के आधार पर शब्द को परिभाषित करें।

वस्तुतः भाषा दो के योग से बनी होती है। एक तो होते हैं शब्द, और दूसरे होते हैं व्याकरण के वे नियम जिनके आधार पर इन शब्दों की सहायता से भाषा का भवन खड़ा होता है। किसी भाषा में प्रयुक्त इन शब्दों के समूह को 'शब्दसमूह' कहा जाता है तथा इन नियमों के समूह को 'व्याकरण'। यह ध्यान देने की बात है कि व्याकरण के नियम सीमित होते हैं तथा उनमें सामान्यतः जल्दी कोई परिवर्तन नहीं होता। इसके विपरीत भाषाओं के शब्दों की संख्या में आवश्यकतानुसार हमेशा वृद्धि होती रहती है तथा शब्दसमूह बहुत जल्दी जल्दी परिवर्तित होता रहता है। हम विभिन्न स्रोतों से शब्द ग्रहण करते रहते हैं। उदा-

1 Palmer—The smallest speech unit capable of functioning as a complete utterance

Ulman—The smallest significant unit of language

Entwistle—A word is an autonomous unit of thought and sense It 'results from the association of a given meaning with a given grammatical employment or is a complex of sounds which in itself possesses a meaning fixed and accepted by convention or is 'the smallest thought unit vocally expressible'

Maillet—A word is the result of the association of a given meaning with a given combination of sounds, capable of a given grammatical use

Robertson तथा Cassidy—The smallest independent unit within the sentence

Sweet—An ultimate sense unit

हरण के लिए हिंदी की ही बात ले तो 1900 से अब तक हमारे व्याकरणिक नियमों में कोई बहुत परिवर्तन नहीं हुआ है किंतु हमारे शब्दसमूह में बहुत परिवर्तन हुआ है, और होता जा रहा है। एक ओर तो अरबी फारसी अंग्रेजी संस्कृत तथा अपनी बोलियों से शब्द लेकर हमने उसमें अभूतपूर्व वृद्धि की है तो दूसरी ओर नई संकल्पनाओं के लिए नए शब्दों का निर्माण करके हमने उसे बढ़ाया है। इस तरह शब्दसमूह भाषा का नित विवर्द्धमान अंग है तो व्याकरण के नियम प्रायः अविवर्द्धमान।

शब्द की प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं

(क) भाषा में वाक्य होते हैं और वाक्य शब्दों से बनते हैं, इस तरह शब्द भाषा की एक इकाई है।

(ख) प्रत्येक 'शब्द' का कोई न कोई अर्थ होता है।

(ग) भाषा के वाक्य उपवाक्य पदबंध पद, शब्द आदि इकाइयों में 'शब्द' लघुतम होता है।

(घ) 'शब्द' भाषा की स्वतंत्र इकाई होता है। उपसर्ग या प्रत्यय की तरह उसके लिए किसी के साथ जुड़कर आना आवश्यक नहीं।

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर शब्द की परिभाषा कुछ इस प्रकार दी जा सकती है—

भाषा की सार्थक, लघुतम और स्वतंत्र इकाई को 'शब्द' कहते हैं।

इस परिभाषा में निम्नांकित बातें ध्यान देने की हैं—

(क) शब्दों का अर्थ होता है अतः वे सार्थक होते हैं। यदि गहराई में देखें तो यह सार्थकता भी मूलतः दो प्रकार की होती है विचारपरक और प्रकार्य-परक (फंक्शनल)। विचारपरक सार्थकता वहाँ होती है, जहाँ शब्द का कोई स्पष्ट अर्थ होता है। उदाहरण के लिए 'मोहन घर जा रहा है' में 'जा' की सार्थकता विचारपरक है। उससे राम के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने का विचार व्यक्त किया गया है। इसके विपरीत 'मोहन से यह बात कही जा सकती है' वाक्य में 'जा' की स्थिति वह नहीं है। 'जा' यहाँ सार्थक तो है किंतु उसकी सार्थकता विचारपरक नहीं है, क्योंकि यहाँ जाने का भाव या विचार नहीं है। वस्तुतः यह 'जा' कर्मवाच्य का द्योतक है इस प्रकार यह प्रकार्यपरक है। ऐसे ही "मैं' वहाँ जाता हूँ' का 'जा' विचारपरक है तो 'मुझसे बोला नहीं जाता' में 'जा' प्रकार्यपरक नहीं है। यह 'जा' भाववाच्य का प्रकार्य (फंक्शन) कर रहा है।

(ख) ऊपर शब्द के सार्थक होने की बात कही गई है, किंतु सार्थक तो वाक्य, उपवाक्य, पदबंध तथा पद भी होते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि जब ये सभी सार्थक होते हैं तो शब्द को अन्यों से कैसे अलगाएँ। इसके लिए हमें कहना पड़ता है कि शब्द लघुतम होते हैं। अर्थात वाक्य, उपवाक्य पदबंध पद तथा शब्द में सबसे छोटे शब्द ही होते हैं। उदाहरण के लिए 'मोहन के भाई का मित्र मिला था' वाक्य में 'भाई' एक शब्द है। इस शब्द से बड़ा 'भाई का' पद या रूप

है। ऐसे ही यह पूरा वाक्य या 'मोहन के भाई का मित्र' पदबंध भी इस भाई शब्द से बड़े हैं। इस तरह शब्द सबसे छोटा होता है।

(ग) तो हमने देखा कि 'शब्द', 'लघुतम सार्थक इकाई' होता है, किंतु गहराई से देखें तो 'उपसर्ग' और 'प्रत्यय' भी भाषा की इकाई हैं, ये छोटे भी होते हैं तथा सार्थक भी। अब प्रश्न यह उठता है कि 'शब्द' को इन दोनों से कैसे अलग करें। वस्तुतः 'शब्द' को इन दोनों से अलग मानने का आधार प्रयोग है। उपसर्ग सर्वदा ही किसी शब्द के पहले जुड़कर प्रयुक्त होता है, स्वतंत्र रूप से नहीं। जैसे 'लापता' में 'ला' या 'अलौकिक' में 'अ' तथा 'बेजान' में 'बे'। ऐसे ही प्रत्यय सर्वदा ही किसी शब्द के अंत में जुड़कर आता है। उदाहरणार्थ 'सुन्दरता' में 'ता' या 'बड़ाई' में 'आई' या 'दयालु' में 'आलु' आदि। किंतु शब्द के लिए इस प्रकार जुड़कर आना अनिवार्य नहीं है। ऊपर के उदाहरणों में ही देखें तो 'पता', 'लौकिक', 'जान', 'सुन्दर', 'बड़ा' या 'दया' स्वतंत्र भी आ सकते हैं। इस तरह *शब्द स्वतंत्र' होते हैं किंतु उपसर्ग तथा प्रत्यय परतंत्र।*

इस प्रसंग में इतना और जोड़ देना उपयुक्त होगा कि शब्द मूलतः स्वतंत्र या मुक्त होते हैं, और उनका प्रयोग प्रायः अलग-अलग ही होता है, किंतु किसी अपेक्षाकृत बड़े शब्द की रचना के लिए शब्द, किसी अन्य शब्द के आदि ('डाकघर' में 'डाक') मध्य ('समाजभाषाविज्ञान' में 'भाषा') तथा अंत ('राजनीति' में 'नीति') में भी आ सकते हैं। कहना न होगा कि इस प्रकार किसी बड़े शब्द का अंग बनने से मूल 'शब्द' की मुक्तता या स्वतंत्रता में कोई अंतर नहीं पड़ता।

शब्द बनाम पद या रूप

सामान्यतः 'शब्द' तथा पद/रूप को एक ही माना जाता है। यदि किसी से पूछा जाए कि 'मैंने उसे पीटा' वाक्य में कितने शब्द हैं और वे कौन कौन से हैं, तो उत्तर मिलेगा, इसमें तीन शब्द हैं 'मैंने', 'उसे' तथा 'पीटा'। किंतु, वास्तविकता यह नहीं है। इसमें तीन शब्द हैं 'मैं', 'वह' तथा 'पीट'। 'मैंने', 'उसे' तथा 'पीटा' शब्द न होकर पद या रूप हैं। 'शब्द' तथा रूप/पद में अंतर है। शब्द का केवल अर्थ होता है। उसमें केवल अर्थतत्त्व होता है। इसके विपरीत पद में अर्थतत्त्व तो होता ही है इसके अतिरिक्त उसमें सम्बन्धतत्त्व भी होता है जिसके कारण वह वाक्य के अन्य पदों के साथ अपना सम्बन्ध स्पष्ट कर सकता है। ऊपर के उदाहरण में मैंने पद में मैं शब्द है तो ने सम्बन्धतत्त्व है। दोनों मिलकर 'मैंने' कर्ताकारक का रूप बना है। इस तरह शब्द से वाक्य नहीं बनते पद से वाक्य बनते हैं। उदाहरण के लिए 'राम रावण बाण मार' वाक्य नहीं है क्योंकि ये चारों शब्द हैं। यदि इनमें संबंधतत्त्व जोड़ें तो ये शब्द पद बन जाएँगे और तब यह एक ठीक वाक्य बन जाएगा राम+ने रावण+को बाण+से मार+आ=राम ने रावण को बाण से मारा। 'ने' जोड़ने से 'राम ने' कर्त्ता कारक का

रूप बन गया है। ऐसे ही 'रावण को' कर्म कारक तथा 'बाण से' सबध कारक के रूप है। इस तरह कारकीय रूप तथा क्रिया रूप पद या रूप होते है। शब्द मे ने, को आदि कारकचिह्न या धातु मे विभिन्न प्रकार के प्रत्यय जोडकर रूप की रचना की जाती है। इसीलिए ऊपर 'पद' को शब्द से बडी इकाई कहा गया है। कुछ शब्दो और पदो को देखने से 'पद' के शब्द से बडे होने का अनुमान लग जाएगा भाई—भाई ने, बहन—बहन को, लाठी—लाठी से, घर—घर मे, देख—देखा, खा—खाओ। या अपवादत कभी कभी ऐसे पद भी मिलते हैं जो शब्द जसे ही होते है। उदाहरण के लिए 'भाई' शब्द है किंतु 'भाई आएगा' मे 'भाई' पद या रूप है, कर्त्ता कारक का रूप। या 'जा' धातु शब्द है, किंतु 'तू जा' वाक्य मे 'जा' धातु न होकर आज्ञा का रूप है। ऐसे स्थानो पर शून्य सबधतत्व की कल्पना की गई है। अर्थात भाई (शब्द)+शून्य सबधतत्व=भाई (पद) या जा+शून्य=जा (आज्ञा का रूप)। इस तरह 'शब्द' मे सामान्यत माने जाने वाले शब्द भी आते है तथा धातुएँ भी, तथा शब्द' और 'पद' या 'रूप' एक नही होते। दोनो मे स्पष्ट अतर होता है।

3
शब्दो का वर्गीकरण

कुछ प्राचीन-अर्वाचीन प्रयास

शब्दो का वर्गीकरण शब्दो के अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण अग है। विश्व की अनेक भाषाओ म अनेक दृष्टियो से शब्दो का वर्गीकरण किया गया है। भारत वर्ष मे प्राचीनतम वैज्ञानिक वर्गीकरण यास्क मुनि का माना जाता है (यद्यपि इसके पूर्व भी शुभ-अशुभ साधु-असाधु रूप मे शब्द वर्गीकरण किया जाता था) जो उनके निरुक्त मे मिलता है। यास्क (8वी सदी ई० पू०) के अनुसार शब्द चार प्रकार के होते हैं—चत्वारि पदजातानि नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च (1 1) अर्थात नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात। स्पष्ट ही यह वर्गीकरण व्याकरणिक या वाक्य म प्रयोग पर आधारित है। आज तक जितने भी शब्द वर्गीकरण किये गये है, उनम इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है तथा कुछ दृष्टियो से यह सर्वाधिक वैज्ञानिक भी है। वाजसनेयी प्रातिशाख्य म भी शब्द चार प्रकार के माने गये है—तिङ् कृत तद्धित समास। कुछ अन्य प्रातिशाख्यो मे भी इस प्रकार के सकेत मिलते है। पाणिनि (5वी सदी ई० पू०) के अनुसार शब्दो के दो ही प्रमुख वर्ग है—सुबन्त और तिङन्त। यास्क का आख्यात क्रिया शब्दो के लिए आया है, जिसे पाणिनि तिङन्त' कहते है। यास्क के शेष तीन अर्थात नाम, उपसर्ग निपात् पाणिनि के सुबन्त के अन्तर्गत आ जाते है। यो प्रयोगत केवल नाम' ही सुबन्त है। इस प्रकार अव्यय का भी पाणिनि सुबन्त के अन्तर्गत (अष्टाध्यायी 2 4 82) रखते है यद्यपि यह बहुत ठीक नही हैं। सस्कृत प्रयोगो को देखते हुए शब्द के सुबन्त, तिङन्त, अव्यय ये तीन भेद मानना कदाचित अधिक समीचीन हो सकता है। महाभाष्यकार ने शब्दो के लौकिक और वदिक दो भेद माने है। कुछ सस्कृत वैयाकरणो (भोज शृगार प्रकाश) न शब्दो के प्रकृति प्रत्यय, उपस्कार, उपपद, प्रातिपदिक, विभक्ति उपसर्जन, समास, पद वाक्य और प्रबन्ध—ये 12 भेद माने है। अर्थ के आधार पर अपने यहाँ वाचक, लक्षक और व्यजक तीन प्रकार के शब्द माने गये हैं। इसी प्रकार इतिहास के आधार पर तत्सम आदि भेद भी किए गए हैं।

पश्चिम मे व्याकरणिक दृष्टि से शब्द आठ वर्गो (eight parts of speech) मे विभाजित किए गए हैं—सज्ञा (noun), सर्वनाम (pronoun), विशेषण

(adjective), क्रिया (verb), क्रियाविशेषण (adverb), समुच्चयबोधक (conjunction), संबंधसूचक (preposition), तथा विस्मयादिबोधक (interjection)। यह वर्गीकरण अंग्रेजी का है। अन्य योरोपीय भाषाओं में भी प्राय इन्हीं का स्वीकार किया गया है। जैसा कि यस्पर्सन ने कहा है, यह वर्गीकरण व्यावहारिक तो है किंतु तात्त्विक या वैज्ञानिक नहीं है। इसी कारण इस पर विचार करते हुए विद्वानों ने आठ के स्थान पर दो, चार तथा नौ आदि वर्ग मानने के सुझाव दिये हैं। इन आठ वर्गों का विकास मूलत प्लेटो के वर्गीकरण के आधार पर हुआ था। अरस्तू ने भी कई रूपों में शब्दों का वर्गीकरण किया था जैसे रचना के आधार पर मरल (इसी को हिन्दी मे रूढ या रूढि कहते हैं) तथा यौगिक (यह संस्कृत या हिन्दी के यौगिक के समान है)। इसी प्रकार प्रचलन, व्यंजना तथा अर्थ आदि के आधार पर भी अरस्तू ने प्रचलित-अप्रचलित लाक्षणिक, आलंकारिक, नव निर्मित, व्याकुंचित, संकुचित या परिवर्तित आदि भेद किये हैं। यस्पर्सन ने इस पर विचार करते हुए शब्द को प्रायोगिक या व्याकरणिक दृष्टि से, (1) नाम या संज्ञा (substantatives), (2) विशेषण, (3) सर्वनाम, (4) क्रिया, तथा (5) अव्यय (जिसमें के प्रथम चार को छोड़कर भाषा के शेष सभी शब्दों को रखने के पक्ष में हैं)—इन पाँच वर्गों में रखने का विचार प्रकट किया है। रचना की दृष्टि से वे शब्दों को प्राइमरीज (primaries), ऐड्जंक्ट्स (adjuncts) तथा सबजंक्ट्स (subjuncts)—इन तीन वर्गों में रखने के पक्ष में हैं।

कुछ और भी, इसी प्रकार के वर्गीकरण किये गये हैं।

वर्गीकरण का आधार

वर्गीकरण के पूर्व यह विचारणीय है कि किसी भाषा के शब्दों को वर्गीकृत करने के कितने आधार हो सकते हैं। वस्तुत यदि गहराई और विस्तार से देखें तो इसके बहुत अधिक आधार हो सकते हैं जिनमें से कुछ प्रमुख आधार तथा उनके आधार पर किए जानेवाले शब्द वर्गीकरण निम्नांकित हैं।

(क) स्रोत या इतिहास

किसी भाषा मे शब्द किस स्रोत से आया है, या उसका इतिहास क्या है, इस आधार पर भारतीय परंपरा के शब्दों का वर्गीकरण काफी पहले से किया जाता रहा है। दूसरी सदी ई० पू० मे भरत मुनि ने इस दिशा में प्रथम वैज्ञानिक प्रयास अपने नाट्यशास्त्र में किया —

> त्रिविध तच्च विज्ञेय नाटययोग ससम्मतम।
> समानशब्दैर्विभ्रष्टदशीमतमथापि वा ॥

अर्थात् शब्द समान, विभ्रष्ट तथा देशीमत, ये तीन प्रकार के हैं। इन्हीं को आगे चलकर तत्सम, तद्भव तथा देशी या देशज कहा गया। बाद में इनमें ५

'विदेशी' वग जोडकर इतिहास के आधार पर शब्द चार प्रकार के मान गय। भारत के बाहर इस प्रकार के किसी निश्चित वर्गीकरण की परपरा कदाचित् नही मिलती।

आग इन चारा तथा इनसे सबद्ध उपवर्गों पर कुछ विस्तार से—विशेषत हिन्दी के प्रसग मे—विचार किया जा रहा है।

तत्सम

इसका शाब्दिक अथ है 'उसके (तत्) समान (सम)' अर्थात 'सस्कृत क समान'। भरत ने अपने नाटयशास्त्र म 'तत्सम' को 'समान' तथा कुछ अय लागा ने इसे 'तद्रूप' कहा है। इस तरह 'तत्सम' व शब्द हैं जो सस्कृत क समान हैं, अर्थात जिनम परिवतन नही हुए हैं। जैसे कृष्ण, दधि, आभीर, वधू, धाटक, सपत्नी, कम आदि। इस प्रसग म यह बात भी उल्लेख्य है कि 'तत्सम' कह जाने वाले सभी शब्द मूलत सस्कृत के ही नही हैं। हुआ यह कि अय भाषाआ स भी आकर अनेक शब्द सस्कृत म ज्यो के त्यो या परिवर्तित रूप मे गहीत हुए और उनका प्रयोग होने लगा, फिर वे सस्कृत के मान लिय गये और आज व भी तत्सम ही माने जाते हैं। जसे 'गो' 'लोह' सुमेरी हैं, 'परशु' अक्कादी है, 'असुर' असीरियन है कूप, शलाका' फिनो-उग्रिक हैं, 'कदली', 'बाण', 'ताबूल', 'पिनाक', 'गगा', 'लिग' आस्ट्रिक है, 'कला', 'गण', 'नाना', पुष्प, 'रात्रि मकट', शव' द्रविड हैं, यवन, 'होडा' 'द्रम्म', 'क्रमल' यूनानी हैं, 'रोमक', 'दीनार' लातीनी हैं, रमल', सहम' अरबी हैं, बालिश', नि शाण ईरानी है, 'तुरुष्क', खच्चर तुर्की हैं एव 'मसार' तथा 'चीन' (चीनचानक, चीनाशुक) चीनी हैं।

हिन्दी मे स्रोत की दष्टि स 'तत्सम' शब्द चार प्रकार के है

(क) प्राकृतो (पालि, प्राकृत, अपभ्र श) से होते आने वाले शब्द जैसे अचल, अध अबला, काल, कुसुम, जतु दण्ड, दम आदि। इस वग के शब्दा की सख्या काफी बडी है। इनम कुछ शब्द ता ऐसे है जो सस्कृत से परम्परागत रूप म प्राकृता को मिले और जो विशिष्ट कारणा से अपने स्वरूप को अक्षुण्ण रख सक। दूसरे वे हैं जो सस्कृत के प्राकृता पर प्रभावस्वरूप, प्राकृतो म प्रयुक्त हुए। अर्थात आगत शब्द (loan word) रूप मे सस्कृत स प्राकृता म आय। ऐसे शब्दा के तद्भव रूप भी प्राकृतो मे मिलत हैं।

(ख) सस्कृत से सीधे हिन्दी मे भक्ति आधुनिक आदि विभिन्न काला म लिये गये शब्द जसे कम, विद्या, ज्ञान क्षेत्र, कृष्ण पुस्तक माग, मत्स्य, मद्य, मेघ पुष्प, मग मधुर, कुशल आदि। ऐसे शब्दा की सख्या प्रथम वग से भी कम है। *सर्वाधिक तत्सम शब्द सभी आधुनिक आय भाषाआ मे इसी रूप मे आये हैं।*

(ग) सस्कृत के व्याकरणिक नियमा के आधार पर हिन्दीकाल म निर्मित तत्सम शब्द। इस प्रकार के अधिकाश शब्द आधुनिक काल म शब्दो की कमी

की पूर्ति के लिए बनाये गये हैं, और बनाये जा रहे हैं। जैसे जलवायु (आबहवा), वायुयान (हवाई जहाज या एरोप्लेन), सम्पादकीय (editorial), प्राध्यापक (lecturer), रेखाचित्र (sketch), प्रभाग (section), वाक्यविश्लेषण (sentence analysis), निदेशक (director), नगरपालिका (municipality), समाचारपत्र पत्राचार (correspondence), कटिबद्ध (फा० कमरबस्ता) आदि। ऐसे शब्द इधर पारिभाषिक शब्दों के रूप में लाखों की संख्या में बन हैं।

(घ) अन्य भाषाओं से आये तत्सम शब्द। इस वर्ग के शब्दों की संख्या अत्यल्प है। कुछ थोड़े शब्द बंगाली तथा मराठी के माध्यम से आये हैं। इनमें कुछ शब्द तो ऐसे हैं जो संस्कृत में भी प्रयुक्त होते थे, और कुछ ऐसे हैं जो इन भाषाओं में संस्कृत के आधार पर बने। कुछ उदाहरण हैं बंगाली वक्तता, उपन्यास, गल्प, कविराज, संदेश, अभिभावक, निर्भर तत्त्वावधान, अभ्यर्थना, आपत्ति, सम्भ्रान्त, स्वप्निल, उर्मिल, धन्यवाद, तथा मराठी वाङ्मय प्रगति आदि।

हिन्दी में प्रयुक्त होने वाले तत्सम शब्द संज्ञा सर्वनाम, विशेषण, क्रिया तथा अव्यय हैं। संज्ञा शब्द प्रायः दो प्रकार के हैं

(क) संस्कृत के प्रातिपदिक—जैसे राम, कृष्ण, फल मित्र, कुसुम पुस्तक, पत्र, पुष्प, देव, बालक, वृक्ष, मनुष्य आदि अकारान्त, कवि, हरि, मुनि, ऋषि, कपि, यति, विधि, रवि, अग्नि, पति रुचि, मति आदि इकारान्त, सुधी, लक्ष्मी आदि ईकारान्त भानु, शत्रु विष्णु गुरु, धेनु जन्तु प्रभु, शिशु पशु, साधु आदि उकारान्त, तथा वधू, चमू, भू स्वयंभू आदि ऊकारान्त आदि।

(ख) संस्कृत के प्रथमा एकवचन—जैसे सखा, पिता, भ्राता, जामाता दाता, नेता, कर्त्ता, माता, दुहिता, वणिक, सम्राट्, आत्मा, ब्रह्मा, राजा, महिमा युवा, हस्ती, करी, पक्षी, स्वामी, तपस्वी सीमा नाम चर्म, विद्वान भगवान धनवान् आदि।

कुछ शब्द ऐसे भी हैं, जिनका प्रातिपदिक रूप एवं प्रथमा बहुवचन रूप एक ही होता है, अतः इन्हें उपर्युक्त दो में किसी में भी रखा जा सकता है। जैसे वारि दधि, अस्थि वस्तु, मधु, विद्या, रमा, बाला, निशा, छाया, भाया, नदी, स्त्री जगत सुहृद् आदि।

सर्वनाम केवल दो ही बहुप्रयुक्त हैं जो षष्ठी एकवचन के रूप हैं मम, तव।

विशेषण प्रायः केवल प्रातिपदिक रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। जैसे तीव्र, नूतन, नव, नवीन पुरातन चिरन्तन, सुन्दर, श्वेत आदि।

तत्सम शब्दों के आधार पर कुछ क्रियाएँ भी बनी हैं जैसे स्वीकारना।

हिन्दी में प्रयुक्त तत्सम अव्यय मुख्यतः तीन प्रकार के हैं

(क) संस्कृत के समान—जैसे पृथक्, सहसा, धिक आदि। ये इसी प्रकार संस्कृत में भी आते हैं तथा हिन्दी में भी।

(ख) संस्कृत के कई रूपों में एक—कुछ अव्यय ऐसे हैं, जो सन्धि के नियमों

आदि के कारण संस्कृत में तो कई रूपों में आते हैं, किन्तु हिन्दी में प्राय उनमें एक रूप ही प्रयुक्त होता है। जैसे 'शनैः शनैर् शनैस्'। संस्कृत में ये तीनों मिलेंगे किन्तु हिन्दी में केवल 'शनैः' प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार 'प्रातर्-प्रातस् प्रातः' में हिन्दी में 'प्रातः' ही आता है। साय-सायम्' में भी प्राय 'साय' हिन्दी में गृहीत है।

(ग) संस्कृत का मूल रूप—कुछ अव्यय ऐसे भी हैं जो संस्कृत में तो दूसरे रूप में आते हैं किन्तु हिन्दी में उनके रूप को न लेकर मूल को स्वीकार किया गया है। उदाहरणार्थ संस्कृत में अव्यय रूप में 'नित्यम्' ही आयेगा, 'नित्य' नहीं, किन्तु हिन्दी में 'नित्य' ही आयेगा 'नित्यम्' नहीं।

हिन्दी में कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो वस्तुतः तत्सम नहीं हैं, किन्तु जिन्हें प्रायः तत्सम समझा जाता है। ऐसे शब्दों के दो वर्ग बनाए जा सकते हैं। प्रथम वर्ग ऐसे शब्दों का है जो संस्कृत प्रथमा एकवचन के रूप में से विसर्ग हटाकर हिन्दी में लिए गए हैं। जैसे 'अप्सरा'। संस्कृत में 'अप्सरा' कोई शब्द नहीं है। संस्कृत में इसका प्रातिपदिक है 'अप्सरस्' तथा प्रथमा एक० रूप है 'अप्सराः'। 'अप्सराः' का विसर्ग हटने से ही हिन्दी 'अप्सरा' बन गया है। चन्द्रमा, पय, नभ, उर, मन, वय, रज, वक्ष, तम, यश, सर, शिर आदि भी ऐसे ही हैं। इन सभी का प्रातिपदिक है—स-युक्त तथा प्रथमा एकवचन विसर्ग-युक्त। आयु, वपु का प्रातिपदिक है—ष-युक्त तथा प्रथमा एक० रूप विसर्ग-युक्त। इस प्रकार ये तथा इस तरह के अन्य शब्द वस्तुतः तत्सम नहीं हैं। दूसरी श्रेणी के शब्द ऐसे हैं जो कुछ अन्य प्रकार के परिवर्तनों के कारण तत्सम नहीं रह गये हैं (तत्सम रूप कोष्ठक के भीतर है) अन्तर्राष्ट्रीय (अन्तरराष्ट्रिय, कुछ विद्वानों का इस संबंध में मतभेद भी है) राष्ट्रीय (राष्ट्रिय) उपरोक्त (उपर्युक्त) प्रण (पण), संग्रहीत (संगृहीत), अनुग्रहीत (अनुगृहीत), क्षत्राणी (क्षत्रियाणी क्षत्रिया), आधीन (अधीन), दृढ़ (दृढ) प्रौढ़ (प्रौढ), होडा (हाडा), औषधि (ओषधि, ओषध) मनोकामना (मनःकामना) आदि। ऐसे सभी शब्दों को तत्समाभास कहा जा सकता है, क्योंकि इनमें तत्सम का आभास होता है। यों वस्तुतः ये शब्द तद्भव या परवर्ती तद्भव (जिन्हें प्राय अर्ध-तत्सम कहा जाता है) हैं।

तत्सम शब्दों की तत्समता

संस्कृत, प्राकृत आदि के प्राचीन आचार्यों से लेकर आधुनिक भाषाशास्त्रियों तक, सभी ने तत्सम को 'संस्कृत के समान' के रूप में स्वीकार किया है, किन्तु मुझे लगता है कि यह नामकरण बहुत मात्र अनुमान पर कर लिया गया है। जिन शब्दों को तत्सम कहा जाता है उनमें, यदि ध्वन्यात्मक दृष्टि से देखा जाए तो तत्समता से अधिक 'असत्समता' है। दूसरे शब्दों में वे प्राय कम बातों में संस्कृत के समान हैं और अधिक बातों में संस्कृत के असमान हैं। अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए मैं इस समस्या को कुछ विस्तार से ले रहा

हू। शब्द' में दो पक्ष होते हैं। एक तो आभ्यन्तर पक्ष, जिसे उसका 'अर्थ' कहते हैं, और जो शब्द की 'आत्मा' कहलाने का अधिकारी है, तथा दूसरा बाह्य पक्ष, जिसमें उसका बाह्य रूप या उसमें प्रयुक्त ध्वनियाँ आती हैं, और जिसे शब्द का 'शरीर' कह सकते हैं। शब्द के इन दोनों पक्षों—आत्मा और शरीर—को दृष्टि में रखकर हम कह सकते हैं कि सच्चे अर्थों में कोई शब्द 'तत्सम' कहलाने का अधिकारी तभी है, जब वह आत्मा एवं शरीर दोनों ही दृष्टियों से संस्कृत के समान हो। किन्तु तथ्य यह है कि इस रूप में बहुत ही कम शब्द समान मिलेंगे। पहले अर्थ या शब्द की आत्मा की बात ली जाय। हिन्दी में अनेक तत्सम कहलाने वाले शब्द ऐसे हैं जिनका अर्थ संस्कृत के समान नहीं है। उदाहरण के लिए हिन्दी में दो शब्द हैं 'जंघा' और 'जाँघ'। प्रचलित परिभाषा के अनुसार पहला तत्सम है और दूसरा तद्भव है। 'जंघा' शब्द वैदिक तथा लौकिक संस्कृत, दोनों में मिलता है, किन्तु उसका अर्थ 'जाँघ' न होकर 'घुटने और टखने के बीच का भाग' होता है। इस तरह संस्कृत एवं हिन्दी 'जंघा' में अर्थ की असमानता है। अर्थात् अर्थ की दृष्टि से हिन्दी में 'जंघा' तत्सम नहीं है, यद्यपि माना जाता है। शीर्षक (सं० अर्थ 'सिर', हि० अर्थ heading), पतंग (सं० अर्थ सूर्य, पक्षी, शलभ, हि० अर्थ 'गुड्डी' भी), पदवी (सं० अर्थ रास्ता पथ, हिन्दी अर्थ उपाधि आदि), प्रणाली (सं० अर्थ नाली, हिन्दी अर्थ ढंग, पद्धति) कटि (सं० अर्थ कूल्हा, नितम्ब, हिन्दी अर्थ कमर), निर्भर (सं० अर्थ बहुत अधिक, पूर्ण, भरा, हिन्दी आश्रित, अवलम्बित, मुनहसर भी), प्रान्त (सं० अर्थ सीमा, अन्त, किनारा, कोना हिन्दी अर्थ सूबा भी), परिवार (संस्कृत अर्थ घेरने वाला, नौकर चाकर समूह अनुयायी, म्यान, हि० अर्थ कुटुम्ब), सूची (सं० अर्थ सूई, हि० अर्थ तालिका भी), तथा त्रुटि (सं० अर्थ टूट, टूटना, हि० अर्थ भूल, दोष) आदि शब्द भी इसी प्रकार के हैं।

जहाँ तक शब्दों के शरीर या उनमें प्रयुक्त ध्वनियों में तत्समता का संबंध है, यह एक मोटी बात ध्यान में रखने की है कि विश्व में कोई भी दो भाषाएँ या बोलियाँ ऐसी न होंगी जिनकी ध्वनियाँ एक-दूसरे के पूर्णतः समान हों। संस्कृत हिन्दी भी इस सामान्य नियम का अपवाद नहीं मानी जा सकती। यदि इस समस्या को बहुत गहराई से न भी लें तो भी कुछ अन्तर तो बहुत ही स्पष्ट है, जैसे 'ऋ' ध्वनि पहले स्वर थी, अब वह 'रि' है, 'ष' पहले 'मूर्द्धन्य ध्वनि थी, अब वह तालव्य 'श' में प्रायः समाहित हो गई है, अन्त्य 'अ' पहले उच्चरित था अब प्रायः नहीं है, 'ण' अब बहुत कुछ 'ड़ँ' हो गया है, 'ज' ध्वनि 'न' या 'यँ' सी हो गई है तथा 'ऐ', 'औ' वैदिक संस्कृत में 'आइ', 'आउ' थे, लौकिक संस्कृत में अइ अउ किन्तु अब ये अए, अओ या मूल स्वर हैं। ऐसे अन्तरों की सूची और भी बढ़ाई जा सकती है। निष्कर्षतः तत्सम कहलाने वाले शब्द ध्वनि की दृष्टि से भी तत्सम नहीं हैं। कृष्ण, राम, चंचल, शेष, ऋण, शाप जैसे शब्द आज के उच्चारण में क्रिश्ड़ँ, राम्, चन्चल, शेश, रिड़ँ, शाप् हैं। इस

प्रकार शब्द की आत्मा अर्थात् अर्थ एवं शरीर अर्थात् ध्वनि, दोनों ही दृष्टियों से तथाकथित तत्समों की तथाकथित तत्समता भाषाविज्ञान की दृष्टि से काफी विवाद्य है। मुझे तो पूरा विश्वास है कि तत्सम माने जाने वाले शब्दों में बहुत ही कम होंगे, जिन्हें तत्सम नाम का वास्तविक अधिकारी कहा जा सके।

अर्धतत्सम

तत्सम के प्रसंग में अर्धतत्सम भी विचारणीय है। इसका प्रयोग ग्रियर्सन, चटर्जी आदि आधुनिक काल के भाषा शास्त्रियों ने उन शब्दों के लिए किया है जो एक प्रकार से तत्सम एवं तद्भव के बीच में हैं। तद्भव वे हैं जो संस्कृत से पालि प्राकृत अपभ्रंश होते—परिवर्तित होते हिन्दी आदि आधुनिक भाषाओं में आये हैं। अर्धतत्सम वे हैं जो प्राकृत अपभ्रंश काल में या आधुनिक भाषा काल में सीधे संस्कृत से लिये गये हैं और जिनमें तद्भव जैसे परिवर्तन नहीं हुए हैं, अपितु कुछ अन्य प्रकार के थोड़े परिवर्तन हुए हैं। ये शब्द तद्भवों की तुलना में तत्सम से कुछ ही हटे हैं। उदाहरणार्थ 'कृष्ण' तत्सम शब्द है, तो 'कान्हा', 'कन्हैया' आदि तद्भव हैं, तथा 'किशुन' 'किसन' अर्धतत्सम हैं। मेरे विचार में इनका अर्धतत्सम नाम ठीक नहीं है। तद्भव का अर्थ है जो संस्कृत (तत्) से निकला हो और 'कान्हा' तथा 'किशुन' दोनों ही संस्कृत कृष्ण से निकले हैं अतः दोनों ही 'तद्भव' नाम के अधिकारी हैं। हाँ 'कान्हा' के तद्भवीकरण की प्रक्रिया बहुत पहले शुरू हो गई थी तथा 'किशुन' के तद्भवीकरण की बहुत बाद में शुरू हुई। ऐसी स्थिति में पहले को 'तद्भव' या 'पूर्ववर्ती तद्भव' तथा दूसरे को 'परवर्ती तद्भव' कहना मेरे विचार जैसे शब्द परवर्ती में अधिक समीचीन है। हिंदी में प्रयुक्त करम, चन्दर, धरम, अच्छर, कारज तद्भव ही हैं। पंजाबी में प्रमुखतः नामों में, ये परवर्ती तद्भव बहुत अधिक हैं। जैसे सुरिन्दर, राजिन्दर, भुपिन्दर, महिन्दर आदि।

तद्भव

वे शब्द जो 'तत्' अर्थात् संस्कृत से 'भव' अर्थात् उत्पन्न या विकसित हैं। जैसे काम (=कर्म) घाम (=धर्म) दूध (=दुग्ध) नाच (=नृत्य) तथा घोड़ा (=घोटक) आदि। 'तद्भव' को भरत ने 'विभ्रष्ट', वाग्भट ने 'तज्ज' तथा चंड और हेमचन्द्र ने 'संस्कृतयोनि' कहा है। संस्कृतभव, भ्रष्ट, अपभ्रष्ट, अपभ्रंश आदि नामों से भी ये पुकारे गए हैं। आगे इसके साध्यमान संस्कृतभव तथा सिद्धमान संस्कृतभव आदि भेद भी किए गए हैं। साध्यमान में संस्कृत क्रियारूपों से विकसित होनेवाले शब्द आते हैं तो सिद्धमान में कृदंत और तिङन्त से विकसित होनेवाले।

विदेशी/गृहीत/आगत

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, विदेशी शब्द का अर्थ है वे शब्द जो अन्य देशों की भाषाओं से आये हों। इन्हें 'म्लेच्छ' शब्द भी कहा गया है। प्राचीन भारतीय पण्डितों का विदेशी शब्दों का विशेष पता नहीं था। इसका प्रमुख कारण यह था उस समय तक भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन की परम्परा नहीं थी और विदेशी भाषाओं के बारे में भी हमारे प्राचीन पण्डितों की जानकारी प्रायः बहुत ही कम थी। यही कारण है कि अनेक विदेशी शब्दों को हमारे यहाँ तत्सम या देशज आदि मान लिया गया। उदाहरणार्थ, संस्कृत में 'सूर्य' अर्थ में 'मिहिर' मध्ययुगीन फारसी का शब्द है, किन्तु संस्कृत के पंडितों ने इसे संस्कृत धातु मिह (= छिड़कना आदि) से आया इर (किरच) प्रत्यय के योग से बना माना है। इसी प्रकार 'देशी नाममाला' में कई विदेशी शब्दों [जैसे 'दत्थरा' जो वस्तुतः फारसी 'दस्तार' (रूमाल आदि) के संस्कृत में प्रयुक्त रूप 'दस्तार' से विकसित है] को देशज मान लिया गया है। 'दीनार', द्रम्म आदि कुछ शब्दों के बारे में अवश्य कुछ प्राचीन पण्डितों को पता था कि ये विदेशी हैं, किन्तु इस प्रकार ज्ञात शब्दों की संख्या बड़ी नहीं है यद्यपि ऐसे शब्द हैं काफी।

भारतीय आर्यभाषा में विदेशी शब्दों के लिये जाने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। जैसा कि पुस्तक में अन्यत्र संकेत किया गया है, भारोपीय भाषा भाषियों ने बहुत पहले (भारत में आने के कई सौ वर्ष पूर्व) सुमेरी भाषा से ग्वाउ (सं० गौ, अं० काउ, फा० गाव आदि) संस्कृत परशु (अक्कदी में 'पिलक्कु' होता, सुमेरी बलग) तथा राध (सं० लोह रुधिर आदि) और एजिअन से अयेस (सं० अयस) लिये थे। इसी प्रकार भारत ईरानियों ने यूराली भाषा से उन शब्दों को लिया जो संस्कृत में शुक, मक्षिका छाग, कफ, कूप शलाका, तण, हिरण्य एवं वाराह रूप में मिलते हैं। भारत में आने पर भी समय-समय पर अनेक विदेशी शब्द संस्कृत में आते रहे। जैसे यूनानी से सं० द्रम्य, द्रम, द्रम्म (drakhme प्रा० दम्म, हि० दाम, दमड़ी), सं० समिता, समिदा (semidalis सं० में अर्थ 'मैदा' है, प्रा० सिमिदा, हि० सेवई, सेंविया), सं० सुरंग, सुरुंग (Syrinx हि० सुरंग) यवन (ion), होडा (ओरा), केन्द्र (केन्ट्रान), खलिन (खलिनॉस), क्रमल, क्रमलक (क्रमेलास) कस्तूरी (कस्तोरेइओउस, कस्तोर) कस्तीर (कस्सितराम हि० कासा) कंगु (केग्रव्रास हि० कँगनी)। लटिन से रोमक, रोमन् दीनार। ईरानी में क्षत्रप (खशत्र पावन), दीपि (दिपि), कुन्दुरु (कुन्दुर), लिपिस्त (=लिखित निपिश्त) मिहिर (प्राचीन फा० मिथ्र, मध्य फा० मिहिर तुलनीय सं० मित्र) मग, (मग, मगुस ब्राह्मणों की एक जाति), गज, गन्धर्व, तरम्बुज, तीर, तूत। प्राकृतों में पाइक्क (पाईक, हि० पाइक =पैदल सिपाही या हरकारा), माचिआ (हि० माची, मध्यवर्ती पहलवी माचक= घुटनों तक का जूता, परवर्ती फा० में 'माचक' ही 'माजा' हो गया जो हिन्दी आदि में मूल अर्थ तथा जुराब दोनों में मिलता है)।

मध्यकालीन फा० 'तश्त' का प्रा० 'टठ', 'टट्ठ' जो भोजपुरी, अवधी आदि में टाठी (थाली) बना। हिन्दी का ठठेरा भी मूलतः इसी से सम्बद्ध है, फ़ा० तश्त >प्रा० ठट्ट+कार+क> ठठ्यारअ>ठठेरा। पुस्तक, पुस्तिका [पहलवी 'पास्त' (=लिखने का चमड़ा) के संस्कृतीकृत रूप 'पुस्त +क', प्रा० पोत्थिआ, हि० पोथी], सं० सिक्क [प्रा०सेका<मध्ययुगीन फा० सिक्क (हिन्दी 'सिक्का') अर० सिक्क, सिक्कत∠आर्मेइक 'सिक्क'=सिक्के का साँचा]। चीन से चीन से भी भारत का संबंध पुराना है। चीनी से सम्भूत में चीन (चीनांशुक), कीचक (मूल शब्द 'कि-चाक', एक प्रकार का बाँस), सिन्दूर (मूल चीनी शब्द 'सिनतुङ'), शय (कागज के लिए पुराना संस्कृत शब्द, मूल चीनी शब्द 'सिसएह'), मुसार (एक रत्न, मूल चीनी शब्द 'म्व-श्यर') तथा तसर (रेशम विशेष, मूल चीनी शब्द 'तइ-स्सेर', प्राकृत तथा हिन्दी 'टसर') आदि शब्द आये हैं। हिन्दी 'लीची' शब्द भी मूलतः चीनी लीचू है। 'चीनी (शक्कर) शब्द भी मूलतः चीन पर आधारित है किन्तु यह शब्द कदाचित फारसी होते हुए आया है। मिस्री से - मुद्रा (मुद्रिका भी इसी से है हि०मुन्दरी), हिंदी का मिश्री भी मूलतः 'मिस्री' है जो सं० 'मिश्र' के प्रभाव से मिश्री भी उच्चरित होता है। यों काफी लोग इसे मिस्री ही कहते हैं। तुर्की से तुरुष्क ठक्कुर, खच्चर।

इस प्रकार संस्कृत तथा प्राकृत में अनेक भाषाओं से शब्द लिए गये हैं। हिन्दी ने भी इसी परम्परा में पश्तो, तुर्की, फारसी, पुर्तगाली, अंग्रेजी, फ्रांसीसी, डच, स्पेनी, रूसी तथा कई भारतीय भाषाओं से शब्द लिये हैं।

ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट है कि विदेशी शब्द भी दो प्रकार के हो सकते हैं, एक तो तत्सम और दूसरे तद्भव। तत्सम वो वे हैं जो उसी रूप में प्रयुक्त होते हैं, जैसे विदेशी भाषा में होते थे, तथा तद्भव वे हैं जो अपने मूल रूप से परिवर्तित हो गये हैं। उदाहरण के लिए हिन्दी में 'पम्प' तत्सम विदेशी (अंग्रेजी) है तो 'दर्जन' तद्भव (अंग्रेजी) है।

हिन्दी आदि अनेक भाषाओं में विदेशी शब्दों का एक और भी रूप मिलता है। वह है अनूदित रूप। ये अनूदित शब्द अपनी रचना में तो तत्सम या मिश्र या तद्भव हो सकते हैं किन्तु मूलतः ये विदेशी हैं क्योंकि उन्हीं के आधार पर बने हैं। हिन्दी में ऐसे शब्दों में कुछ तो फारसी से आये हैं जैसे जलवायु (आबहवा) कटिबद्ध (कमरबस्ता) आदि किन्तु अधिक शब्द अंग्रेजी से आये हैं। कुछ उदाहरण हैं लालफीताशाही (redtapism) दृष्टिकोण (angle of vision), श्वेतपत्र (white paper) काला जादू (black magic) दृष्टि बिंदु (point of view) रजत जयन्ती (silver jubilee), डाकखाना (post office), माल गाड़ी (goods train) सवारी गाड़ी (passenger train), अन्तरिम (interim), तदर्थ (ad hoc) प्रधानाध्यापक (head master), वातानुकूलित (air-conditioned) सुसंतुलित (well-balanced), उपकुलपति (v c), प्रार्थना पत्र (application), विराम चिह्न (punctuation mark), योजक चिह्न

(hyphen), पूर्णविराम (full stop), ललित कला (fine art), उपयोगी कला (useful art), सम्पादकीय (editorial), प्रकाशक (publisher), सस्करण (edition) आदि।

विदेशी वर्ग मे आने वाले शब्दो के लिए 'विदेशी' नाम बहुत उपयुक्त नही है, क्योकि किसी भी अन्य भाषा से आया शब्द इसी के अन्तर्गत आयेगा, चाहे वह देश की हो या विदेश की। इसीलिए 'गृहीत' या 'आगत' नाम अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त ज्ञात होता है। उदाहरण के लिए, हिन्दी मे बगला भाषा से आया शब्द विदेशी नही कहा जा सकता, यद्यपि इन चारो वर्गों मे उसे कही-न-कही स्थान अवश्य दिया जायेगा। इन तीनो नामो मे 'गृहीत' या 'आगत' नाम अधिक स्वीकार्य हैं।

देशज

भरत ने इसे 'देशीमत', चड ने 'देशीप्रसिद्ध', कुछ लोगो ने 'देशजात', 'देसिका' तथा हेमचन्द्र, मार्कण्डेय आदि ने 'देश्य' या 'देशी' कहा है। इसकी परिभाषा के सम्बन्ध मे विवाद है। चड ने उन शब्दो को देशीप्रसिद्ध कहा है जो सस्कृत एव प्राकृत (अर्थात् तत्सम एव तद्भव) न हो, रुद्रट के अनुसार इनकी प्रकृति प्रत्यय मूला व्युत्पत्ति नही दी जा सकती हेमचन्द्र, बीम्ज, भडारकर आदि के अनुसार इनकी सस्कृत से व्युत्पत्ति सम्भव नही। हार्नले ने सकेत किया है कि ये वे तदभव शब्द हो सकते है जो इतने विकृत हो गए है कि उनका तदभव रूप पहचाना नही जा सकता। ग्रियसन मुडा, द्रविड, प्रान्तो मे विकसित प्रातीय शब्द एव प्राथमिक प्राकृतो के तदभव आदि को, जो सस्कृत शब्दो से जोडे नही जा सकते, देशज मानते हैं। चटर्जी ने इन्हे आर्यपूर्व द्रविड, कोल शब्द कहा है। इसी प्रकार की और भी परिभाषाएँ एव मान्यताएँ हैं।

मैं 'वास्तविक देशज' शब्द तथा 'देशज माने जाने वाले' शब्दो मे अतर मानता हूँ। वास्तविक देशज शब्द तो वे हैं जो किसी भाषाक्षेत्र मे बिना किसी आधार [जैसे तत्सम, तदभव, गृहीत (loan) शब्द, तथा अनुकरण आदि] के विकसित हो गए हो और जो शब्द देशज माने जाते है, वे वे हैं जिनकी व्युत्पत्ति का हम पता नही है। सच्चे देशज शब्द को पहचानना मेरे विचार मे प्राय असम्भव-सा है। इसलिए यह तो कहा जा सकता है कि देशज शब्द हो सकते है, होते है, किन्तु यह कहना मुझे भ्रामक और अवैज्ञानिक लगता है कि अमुक या य-य शब्द देशज है। देशज माने जाने वाले शब्द देशज हो भी सकते हैं और नही भी हो सकते। वास्तविक स्थिति यह है कि ये अनातव्युत्पत्ति के हैं। अत इन्हे 'अनातव्युत्पत्तिक' नाम देना मेरे विचार मे अधिक वैज्ञानिक है, क्योकि यह असम्भव नही कि इनमे अनुकरणात्मक, दूसरी भाषाओ से गृहीत, तद्भव या यहाँ तक कि—यद्यपि बहुत ही कम—तत्सम शब्द छिपे हो। हम जानते हैं कि हेमचन्द्र द्वारा स्वीकृत देशज शब्दो मे अनेक तद्भव या विदेशी सिद्ध हो चुके हैं। हिन्दी मे कुछ प्रसिद्ध अनात

व्युत्पत्ति श द य ह कबड्डी, खादी, गडबड, घपला, घूँट, चपत, चूहा, झमट, झगडा, टट्टू, टोस ठठ, ठेस सेंदुआ थोथा, धब्बा, पेठा, पड, भता आदि।

अनुकरणात्मक शब्द

इ ह प्राय देशज श दा के अ तगत रखा जाता है, कि तु मैं इनका एक अलग वग बनान क पक्ष म हूँ। देशज शब्दा की तरह ये अज्ञातव्युत्पत्तिक तो है नहीं। हम इनकी व्युत्पत्ति का पता है। ये अनुकरण के आधार पर बने हैं। अत इ ह देशज के अ तगत नही रखा जाना चाहिए।

अनुकरणात्मक शब्दा के कई भेद हो सकते हैं —

(क) ध्व यात्मक—जसे फटफटिया, भापू, सीटी आदि। इनम अनुकरण ध्वनि का होता है। ऐसे शब्द प्राय सभी भाषाओ में थोडे-बहुत मिल जाते हैं।

(ख) दश्यात्मक—बगबग, जगमग। इनम दश्य का अनुकरण होता है। इस प्रकार के शब्द बहुत ही कम होते हैं। यह भी असम्भव नहीं कि इस वग मे आन वाले श द किसी पूववर्ती शब्द पर आधारित हा। वसी स्थिति म इनके दश्यात्मक हाने पर प्रश्नवाचक चिह्न लग जाएगा।

(ग) प्रतिध्व यात्मक—जैसे घोडा वोडा, चाय वाय पान शान। इनम वोडा, वय शान क्रमश घोडा, चाय, पान की प्रतिध्वनि के आधार पर बने हैं। प्रति-ध्व यात्मक शब्द का प्रयोग प्राय 'वगैरह' का भाव व्यक्त करन के लिए हाता है। विश्व की अनेक भाषाओ मे ऐस प्रयाग मिलते हैं। अधिकाश भाषाओ मे इस बनान का ढग प्राय अलग अलग होता है। जस हि दी मे चाय-वाय, अधिक चलता है तो पजाबी मे चाय शाय। उजबक भाषा मे 'म लगाते है किताब मिताब। ऐसे ही गुजराती घोडा बोडा मराठी घाडा बिडा, बगाली घोडा टोडा आदि।

आभास

कुछ श द हात हैं कुछ और, कि तु उ ह देखने-सुनन पर आभास कुछ और का होता है। इसी आधार पर पीछे कुछ शब्दा को तत्समाभास कहा जा चुका है। डॉ० श्यामसु दरदास ने राष्ट्रीय जागत, पौर्वात्य उ नायक, सिंचन सजन आदि को तत्समाभास कहा है। इसी प्रकार 'मौसा' को उ हाने तदभवाभास या अद्ध-तदभव कहा है। मूल तदभव शब्द 'मौसी' है, जिससे 'मौसा' बना लिया गया है। डा० दास ने आभास के आधार पर ये दो भेद किए है। यदि पाठक आभास के आधार पर और भी भेद बर्दाश्त कर सकें तो मैं विदेश्याभास (जसे कलेजा, यह लगता है विदेशी कि तु है स० कालेयक का तदभव) एव देशजाभास (जसे बाँगर जजाल खच्चर, समोसा ये सभी विदेशी हैं) का सुझाव देना चाहूँगा। यो वैज्ञा-निक अध्ययन म आभास पर आधारित ये वर्गीकरण कोई महत्त्व नहीं रखत। वैज्ञानिक अध्ययन में हम देखना होता है कि कोई श द क्या है यह नहीं कि वह क्या लगता है।

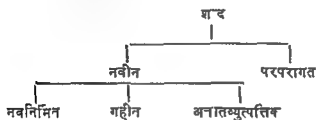
संकर, मिश्रित या द्विज शब्द

उपर्युक्त वर्गों में एक से अधिक वर्गों के शब्दों को मिलाकर बनाये गये शब्द इस वर्ग में आते हैं। उदाहरणार्थ, रेलगाडी, गुरडम, पावरोटी, मालगाडी, दलबदी।

इस तरह मोटे रूप से कहा जा सकता है कि शब्द या उसके अंश के इतिहास की दृष्टि से शब्द छः प्रकार के होते हैं तत्सम, तद्भव, अनातव्युत्पत्तिक (देशज), विदेशी अनुकरणात्मक, तथा संकर।

या विदेशी को यदि गृहीत या आगत नाम दें, जैसा कि ऊपर संकेतित है तो संस्कृत से लिये जाने वाले तत्सम शब्द भी इसी के अंतर्गत रखे जा सकते हैं।

वस्तुतः शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टि से किसी भी भाषा के शब्द मूलतः दो प्रकार के हो सकते हैं नवीन और परंपरागत। आगे नवीन को तीन वर्गों में बाटा जा सकता है नवनिर्मित, गृहीत अनातव्युत्पत्तिक। फिर गृहीत के 'देश से गृहीत', 'विदेश से गृहीत' आदि उपभेद हो सकते हैं।



(ख) रचना

रचना के आधार पर शब्द तीन प्रकार के माने गए हैं रूढ, यौगिक, योगरूढ। आगे इन पर अलग अलग विचार किया जा रहा है—

रूढ—वे शब्द जो सार्थक भाषिक इकाइयों के योग से न बने हों। जैसे घर, कपडा आग कागज। इनमें से किसी के भी ऐसे सार्थक खंड नहीं किए जा सकते जिनकी सार्थकता पूरे शब्द के अर्थ से सम्बद्ध हो। रूढ शब्दों का कुछ लोगों ने 'रूढि' भी कहा है।

यौगिक—यौगिक का अर्थ है 'योग किया हुआ' या 'जोड़कर बनाया हुआ'। रूढ शब्दों के विपरीत यौगिक शब्दों का ऐसे सार्थक खंडों में विभाजित किया जा सकता है जिनके अर्थ पूरे शब्द के अर्थ से सम्बद्ध हों। ऐसे शब्द प्रायः तीन प्रकार से बने होते हैं (i) उपसर्ग+शब्द। जैसे अनपढ, कुरूप, लापता। (ii) शब्द+प्रत्यय। जैसे कटुता, भलाई बुढापा। (iii) शब्द+शब्द। जैसे रसोईघर भाषाविज्ञान डाकखाना। कुछ यौगिक शब्द ऐसे भी होते हैं जिनकी रचना में उपर्युक्त में कई का प्रयोग हुआ होता है जैसे अनुरूपता (उपसर्ग+शब्द+प्रत्यय), भाषाशास्त्रवेत्ता विवेकविहीनता आदि।

अपवादतः कुछ शब्द ऐसे भी मिलते हैं जो मात्र उपसर्ग तथा प्रत्यय से बने होते हैं। जैसे विन अन, प्रज्ञ, अभिन। हिन्दी की दृष्टि से इनकी रचना उपसर्ग

(ग) कभी-कभी केवल विदेशी शब्दों से ही इस प्रकार के शब्द बन जाते हैं। जैसे इज्जत आबरू, नाज नखरा दवा दारू, सील मुहर, कज़ा कुवाम, सौदा-सुल्फ। ऐसे शब्दों का 'अनुवाद समास', 'अनुवादमूलक समास' या 'अनुवादमूलक समस्त पद' भी कहते हैं। इस प्रकार के शब्द बनाने की प्रवृत्ति नई नहीं है। संस्कृत में शालिहोत्र (शालि=घोडा, कोल भाषा में, होत्र=घोडा, द्रविड में) ऐसा ही शब्द है।

(ग) प्रयोग

प्रयोग के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जा सकता है

(i) सामान्य-अर्धपारिभाषिक पारिभाषिक—सामान्य तो वे हैं जो सामान्य भाषा में प्रयुक्त होते हैं। जैसे आना, पेड पानी मिट्टी आदि। पारिभाषिक शब्द उनको कहते हैं जो शास्त्र या विज्ञान विशेष में विशेष अर्थ में आते हैं। जैसे अद्वैतवाद (दर्शन), सर्वनाम (व्याकरण), प्रकरी (नाट्यशास्त्र), समीकरण (भाषाविज्ञान) आदि। अर्धपारिभाषिक शब्दों की स्थिति बीच की है। वे सामान्य भाषा में भी प्रयुक्त होते हैं और पारिभाषिक रूप में भी। जैसे दावा सामान्य भाषा में भी प्रयुक्त होता है और कानून में पारिभाषिक अर्थ में भी। घन (गणित), स्वर (व्याकरण), संकल्प (मनोविज्ञान) आदि भी इसी प्रकार के शब्द हैं। पारिभाषिक शब्दों पर आगे अलग से विचार किया जा रहा है।

(ii) साहित्यिक बोलचाल का—पहले का प्रयोग प्रायः साहित्य तक सीमित होता है। दूसरा बोलचाल में भी आता है। यों यह भेद सभी भाषाओं एवं सभी शब्दों में स्पष्ट नहीं दिखाई पडता। बोलचाल वाले शब्द साहित्य में भी आ जाते हैं। उदाहरण के लिए हिन्दी में गृह मयंक, हस्त जैसे शब्द प्रायः साहित्य में ही आते हैं। बोलचाल में घर चाँद, हाथ चलते हैं। यों ये बोलचाल के शब्द अवश्य साहित्य में भी मिल जाते हैं।

(iii) श्लील-अल्पश्लील अश्लील—श्लीलता अश्लीलता शब्द के अर्थ से अधिक, प्रयोग पर निर्भर करती है। एक ही अर्थ में बहुप्रचलित शब्द अश्लील माना जाता है तो अल्पप्रचलित या अप्रचलित उतना बुरा नहीं समझा जाता। उदाहरणार्थ गुदा, लिंग योनि, मैथुन अपने सामान्य समानार्थियों की तुलना में श्लील हैं। यों हाथ पैर आदि अन्य शब्दों की तुलना में गुदा, लिंग आदि भी अश्लील हैं। इस प्रकार, इस आधार पर श्लील, अल्पश्लील अश्लील तीन भेद किये जा सकते हैं। हाथ, पैर श्लील हैं लिंग योनि अल्पश्लील हैं तो लौंड बुर आदि अश्लील हैं। श्लील का सामान्य तथा अश्लील को वर्जित शब्द (Taboo word) भी कहते हैं।

(iv) सक्रिय निष्क्रिय—किसी भी व्यक्ति के शब्दभांडार के शब्दों का उनके प्रयोग के आधार पर दो वर्गों में रखा जा सकता है (1) सक्रिय—ये वे शब्द

होते। जिनकी जानकारी व्यक्ति विशेष को होती है तथा जिनका प्रयोग वह बोलने तथा लिखने में करता है। (2) निष्क्रिय—ये वे शब्द होते हैं जिनकी जानकारी व्यक्ति को होती है किन्तु जिनका प्रयोग वह कभी नहीं करता। हाँ यदि वह व्यक्ति उस शब्द को कहीं सुनता या पढता है तो समझ जाता है। इस तरह शब्दों के ये दोनों वर्ग व्यक्ति सापेक्ष होते हैं। अपनी शब्द संपदा बढाने के लिए प्रयास यह होना चाहिए कि अधिक से अधिक निष्क्रिय शब्द सक्रिय बन जाएँ।

(v) अनौपचारिक औपचारिक—श्रीमन कृपया श्री, महोदय, शुभनाम, शुभस्थान जैसे शब्द केवल औपचारिक बातचीत या लेखन में प्रयुक्त होते हैं, अत इस वर्ग के शब्दों को औपचारिक शब्द कहा जा सकता है। जो शब्द सामान्य होते हैं उन्हें अनौपचारिक कहते है। अनौपचारिक अवसरों पर औपचारिक शब्दों का प्रयोग खटकता है तो औपचारिक अवसरों पर अनौपचारिक शब्दों का प्रयोग।

(vi) आधारभूत माध्यमिक उच्च—आधारभूत शब्द उन्हें कहते हैं जिनके बिना भाषा विशेष का काम नहीं चलता। इसमें प्राय सभी सर्वनाम तथा बहुप्रयुक्त संज्ञा, क्रिया संख्यावाचक विशेषण और अव्यय शब्द आते हैं। उच्च शब्द में प्राय विज्ञानों और शास्त्रों के पारिभाषिक शब्द आते है। माध्यमिक शब्द बीच के होते हैं। हिन्दी में मैं वह, तू, घर, आदमी, हाथ, खाना, चलना, बैठना, सोना एक, दो तीन आदि आधारभूत शब्द हैं तो मुक्ति वस्त्र, भव्य, आकाश आदि माध्यमिक शब्द हैं और कथानक, अद्वैतवाद, रुधिर आदि उच्च शब्द हैं।

(vii) प्रयुक्त अल्पप्रयुक्त अप्रयुक्त—स्पष्ट ही पहले वर्ग के शब्द प्रयोग में होते हैं, और दूसरे का अपेक्षाकृत कम प्रयोग होता है और तीसरे का प्रयोग प्राय नहीं के बराबर होता, या नहीं होता उदाहरणार्थ आग–अनल हुताशन हाथी-हस्ती मगल। किसी भी भाषा में सदा सर्वदा के लिए यह स्थिति नहीं होती। समय के साथ प्रयोग की बहुलता–न्यूनता में कमी बेशी होती रहती है और प्रयुक्त अप्रयुक्त या अल्पप्रयुक्त वर्ग में आते रहते है तो अप्रयुक्त या अल्पप्रयुक्त प्रयुक्त में।

(viii) सर्वक्षेत्रीय— क्षेत्रीय—कुछ शब्द किसी भाषा के पूरे क्षेत्र में चलते हैं और कुछ क्षेत्र, प्रांत या स्थान विशेष या उस भाषा की किसी बोली विशेष के क्षेत्र तक सीमित होते हैं। उदाहरणार्थ, अच्छा, निम्मन, कटोरा-खोरा, थाली ठाढी डालना घालना, तारी ननुवा घेवडा आदि शब्दों में पहला सर्वक्षेत्रीय है तो शेष क्षेत्रीय है।

(घ) अन्य

इन आधार पर भी एकाधिक प्रकार का वर्गीकरण किया जा सकता है। जैसे —

(i) सरल अल्पक्लिष्ट क्लिष्ट यह भेद मूलत प्रयोग पर ही आधारित है। बहुप्रयुक्त शब्द अर्थ की दृष्टि से सरल लगता है तथा अल्पप्रयुक्त अल्पक्लिष्ट

(12) अल्पभाषी लज्जालु एकांतप्रिय या बहुत गंभीर व्यक्ति प्राय अच्छे सूचक नहीं बन पाते। इसके विपरीत बातूनी, हँसमुख, न झेंपनेवाला व्यक्ति सूचक के लिए अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त होता है।

(13) सूचक ऐसा होना चाहिए जो सहज रूप मे बोल। बहुत स लोग सतक होकर बनावटी भाषा बोलने लगते हैं। इस बात का पता चलते ही, या तो उस छोड देना चाहिए या फिर उसके द्वारा प्रयुक्त शब्दों की प्रामाणिकता अप्रामाणिकता का किसी अन्य अच्छे सूचक की सहायता से पता लगा लेना चाहिए।

(14) सभी दृष्टियों स विचार करने पर अन्य लोगो की तुलना म किसान प्राय अपने क्षेत्र की भाषा को अधिक प्रकृत रूप म जानता तथा बोलता है, अत मजदूर या अन्य नौकरी पेशा व्यक्ति की तुलना म वह प्राय अधिक अच्छा सूचक बन सकता है।

(15) ऐसा व्यक्ति जो कोई ऐसी भी भाषा जानता हो जिसका ज्ञान सर्वेक्षक को हो ऐसी भाषा न जानने वाले की तुलना म सूचक का काम अधिक अच्छी तरह कर सकेगा। उसस बडी सरलता से और कम समय मे अपेक्षित सारी सूचनाए ली जा सकती हैं।

(16) यदि कई पढे लिखे सूचक उपलब्ध हो तो भाषाविज्ञान का जानकार सूचक अपेक्षाकृत अधिक अच्छा हो सकता है —

सर्वेक्षक—सर्वेक्षक स्वभाव, योग्यता तथा प्रशिक्षण आदि की दृष्टि से कैसा हो इस सम्बन्ध मे ये बातें ध्यान म रखने की हैं —

(1) सर्वेक्षक को यथाशीघ्र अपरिचित को परिचित एव परिचित को मित्र बना लेने वाला, मिलनसार विनम्र व्यवहार-कुशल, हँसमुख, धैर्यवान अपना काम सहज ढग स निकालने वाला जिज्ञासु सूचक स एक शिष्य की तरह भाषा सीखने तथा उसके सम्बन्ध म जानकारी प्राप्त करने को इच्छुक बातचीत म पटु चुस्त और सावधान होना चाहिए।

(2) उसकी स्मरणशक्ति बहुत अच्छी होनी चाहिए। इससे तुलना, विश्लेषण आदि म वह अपेक्षाकृत अधिक सफल हो सकता है।

(3) सर्वेक्षक को जिस क्षेत्र स सामग्री सकलित करनी हो उसके भूगोल, इतिहास सस्कृति और सभ्यता रहन सहन लोग जाति, उद्योग धधे आदि का यथासाध्य समुचित ज्ञान होना चाहिए। इसस उस प्रश्नावली बनाने लोगो से निकट सम्पर्क स्थापित करने अच्छे सूचक चुनने और अतत वहाँ स अपेक्षित सामग्री अच्छी तरह एकत्र करने म सहायता मिलेगी।

(4) उसकी स्मरणशक्ति इतनी तेज होनी चाहिए कि उच्चारण-स्था प्रयत्न प्राणत्व, अनुनासिकता समरता मात्राकाल सुर अनुतान बलाघा सगम आदि के सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तर को अत्यन्त शीघ्रता से और ठीक ठीक पक सके। इसके लिए सहज श्रवणशक्ति के अतिरिक्त ध्वनिविज्ञान का सैद्धान्तिक

ज्ञान, तथा उस ज्ञान के प्रयोग का उसे जितना ही अधिक अभ्यास होगा, वह उतनी ही कुशलता और सफलता से अपना काम कर सकेगा।

(5) भाषाविज्ञान—विशेषत सामग्री-सकलन एव सामग्री विश्लेषण—मे सद्धातिक और व्यावहारिक दोनो दष्टियो से अच्छी गति सर्वेक्षक के लिए बडी सहायक होती है।

(6) सर्वेक्षक को काफी तेज लिखने का अभ्यास होना चाहिए, ताकि वह सूचक की बोलने की सहज गति को कम किये बिना अपेक्षित सामग्री नोट कर सके।

(7) ध्वन्यात्मक लिपि का न केवल अच्छा ज्ञान बल्कि तेजी से उसमे लिखने का अभ्यास भी होना उसे चाहिए।

प्रश्नावली—लोककथा, लोकगीत पहेली या चुटकुले आदि के लिए तो किसी प्रश्नावली की अपेक्षा नही होती किन्तु शब्द, रूप, वाक्य आदि जानने के लिए सर्वेक्षक को प्रश्नावली बना लेनी चाहिए। प्रश्नावली बना लेने स एक तो सरलता एव सहजता से सूचक अपेक्षित सूचनाएँ दता चलता है, दूसर आवश्यक सूचनाओ के छूटने का भय नही रहता। यो ऐसी कोई भी प्रश्नावली नही बनाई जा सकती जो अपन मूल रूप मे बिना किसी परिवतन के सभी क्षेत्रो म भाषा-सर्वेक्षण क काम आ सके, क्योकि हर भाषा या बोली की अपनी सास्कृतिक एव सामाजिक पष्ठभूमि भिन्न होती है। इसीलिए अच्छा यह होता है कि क्षेत्र के लोगो, जातियो, धम, रहन सहन एव उद्योग धधे आदि से परिचय प्राप्त करके ही सर्वेक्षक प्रश्नावली तयार करे। फिर भी मोटे रूप से इस सबध म कुछ सामान्य बातें बताई जा सकती है (1) प्रश्नावली म स्थूल या मूत वस्तुओ या क्रियाओ से सम्बन्धित प्रश्न पहले आने चाहिए तथा सूक्ष्म या अमूत से सम्बन्धित बाद मे। (2) व्याकरणिक दष्टि से सज्ञा, सवनाम, विशेषण तथा वाक्य के क्रम से सामग्री प्राप्त करने की दष्टि से प्रश्नावली बननी चाहिए। (3) वाक्य क बाद कहानी चुटकुले गीत जसी चीजें पूछकर नोट की जा सकती हैं। (4) प्रारम्भ म मुहावरे लोकोक्तिया आदि कहानी आदि स खोजी जा सकती हैं। भाषा के बारे मे अच्छी जानकारी हो जाने पर स्वतन्त्र भी इन्हे पूछकर मालूम किया जा सकता है। प्रश्नावली बनाते समय क्षेत्र की विशेषताओ को ध्यान मे रखते हुए निम्न आधारो की सहायता ली जा सकती है

(अ) सज्ञा—(क) शरीर के अग—सिर, पैर हाथ अँगूठा, उँगली, नाखून, बाल आख नाक, मुह कान, गाल, दात जीभ, होठ भौ, गदन छाती पीठ, पेट, कमर, जाघ, घुटना, पिंडली। हड्डी, रक्त, मास, दिल, जिगर फेफडा जैसी चीजो के नाम बाद मे पूछे जा सकते हैं।

(ख) सबधियो के नाम—बाप, माँ भाई, पति, पत्नी पुत्र, पुत्री भाभी, जीजा, दादा, दादी, ताऊ ताई चाचा, चाची, नाना नानी मामा मामी, मौसी, मौसा, बुआ, फूफा, साला साली, सास ससुर, पोता, पोती नाती,

नातिन पतोहू।

(ग) घरेलू चीजों के नाम—चारपाई, बिछौना, रजाई तकिया चाद्र लोटा गिलास, थाली, कटोरी, पतीला, पतीली, कड़ाही, तवा, चमचा, अँगीठी, चूल्हा।

(घ) अन्न तथा खान पान—गेहूँ, धान, जौ मटर, चना, बाजरा, उ चावल दाल आटा खाना पानी मिठाई, रोटी, पूडी पराठा सब्जी, आ बैंगन, गोभी पालक आम सेब, अमरूद केला, अंगूर, सतरा, नीं अन नास नाशपाती अखरोट बादाम, किशमिश काजू आदि।

(ङ) जीव जन्तुओं के नाम—गाय भैंस बकरी बैल, भेड़, कुत्ता, बिल्ली बन्दर घोडा हाथी शेर चीता, हिरन, गीदड ऊँट मछली, चूहा साँप, मढक तोता कोयल मुर्गी बतख, मक्खी, मच्छर आदि।

(च) फूलो के नाम—गुलाब चमेली गेंदा, चम्पा, रातरानी, बेला आदि।

(छ) भौगोलिक नाम आदि—नदी, नाला, समुद्र, पवत घाटी जमीन, आसमान सूय चाँद तारे, बादल।

(ज) कपडे आदि—धोती, कुर्ता टोपी तौलिया अँगोछा रूमाल, काट, पाजामा बनियाइन जूता मोजा कमीज स्वेटर आदि।

(झ) पढने लिखने की चीजों के नाम—किताब, कागज, कलम, स्याही पत्र पत्रिका अखबार आदि।

(आ) सवनाम—यदि एकभाषिक पद्धति से पूछना हो तो सवनामो म प्रारम्भ मे मेरा घर उसका घर, तुम्हारा घर जसे प्रयोगो से सबध कारक क रूप मालूम किय जा सकते हैं तथा अन्य रूपो (मै, हम तुम वह, यह मुझ, उन्हे आदि) का बाद म जानन का यत्न किया जा सकता है। हाँ द्वभाषिक या बहुभाषिक पद्धति स यदि सामग्री एकत्र की जा रही हो तो मूल रूप (मैं, तुम हम वह यह आदि) एव सबध के रूप दोनो ही नोट किये जा सकते हैं। अन्य रूप (उन्हें मुझे, जिस आदि) बाद म वाक्या के विश्लेषण के बाद खोजे जाने चाहिए। उसके पूव इनको जानने का यत्न आवश्यक रूप स बहुत समय तो लेता ही है स्पष्टत पता चलना भी कठिन हो जाता है।

(इ) विशेषण—सबसे पहले सख्यावाचक विशषण लें। इनमे भी पूण तथा क्रम पहले और अपूण आदि बाद म। पूण म भी दस तक पहले तथा अन्य बाद म। रग आदि विषयक विशेषणा को छोडकर अन्य विशेषण वाक्य के माध्यम स अधिक अच्छी तरह जाने जा सकते हैं। ये बातें एकभाषिक पद्धति की दृष्टि से कही जा रही हैं। द्वभाषिक आदि म इसका ध्यान रखना आवश्यक नही है।

(ई) वाक्य—शब्दा के प्रयोग स सबधित जानकारी फुटकर शब्दो स नही प्राप्त की जा सकती। वाक्य के स्तर पर ही ढूँढ पाया जा सकता है। इसका अथ यह है कि ऐस प्रश्न भी किए जाने चाहिए जिनके उत्तरस्वरूप वाक्यो की

(2) यदि चिटो पर कोई सशोधन करना हो तो ऐसे काटकर लिखना चाहिए कि पूर्वलिखित सामग्री भी पढ़ी जा सके। कभी-कभी सशोधन पूर्व सामग्री का जानना भी आवश्यक हो जाता है।

(3) सामग्री कितने बड़े कागज पर नोट करें, यह प्रश्न भी विचारणीय है। नाइडा ने बड़े कागज पर सामग्री नोट करने की राय दी है जिस पर काफी कुछ लिखा जा सके। मेरे विचार मे शब्द आदि छोटी छोटी चिटों पर नोट करना अधिक अच्छा है ताकि फिर से सामग्री उतारनी न पड़े और विश्लेषण मे चिटो को आवश्यकतानुसार विभिन्न वर्गों म रखा जा सके। हाँ, कहानी, गीत आदि बड़े कागज पर नोट किये जा सकते है।

(4) कागज के एक तरफ लिखना चाहिए। दोनो तरफ लिखने म तुलना करते समय बहुत समय लग जाता है तथा विश्लेषण म भी कठिनाई पडती है।

(5) छिपाकर नही लिखना चाहिए। इसस सूचक को सर्वेक्षक के उद्देश्य पर सदेह हो सकता है।

(6) प्रत्येक शब्द का सुनकर कम से कम दो बार लिखना अधिक अच्छा होता है। लिखने के बाद तुरत एक बार दुहरा भी लेना चाहिए ताकि लेखन म यदि कोई त्रुटि हो तो उसे ठीक किया जा सके।

(7) जो शब्द जैसे सुनाई पड़ें, वसे ही लिखना चाहिए। किसी स्तर पर बलात एकरूपता लाने का यत्न नही किया जाना चाहिए। अनुसधाता म ऐसी ईमानदारी बहुत ही आवश्यक है।

(8) सामग्री सामान्य लिपि म न लिखी जाकर ध्वन्यात्मक लिपि म लिखी जानी चाहिए।

(9) सामग्री नोट करने के लिए अच्छी किस्म की पेंसिल या बाल पेन का प्रयोग अच्छा रहता है। इससे एक तो अपेक्षाकृत अधिक तेजी एव सरलता स लिखा जा सकता है, दूसरे, कागज के भीगने पर अपठ्य होने का भय नही रहता और तीसरे, स्याही साथ रखने की परेशानी से भी छुटकारा मिल जाता है।

(10) टेप रिकार्डर स टेप करके, बाद म अकेले बैठकर भी सामग्री लिखी जा सकती है।

अर्थ—सामग्री लिखने के साथ साथ उसका अर्थ भी लिखते चलना चाहिए। इस सबध मे निम्नाक्त बातें ध्यान म रखी जानी चाहिए —

(1) स्थूल वस्तुओ के सुनिश्चित अर्थ (जसे रोटी चारपाई मकान आदि) तो सरलता से लिखे जा सकते हैं।

(2) जिन शब्दो के लिए अपनी भाषा मे शब्द न मिलें उनकी व्याख्या लिखी जा सकती है।

(3) बहुत सी वस्तुओ के ऐसे भी नाम मिल सकते है जिनके लिए अपनी भाषा मे शब्द नहीं है, और उनकी ठीक व्याख्या लिखना भी जल्दी म कठिन होता है ऐसी स्थिति मे उनके रेखाचित्र या सकेत से काम चलाया जा सकता है।

(4) अथ की दष्टि से अस्पष्ट शब्दो के अथ उनके प्रयोग से पकडन का प्रयास करना चाहिए क्यावि सूचक के लिए शब्द का अथ समझना—विशेपत ठीक अथ समझना—सवदा सम्भव नही होता।

सर्वेक्षक के लिए अय सुझाव—ऊपर, सर्वेक्षक कैसा हो, इस सम्बन्ध म कुछ बातें कही गई हैं। यहाँ कुछ वे बातें दी जा रही है जिनका उसे सर्वेक्षण करत समय ध्यान रखना चाहिए —

(1) यदि सूचक की अभिवादन पद्धति से सर्वेक्षक परिचित है या मिलत ही देखकर परिचित हो जाता है तो उसे उसी पद्धति से तुरत अभिवादन करना चाहिए। प्रारम्भ मे विना विशेप परिचय के अपनी पद्धति से अभिवादन करना उचित नही होता क्योकि ऐसा भी हो सकता है कि सर्वेक्षक की पद्धति स सूचक परिचित न हो और पहली भेंट म ही उसकी यह हरकत सूचक के लिए एक रहस्य बन जाय, या यह भी हो सकता है कि उस प्रकार की क्रिया (जस हाथ उठाना) उसकी अपनी सस्कृति मे कुछ भिन्न या खराव अथ रखती हो। विशेपत किसी भी देश के बहुत पिछडे आदिवासिया म जाते समय इस बात का ध्यान नितात आवश्यक है।

(2) सूचक से मुस्कराते हुए मिलना चाहिए। या विभिन्न स्थितिया म मुस्कराहट व्यग्य या मजाक उडाने की द्योतक होती है, किन्तु प्रथम के मिलन समय की सहज मुस्कान प्राय सभी सस्कृतिया मे इसी बात का द्योतन करती है कि मिलकर बडी प्रसन्नता हुई। विशेपत एकभापिक पद्धति म तो यह मुस्कान और भी आवश्यक हो जाती है क्योकि सर्वेक्षक ऐसी स्थिति म नही होता कि बोलकर अपन भावो को सूचक तक पहुँचा सके।

(3) मिलते ही चुप न रहकर किसी न किसी भापा म (चाहे उस सूचक भले न समझता हो) बात करनी शुरू कर देनी चाहिए। सूचक पर इसकी सहज प्रतिक्रिया यही होगी कि सर्वेक्षक बात करना चाहता है।

(4) यदि सूचक की सभ्यता म प्रचलित विनम्रता एव शिष्टता क ढगा से सर्वेक्षक परिचित हो तो उसे उसी के अनुरूप व्यवहार करना चाहिए। उसम सूचक को अपनी ओर आकर्पित करन एव उसस अपेक्षित सहयोग प्राप्त करन मे मदद मिलती है।

(5) पिछडे क्षेत्र मे कुछ उपहार (जैसे मिठाई आदि) लेकर जाना प्राय अच्छा साबित होता है। यदि सर्वेक्षक को इस बात का पता हो कि सूचक क क्षेत्र म कौन सा उपहार विशेप पसद किया जायगा तो उस वही लेकर जाना चाहिए।

(6) सूचक से मत्रीपूर्ण भगिमा से स्नेहपूर्ण व्यवहार करना चाहिए।

(7) सर्वेक्षक कुछ सीखन के लिए सूचक क पास जाता है। उसे सच्चे अर्थो म अपने को शिष्य समझना चाहिए।

(8) सूचक की हर परम्परा बात एव व्यवहार आदि के प्रति सर्वेक्षक का सहज प्रशसात्मक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए तथा ऐसा व्यवहार करना चाहिए

कि सूचक को भी इस दृष्टिकोण का पता चल जाए।

(9) यदि सूचक से कोई गलती हो जाय तो ऐसा रुख अपनाना चाहिए या ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे उसे ग्लानि, संकोच आदि न हो, और उसे लगे कि सर्वेक्षक यह कहना चाहता है कि कोई बात नहीं, ऐसी गलतियाँ तो हो ही जाती है। या ऐसी गलती देखकर भी नजरन्दाज कर देना चाहिए ताकि सूचक को लगे कि सर्वेक्षक ने देखा नहीं या ध्यान नहीं दिया, ताकि उसमें लज्जा, संकोच आदि के भाव न आएँ।

(10) सूचक के साथ जब तक भी सर्वेक्षक रहे उसे प्रसन्नचित्त रहना चाहिए।

(11) यदि किसी प्रकार यह पता चल जाय कि किसी कारण सूचक कुछ दुखी है तो ऐसी स्थिति में उस समय उससे सामग्री लेने का प्रयास न कर उसके लिए फिर कभी जाना चाहिए। यदि किसी प्रकार संभव हो तो ऐसी स्थिति में सहानुभूति के भाव व्यक्त करना उसके समीप आने में बहुत सहायक होता है।

(12) सूचक यदि कोई बात अशुद्ध भी बतलाए तो न तो उसे टोकना चाहिए और न उससे विवाद करना चाहिए। यदि किसी बात के अशुद्ध होने का सन्देह है तो बिना उसे बताए उससे फिर एक बार घुमा फिरा कर किसी अन्य प्रसंग में वही बात पूछ लेनी चाहिए। यदि फिर भी गलती का संदेह हो तो बाद में दूसरे सूचक से पूछना चाहिए।

(13) यदि अपने से कोई गलती या अभद्रता हो जाय तो सर्वेक्षक को क्षमा याचना करनी चाहिए। नाइडा ने अपनी भूलों पर तुरत हँसने की सलाह दी है। मेरे विचार में कुछ स्थितियों में तो यह ठीक हो सकता है किंतु सभी स्थितियों में भूल करके हँसने से गलतफहमी हो सकती है।

(14) सूचक के शब्द या वाक्य दुहराने में यदि सर्वेक्षक से कोई अशुद्धि हो जाए और इस पर सूचक या अन्य लोग हँसें तो इसका बुरा न मानें, फिर से ठीक कहने का प्रयास करना चाहिए और उन लोगों के साथ अधिक से अधिक बात-चीत करनी चाहिए।

(15) सर्वेक्षक को सूचक या उस भाषा के भाषियों के सम्पर्क में अधिक से अधिक रहना चाहिए ताकि उन लोगों को आपस में बात करते सुना जा सके।

(16) सूचक से सुने गए कुछ शब्द या वाक्य यथावसर सूचक के सामने प्रयुक्त किए जाएँ तो सूचक आगे और भी तत्परता से बतलाता है क्योंकि उसे विश्वास हो जाता है कि उसकी भाषा के सम्बन्ध में जानकारी एकत्र करने वाला व्यक्ति बताई गई चीज परिश्रम से याद कर रहा है।

(17) सूचक के साथ लगातार बहुत देर तक काम करना ठीक नहीं होता। ऐसा न हो कि वह ऊब कर बतलाने में रुचि लेना छोड़ दे। नाइडा ने 45 मिनट को सामान्यतः ठीक समय माना है। मेरे विचार में ऐसा कोई नियम बनाना कदा-

चित वहुत व्यावहारिक नही। वस्तुत समय का निधारण सूचक की प्रकृति (कम बोलन वाला या बातूनी), उसके पास कितना समय है उसकी उम्र (मेरा अनुभव यह रहा है कि अधेड या कुछ बूढे देर तक बिना ऊबे बतलात रहत ह, और 18 20 वष की उम्र वाले सबस जल्दी ऊब जाते है) तथा उसके स्वास्थ्य आदि के आधार पर भाषा सर्वेक्षक स्वय कर सकता है।

(18) सूचक से एक ही बात बार-बार दुहराने को नही कहना चाहिए। इससे वह ऊब सकता है। यदि दो-तीन बार के बाद भी उसी का दुहराने की आवश्यकता है, तो ऐसा बाद म किसी और प्रसग मे करना अधिक उचित होता है।

(19) एसा क्यो' या इस प्रकार के प्रश्न पूछना उचित नही। यदि सूचक जानता है तो बतला देगा, और यदि नही जानता ह तो यह सोचकर कि उसे अपनी भाषा के बारे म नही मालूम है झेप सकता है और आगे सर्वेक्षक की सहायता करने से कतरा सकता है। सूचक ऐसी स्थिति मे यह सोचकर भी हीन ग्रंथि का अनुभव करता है कि सर्वेक्षक उसके बारे म क्या सोचेगा कि इसे अपनी भाषा के बारे म इतनी सी बात भी नही मालूम है।

(20) नाइडा ने लिखा है कि एक बार कोई सर्वेक्षक अँगुली से इशारा करके विभिन्न वस्तुओ के नाम पूछता रहा, और सूचक हर बार एक ही उत्तर देता रहा। हुआ यह कि हर बार सूचक यह समझता था कि सर्वेक्षक अँगुली का नाम पूछ रहा है और वह वही बताता रहा। इस प्रकार जब एक ही उत्तर बार-बार मिले तो ऐसी गलतफहमी का अनुमान लगा लेना चाहिए और इससे बचन के लिए वस्तु को छुआ जा सकता है या और तरीके अपनाये जा सकत है।

(21) नाम जानने के लिए सूचक की वस्तुओ को देखने मे, अपनी वस्तुओ को दिखाना बहुत सहायक होता है। इसका आशय यह भी हुआ कि सर्वेक्षक भी अपने साथ कुछ वस्तुएँ ले जाय, और अच्छा हो कि वह पहले अपनी वस्तुएँ दिखाए।

(22) अपनी वस्तुएँ दिखाते समय सर्वेक्षक को सतर्कता के साथ सूचक के शब्दो को सुनना चाहिए। निश्चित रूप से वह 'यह क्या है या 'इसका क्या नाम है' या यह किस काम आती है' का समानार्थी कोई शब्द या वाक्य प्रयुक्त करेगा। इस प्रकार के प्रश्नो के लिए उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दो या वाक्यो को जान लेने पर उनकी वस्तुओ के नाम तथा काम आदि पूछने म सर्वेक्षक को आसानी रहेगी।

(23) इस सम्बन्ध मे एक यह बात भी ध्यान देने की है कि यदि सूचक से सुनकर उसी रूप मे प्रश्न किया जाय और सूचक एक शब्द न कहकर एक या कई वाक्य कह, या देर तक बोलता रहे, तो उसका आशय यह समझना चाहिए कि उस प्रश्न का अथ 'इसका क्या नाम है न होकर यह किस काम आता है' है।

(24) अपनी वस्तुएँ दिखाते समय उनके नाम तथा काम आदि के बारे में कुछ कहते रहना चाहिए यद्यपि यह निश्चित है कि सूचक कुछ नहीं समझेगा। इससे लाभ यह होगा कि अपनी वस्तुएँ दिखाते समय वह भी उनके बारे में कुछ कहना चाहेगा जिससे उसकी भाषा को सुनने और कुछ प्रारम्भिक बातों को पकड़ने का अवसर मिलेगा।

(25) सूचक की संस्कृति एवं उसके अंधविश्वास आदि को ध्यान में रखते हुए उन वस्तुओं के नाम प्रायः नहीं पूछने चाहिए, जिन्हें बताने में सूचक को किसी भी कारण संकोच हो। उदाहरण के लिए, अनेक पिछड़ी जातियों के आदिवासी अपना नाम रात में साँप बिच्छू के नाम तथा शैतान भूत आदि तथाकथित अमांगलिक शक्तियों आदि के नाम लेना नहीं चाहते। आदिम जातियों में कुछ शब्द टैबू होते हैं। यदि उनकी जानकारी हो तो उन्हें भी नहीं पूछना चाहिए।

(26) सूचक की चीजें देखते समय उन चीजों के बारे में, उसके न समझने के बावजूद कुछ कहते और पूछते रहना चाहिए जिससे वह स्पष्ट समझ जाए कि उन वस्तुओं के बारे में सर्वेक्षक जानना-सुनना चाहता है। इसका परिणाम यह होगा कि वह हर वस्तु को दिखाने के समय उसके नाम-काम के बारे में कुछ कहता चलेगा जिससे अनेक वस्तुओं के नाम जानने तथा सूचक की भाषा समझने में मदद मिलेगी।

(27) अनुसंधाता को सूचक की वस्तुओं के प्रति प्रशंसात्मक भाव व्यक्त करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि लोभ या उस वस्तु को लेने की गंध न आने पाए।

(28) सूचक की सभी वस्तुओं के सम्बन्ध में सर्वेक्षक को सहज जिज्ञासा का भाव प्रदर्शित करना चाहिए।

(29) ऊपर 'यह क्या है' का समानार्थी शब्द या वाक्य जानने के लिए कहा जा चुका है। वस्तुतः सर्वेक्षक के लिए सूचक की भाषा के तीन वाक्य जानने बहुत आवश्यक हैं 'वह क्या है', 'वह किसका है' 'वह क्या कर रहा है'। इनमें प्रथम से अनेक संज्ञा शब्दों, दूसरे से सर्वनामों के सम्बन्ध कारक के रूपों तथा तीसरे से अनेक धातुओं की जानकारी हो जाती है।

(30) भाषा एवं वक्ता से सम्बद्ध विभिन्न प्रकार की जानकारी के लिए विभिन्न विषयों एवं अवसरों पर तथा विभिन्न वर्गों, जातियों, धर्मों और स्तरों के लोगों के बीच बातें सुननी चाहिए। इससे उस भाषा के विभिन्न स्तरों के शब्द आदि समझने में आसानी होगी।

(31) काम के बाद समय मिलते ही सामग्री का विश्लेषण आरम्भ कर देना चाहिए। इससे आगे के काम में मदद मिलती है तथा जानी गई बातों के भूलने का भय नहीं रहता और वे याद होती चलती हैं।

उपर्युक्त पद्धति से किसी भाषा का अलिखित शब्द भंडार तथा उससे

सम्वद्ध अन्य बातें एकत्र की जा सकती हैं, किन्तु इसमे जल्दी नही करनी चाहिए। ध्वनि, रूप, तथा वाक्य नियम विषय सामग्री अपेक्षाकृत जल्द एकत्र की जा सकती है, किन्तु किसी भाषा की पूरी या पर्याप्त शब्दावली एकत्र करने के लिए कई वर्षों का समय चाहिए क्योकि इसके लिए सम्वद्ध पूरे प्रदेश के सभी धर्मों, जातियो, व्यवसायियो, स्तरो एव अवस्था के सूचको से सामग्री लेनी आवश्यक होती है।

5
शब्दरचनाविज्ञान

शब्दों के अध्ययन के प्रसग म स्वभावत हमारा ध्यान सवप्रथम शब्दों की रचना पर जाता है। इसीलिए सबसे पहले शब्दविज्ञान की एक शाखा के रूप मे शब्दरचनाविज्ञान को लिया जा रहा है। जिस प्रकार भाषाविज्ञान म भाषा का अध्ययन किया जाता है, या शब्दविज्ञान मे शब्द का अध्ययन किया जाता है, उसी तरह शब्दरचनाविज्ञान म शब्दा की रचना का अध्ययन किया जाता है।

जैसा कि पीछे सकेत किया जा चुका है रचना की दृष्टि से शब्द दो प्रकार के होते ह। एक को 'रूढ' कहते है तथा दूसरे को 'यौगिक'। कहना न होगा कि रचना की दृष्टि से यौगिक शब्द ही विचारणीय है। रूढ शब्द मूल होते है अत उनकी रचना का प्रश्न नही उठता। विभिन्न भाषाओ मे यौगिक शब्दो की रचना मुख्यत निम्नाकित ढग से की जाती है

(क) उपसग या पूवप्रत्यय के योग से—उपसग शब्द के पहले जोडे जात ह। जसे क (कपूत) स (सपूत) प्र (प्रयत्न), ला (लावारिस), दुर (दुराग्रह) आदि।

(ख) मध्यसग या मध्यप्रत्यय के योग से—हिदी मे इसका प्रयोग नही मिलता। मुडा भाषा म दल=मारना, दपल=परस्पर या एक दूसरे को मारना। यहा 'प' को दल के मध्य रख दिया गया है अत इसे मध्यसग या मध्य प्रत्यय कहत है। मध्यसग का प्रयोग कुछ ही भाषाओ म मिलता है।

(ग) प्रत्यय या परप्रत्यय के योग से—भाषा म इसके योग से सर्वाधिक शब्दो का निर्माण होता है। जसे ता (सुदरता), आई (बडाई), त्व (धनत्व), ई (क्रोधी), औती (कटौती) आदि।

(घ) एक से अधिक शब्दों के योग से—इस तरह बने शब्द को हिन्दी आदि बहुत-सी भाषाओ मे 'समस्त शब्द' कहते हैं। इसम दो या अधिक शब्दो को एक म मिलाकर रखते हैं घोडागाडी, डाकखाना रामकहानी रामानुजाचाय (राम+अनुज+आचाय), सुखदु खानुभूति (सुख+दुख+अनुभूति), टॉय-टॉय फिस। सस्कृत मे एसे शब्द बहुत बडे-बडे भी बना करते थे। प्राय सभी भारतीय भाषाओ की व्याकरण की पुस्तको म समास प्रकरण म इसका विस्तृत विवरण दिया रहता है। विश्व की सभी भाषाओ म इस प्रकार शब्द नही बनते।

सामान्यत दो शब्दों के ही समस्त शब्द बनते है। एक या दूसरे या दोनो शब्दो की प्रधानता के आधार पर समस्त शब्दो के संस्कृत व्याकरण म चार भेद किये गए है अव्ययीभाव (पहला शब्द प्रमुख हो, जस हरघडी), तत्पुरुष (दूसरा प्रधान, जैस दशनिमाला), द्वन्द्व (दोनो प्रधान, जस गाय बल), बहुव्रीहि (कोई प्रधान न हो, जसे नीलकठ)।

दोनो शब्दो को जोडने म कभी तो किसी भी प्रकार का परिवतन नहीं होता (जसे घोडागाडी हाथीखाना, करोडपति) और कभी बीच म कोई नई ध्वनि आ जाती है। (जसे अधच्छटा)। अधिकतर ऐसा होता है कि न दोनो शब्द ज्यो के त्यो रहते हैं, और न बीच म कोई नई ध्वनि आ जाती है, बल्कि दोनो शब्दो के मिलन के स्थान पर ध्वनिया एक-दूसरे से प्रभावित होकर परिवर्तित हो जाती है। जैसे अति+अत=अत्यत, पर+उपकार=परोपकार। आगे शब्दध्वनिविज्ञान अध्याय मे इन पर सक्षेप म विचार किया गया है।

समस्त शब्दो के दोनो ही सदस्य कभी तो साथक होते हैं घुडदौड, कथाकार, पुस्तकालय, सवाददाता, ऐसा वसा जहाँ तहा, कभी एक साथक होता है और एक निरथक तथा निरथक शब्द प्राय साथक की सानुप्रासिक पुनरुक्ति होता है ठीक ठाक भोला भाला पूछना ताछना, औन पौन, होना हवाना, चाल-ढाल, आमने सामन, आस पास। निरथक शब्द कभी तो पहले आता है (औन-पौने, आमने-सामन) और कभी बाद म (धोना धाना, ठीक-ठाक, पूछताछ)। कभी-कभी दोनो ही शब्द निरथक होते है, किन्तु आश्चय है कि दोनो मिलकर साथक हो जाते है हट्टा कट्टा, टीम-टाम, अल्लम गल्लम, अट-सट, अटग-सटर, गिट-पिट, मिट्टी पिट्टी। कभी कभी तीन भी—आय बाय शाँय, टाय टाँय फिस। यो पुनरुक्ति पूण भी हो सकती है अच्छे-अच्छे कौडी कौडी, दाना दाना अपूण भी चौडा चकला, बीच-बचाव।

कभी-कभी एक ही अथ के दो शब्द साथ आ जाते हैं मान सम्मान, लाज-शम हाट-बाजार सौदा-सुल्फ, समझना-बूझना, भरा पूरा, बनिया बक्काल, लाज शम, कागज-पत्तर। कभी अथ एक न होने पर भी काफी समीपता रहती है घर-द्वार, खलना-कूदना, लूला लँगडा, टूटा फूटा, जोर-शोर। कभी कभी शब्द भिन्नार्थी या विरोधी भी होते है रात दिन, साझ सवेरे, सोना जागना, खाना पीना नाचना गाना, पढना लिखना।

कभी कभी प्रति ध्वनि शब्द भी साथ आते है घोडा-वोडा, पानी-सानी, चाय चूय चाय शाय।

कभी कभी दो शब्दो के कुछ कुछ भाग लेकर भी शब्द बनाए जाते है मोटल (मोटर+होटल), ब्रच (ब्रेकफास्ट+लच), टिल्क (टी+मिल्क)।

(ङ) कई शब्दो की प्रारम्भिक ध्वनियो से—तत्त्वत यह भी घ मे ही आ सकता है क्योकि इसमे भी किसी न किसी रूप मे कई शब्दो का प्रयोग होता है, किन्तु जोडने की पद्धति भिन्न होने के कारण इसे अलग स्थान दिया जा रहा

विचारणीय तो किसी भाषा या सभी भाषाओ के शब्द है, किन्तु किसी भी भाषा के सारे शब्दो के सम्बन्ध म यह जान पाना कि मूलत व कैसे बने हैं, कठिन ही नही, असम्भव सा है। वस्तुत यह प्रश्न बहुत कुछ भाषा की उत्पत्ति से सम्बद्ध है। ससार की भाषाओ मे अनेकानेक आधारो पर शब्द बने ह, जिनमे कुछ निम्नाकित हैं —

(1) **अधविश्वासो के आधार पर**—भाषाओ म कुछ शब्द अधविश्वास के आधार पर बन जाते है। ऐसे शब्द उस समय बहुत अधिक बनते रहे होगे जब विश्व के लोग बौद्धिक दृष्टि से बहुत अविकसित रह होग, और उनमे अधविश्वास बहुत अधिक रहा होगा। शिक्षा तथा बौद्धिक विकास एव ज्ञान विज्ञान के प्रचार आदि के कारण धीरे-धीरे ऐसे शब्दो का बनना कम और फिर बन्द हो गया किन्तु ऐसे बहुत से शब्द भाषाओ मे अब भी चल रहे है, जो मूलत अधविश्वास के आधार पर बने है। उदाहरणार्थ —

चक्षुश्रवा=सप (जो आँख से सुन वस्तुत साँप आख स नही सुनता, यह एक अधविश्वास मात्र है)।

सुधाकर=चाद (अमृत का भण्डार। यह अधविश्वास रहा है कि चन्द्रमा स अमत द्रवित होता है। कदाचित् शीतल चादनी के कारण यह अधविश्वास चला होगा। सुधानिधि, सुधाधर, सुधाधाम, सुधामयूख, सुधायोनि, सुधारश्मि सुधावर्षी, सुधावास, अमताशु, अमृतकर, पीयूषरुचि आदि नाम भी इसी आधार पर हैं)।

मृगाक=चाद (जिसके अक मे मग हो। यह भी अधविश्वास है। मगधर, हरिणाक आदि शब्द भी इसी आधार पर बन है)।

एकाक्ष=कौआ (एक आख का। विश्वास रहा है कि कौए की एक ही आख हाती है, वही दाना गोलको मे आती जाती है)। 'काकाक्षिगोलक न्याय भी इसी से सम्बद्ध है।

मेघसार=कपूर (विश्वास रहा है कि स्वाती की बूद केले म पडकर कपूर बनती है। घनसार नाम भी इसी आधार पर है।)

काकसुता=कोयल (अधविश्वास है कि यह कौए की लडकी होती है। यह भी कहते हैं कि कौए अपने अण्डे कोयल के घोसले मे रख देता है।)

(2) **व्यक्तिनाम के आधार पर**—व्यक्तियो के नाम के आधार पर भी बहुत स शब्द बन जाते हैं। जसे मार्क्सवाद, गाधीवाद, बौद्ध (बुद्ध), जन (जिन) माहमडेन (मोहम्मद), मसराइज्ड (मसर नाम के जुलाहे के नाम पर, जिसन कपडे मसराइज करने की पद्धति निकाली) एटलस (एक दैत्य का नाम। मरकेटर प्रथम एटलसकार थे। उन्होंने अपने एटलस के प्रारम्भ में इस दैत्य का चित्र दिया था, अत भूगोल चित्र-पुस्तिका का नाम ही 'एटलस पड गया), तथा बाईकॉट

है। भाषाओं में इस प्रकार की प्रवृत्ति उपयुक्त अन्यों की भाँति न तो बहुत पुरानी है और न बहुत अधिक एक दो उदाहरणों को छोड़ शेष उदाहरण प्रायः अत्याधुनिक काल के हैं। इस नवीन प्रवृत्ति का कारण यह है कि आजकल कभी-कभी काफी शब्दों का एक साथ रखकर नाम (संस्था, व्यक्ति आदि के) के रूप में प्रयुक्त करना पड़ता है और बहुत बड़ा नाम बार-बार लेना असुविधाजनक होता है। इसमें समय और शक्ति दोनों का अपव्यय होता है। इसीलिए 'मोहनदास करमचन्द गाँधी' के स्थान पर मो० क० गाँधी या एम० के० गाँधी कहा जाता है। एच० जी० वेल्ज, जे० बी० कृपलानी, जी० बी० शा आदि भी ऐसे ही उदाहरण। ऐसे उदाहरणों में तो केवल प्रारम्भिक शब्द या शब्दों की आदि ध्वनि (या अक्षर) ली जाती है, अंतिम शब्द प्रायः ज्यों-का-त्यों रहता है। साथ ही ये सब मिलकर एक शब्द नहीं बनाते। इनके विपरीत ऐसे नाम भी मिलते हैं, जिनमें सभी शब्दों की प्रथम ध्वनि लेकर उन्हें मिलाकर एक शब्द बना लेते हैं। उदाहरण के लिए हिन्दी में 1966 में एक नया शब्द चला—'संविद'। यह शब्द 'संयुक्त विधायक दल' के स वि द के योग से बना है। इसी प्रकार नाटो=नॉर्थ अटलांटिक ट्रीटी ऑर्गनाइजेशन (North Atlantic Treaty Organisation), इप्टा=इंडियन पीपुल थिएटर असोसिएशन (Indian People Theatre Association), यूनेस्को=यूनाइटेड नेशन्स एज्यूकेशनल, साइंटिफिक एंड कल्चरल ऑर्गनाइजेशन (United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation), राडार=रेडियो डिटेक्शन एंड रेंजिंग (Radio Detection and Ranging) आदि। मध्य प्रदेश में एक स्टेशन और नगर का नाम है नेपा। यह नाम वहाँ की कागज मिल के नाम (National News Print Mill Limited) से 'ने' 'प' के आधार पर 'आ' बोलने की सुविधा के लिए जोड़कर बना दिया गया है। 'मिग' (जहाज का नाम) अपने बनाने वालों—मिकोयान (Mikoyan) तथा गुरेविच (Gurevitch)—के नाम के मि और 'ग' का योग है। भारत की उत्तरी-पूर्वी सीमा के प्रदेशों के लिए इसी प्रकार नेफा (North East Frontier Agency) नाम प्रचलित हुआ, जिसे हिन्दी में उपूसी (उत्तरी पूर्वी सीमा) कहा गया। ससोपा (संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी), जीप (Vehicle for General Purpose=G P) नकेनवाद का नकेन (नलिनविलोचन शर्मा+केशरी कुमार+नरेश) आदि भी इसी प्रकार के शब्द हैं।

(च) पूरे नाम का एक भाग—कभी-कभी पूरे शब्द का एक भाग ही पूरे का स्थानापन्न शब्द बन जाता है। उदाहरण के लिए प्रिंसिपल टीचर=प्रिंसिपल, हस्तिन मृग=हस्तिन्, बाइसाइकिल=बाइक, साइकिल मोटर कार=कार, जिनरिक्शा=रिक्शा साइकिल रिक्शा=रिक्शा। यह एक भाग आवश्यक नहीं कि यौगिक हो।

यहाँ तक हम देख रहे थे कि यौगिक शब्दों की रचना कैसे होती है। इससे हटकर भी शब्दों के बनने पर विचार किया जा सकता है। इस दृष्टि से

विचारणीय तो किसी भाषा या सभी भाषाओ के शब्द हैं, किन्तु किसी भी भाषा के सारे शब्दो के सम्बन्ध म यह जान पाना कि मूलत व कसे बने है, कठिन ही नहीं, असम्भव सा है। वस्तुत यह प्रश्न बहुत कुछ भाषा की उत्पत्ति से सम्बद्ध है। ससार की भाषाओ मे अनेकानेक आधारो पर शब्द बने ह, जिनमे कुछ निम्नाकित हैं —

(1) **अधविश्वासों के आधार पर**—भाषाओ मे कुछ शब्द अधविश्वास के आधार पर बन जाते हैं। ऐसे शब्द उस समय बहुत अधिक बनते रहे होगे जब विश्व के लोग बौद्धिक दृष्टि से बहुत अविकसित रहे होगे, और उनमे अध-विश्वास बहुत अधिक रहा होगा। शिक्षा तथा बौद्धिक विकास एव ज्ञान-विज्ञान के प्रचार आदि के कारण धीरे-धीरे ऐसे शब्दो का बनना कम और फिर बन्द हो गया किन्तु ऐसे बहुत से शब्द भाषाओ मे अब भी चल रहे हैं, जो मूलत अधविश्वास के आधार पर बन है। उदाहरणाय —

चक्षुश्रवा=सप (जो आंख से सुने, वस्तुत साप आख से नही सुनता, यह एक अधविश्वास मात्र है)।

सुधाकर=चाद (अमृत का भण्डार। यह अधविश्वास रहा है कि चन्द्रमा स अमत द्रवित होता है। कदाचित् शीतल चादनी के कारण यह अधविश्वास चला होगा। सुधानिधि, सुधाधर, सुधाधाम, सुधामयूख, सुधायोनि, सुधारश्मि सुधावर्षी, सुधावास, अमताशु, अमृतकर, पीयूषरुचि आदि नाम भी इसी आधार पर हैं)।

मृगाक=चाद (जिसके अक मे मृग हो। यह भी अधविश्वास है। मगधर, हरिणाक आदि शब्द भी इसी आधार पर बने हैं)।

एकाक्ष=कौआ (एक आख वा। विश्वास रहा है कि कौए की एक ही आंख होती है, वही दोना गोलको म आती जाती है)। 'काकाक्षिगोलक न्याय' भी इसी से सम्बद्ध है।

मेघसार=कपूर (विश्वास रहा है कि स्वाती की बूद केले मे पडकर कपूर बनती है। घनसार नाम भी इसी आधार पर है।)

काकसुता=कोयल (अधविश्वास है कि यह कौए की लडकी होती है। यह भी कहते हैं कि कौए अपने अण्डे कोयल के घोसले मे रख दता है।)

(2) **व्यक्तिनाम के आधार पर**—व्यक्तियो के नाम के आधार पर भी बहुत से शब्द बन जाते हैं। जैसे मार्क्सवाद, गाधीवाद, बौद्ध (बुद्ध), जैन (जिन), मोहमडेन (मोहम्मद), मसराइज्ड (मसर नाम के जुलाहे के नाम पर, जिसने कपडे मसराइज करने की पद्धति निकाली) एटलस (एक दत्य का नाम। मरकेटर प्रथम एटलसकार थे। उन्होने अपन एटलस के प्रारम्भ मे इस दत्य का चित्र दिया था, अत भूगोल चित्र-पुस्तिका का नाम ही 'एटलस' पड गया), तथा बाईकॉट

(इग्लैंड म एक कारिंदा जिसना बाईकॉट प्रजा न किया) आदि।

(3) स्थान के नाम के आधार पर—जैसे सुरती (पुतगाली पहल-पहल भारत म तवाकू ले आए और इसका केन्द्र 'सूरत' नगर में बनाया। वहा म यह चारा आर फैली। अत भोजपुरी आदि कई बोलियो में 'तवाकू' के स्थान पर इस 'सुरती' कहते है बनारसी (ठग, घूत), लखनौवा (छला शौकीन), वलियाटिक (मूख) शिकारपुरी (मूख), चीनी (मूलत पक्की चीनी कदाचित चीन से आई थी), मिश्री (मिस्री। मिस्र से आन के कारण), जापानी (सस्ता तथा कम टिकाऊ), सतना (मूलत दिल्ली म ईंट चुनन के काम आने वाले चूने का सतना कहते है क्योंकि वह सतना नामक स्थान से आता है), बदरपुर (दिल्ली म विशेष प्रकार के लाल पाउडर का कहते हैं जा बदरपुर स आता है), मकराना (मकराना नामक स्थान स आनेवाला पत्थर), कैकेयी (केकय स), सडविच (इसी नाम की स्टेट के स्वामी ने सवप्रथम इसका प्रयोग किया अत यह नाम पड़ा) आदि अय उदाहरण हैं। कठस्थानीय आभूषण 'कठा' है तो अगुष्ठ (मूलत उँगली) स्थानीय 'अँगूठी।

(4) वतनी के आधार पर—इसके आधार पर शब्दा का बनना अपवाद है। अब तक मुझे एक ही श द ऐसा मिला है। भौंरे को सस्कृत मे 'भ्रमर' कहत हैं। इसम दो 'र' के आधार पर सस्कृत म इसके लिए 'द्विरेफ' (जिसमे दो र हो) शब्द का प्रयोग मिलता है।

(5) प्रयोग के आधार पर—कुछ श द जिस वस्तु को अभिहित करत हैं, उसके प्रयोग के आधार पर बन जाते हैं। जस रबर (अग्रेजी rub= रगडना, rubber जिसे रगडा जाय, मिटान के लिए) खइनी (भोजपुरी म खान की तवाकू, जो खाई जाय) सुमिरनी (जिसका प्रयाग सुमिरन म किया जाय), कतरी (जिसस कतन किया जाय) आदि।

(6) स्वरूप के आधार पर—जसे हाथी [जिसे हाथ (सूँड) हो हस्ती], करी (जिसके कर हो), द्विरद (=हाथी, जिसके दो दाँत हों, हाथी के दात खान के और दिखाने के और), केशरी (जिसके केश हो, विशेषत गदन पर), बदगोभी (जो बद हो फूलगोभी की तरह खुली नही), गाँठगोभी (जो गाँठ जसी हो) आदि। हि दी म बदगोभी को 'करमकल्ला' भी कहते हैं। यह फ़ारसी शब्द है। इसम 'करम' का अथ है सब्जी' और कल्ला का अथ है 'सिर', अर्थात बदगोभी सिर-जसी सब्जी है। अग्रेजी 'कवेज' शब्द मूलत फ़ासीसी भाषा का 'caboche' है और इसका अथ भी सिर' है। रूसी म इसे 'कपूस्ता' कहत है, उसके मूल म भी 'सिर' का भाव है। चार पर के कारण 'चौपाया' (पशु) 'चौपाई' (एक छद), और 'चारपाई' (खाट) नाम पडे हैं। 'तिपाई' भी ऐसा ही शब्द है। हाथ जैसा होन स 'हत्था' नाम है।

(7) रग के आधार पर—जैसे स्याही (जो 'स्याह' अर्थात 'काली' हो। पहल स्याही केवल काली हुआ करती थी), सब्जी (जो सब्ज अर्थात 'हरी' हो

जैसे पालक, चौलाई वदगोभी आदि), पीलिया (रोग, जिसमे शरीर पीला पड जाता है) आदि ।

(8) ध्वनि के आधार पर—इस श्रेणी के शब्दो की सख्या अच्छी खासी है। हिंदी मे भूकना खेखर (लोमडी के लिए शब्द, खे-खे करने के कारण), भापू, फटफटिया धडधड, भडभड, गडगड हडहड, चटचट। सस्कृत मे काकिल और अग्रेजी मे कुकू आदि भी इसी प्रकार के शब्द है ।

(9) दृश्य के आधार पर—जगमग, बगबग, दकदक। इस श्रेणी मे शब्द बहुत ही कम होते है।

(10) कोई वस्तु जिससे बनी हो उसके नाम पर—इस श्रेणी के शब्द भी बहुत अधिक नही होते। गिलास [प्रारम्भ मे यह glass (=शीशा) की बनी अत यह नाम पडा], शीशा (=आईना शीशे से बनने के कारण), अग्रेजी 'आइरन (=प्रेस लाहे स बने होन स)। पेन (मूलत Penna=पख), बाइबिल (मूल अथ किताब, पहले यूनान म किताबें वृक्ष विशेष की छाल से बनती थी। जिसे 'बिब लास कहते थे) आदि कुछ शब्द ऐसे हैं।

(11) सादृश्य के आधार पर—दूसरे शब्दो या वस्तुओ के सादृश्य के आधार पर भी कभी कभी शब्द बन जाते हैं। 'अधूरा' शब्द 'आधा से 'पूरा के सादृश्य पर बना है। छठा शब्द के स्थान पर कुछ लोग छठवा' का प्रयोग करने लगे हैं जो स्पष्ट ही 'छ' से पाँचवा सातवा के सादृश्य पर बना है। ऐसे ही बराती' क सादृश्य पर 'घर से 'घराती', तथा गुलाम' के आधार पर 'तीन से तिलाम (गुलाम का गुलाम) आदि। इसी प्रकार वस्तुओ का सादृश्य भी कभी-कभी नये शब्द बनाने के लिए आधार का काम करता है। 'पानी की रवानी', जैसा होने के कारण एक कपडा 'आब ए-रवा' कहलाता है तथा फूल जैसा होने के कारण कान के आभूषण को 'कणफूल' कहते है। 'आकाशगगा भी दृश्यात्मक सादृश्य के आधार पर ही बना है।

(12) कार्य के आधार पर—इस आधार पर सभी भाषाओ मे काफी शब्द बन होते हैं। नेतृत्व करने के कारण आख सस्कृत मे नेत्र' कहलाई। 'प्रभा' करने के कारण सूर्य 'प्रभाकर या विभाकर' है। 'दिनकर भी ऐसा ही नाम है। 'क्षपाकर' का अर्थ है चन्द्रमा। 'क्षपा' रात है जिसे करने वाला 'क्षपाकर'। 'कलछी या 'करछी' मूलत 'कररक्षिणी' है। हाथ की रक्षा करन के कारण उस यह नाम दिया गया। 'तृ अर्थात् चुभन के कारण घास को सस्कृत मे तृण कहा गया। अगरखा (अग की रक्षा करने वाला) अजगर (बकरी का निगलन वाला), कठफोडवा (काठ फोडने से), नग (गमन न करने वाला=पहाड), खग (आकाश मे जाने वाला) आदि भी ऐसे ही शब्द है।

(13) बनाने की प्रक्रिया के आधार पर—उदाहरण के लिए जेव' का मूल अर्थ है जो काटकर बनाया गया हो। ऐसे ही 'टोस्ट का अर्थ सकना है। अत सेंक कर बनाए जानेवाले को भी 'टोस्ट कहते है। ग्रथ का मूल अर्थ है।

हुआ' या 'ग्रथित'। पहले भोजपत्र को धागे से सिलकर ग्रंथ बनाते थे।

(14) स्थिति के आधार पर—नदियों के किनारे स्थित होने से तीर्थों का 'तीरस्थ' कहा गया। 'तीर्थ' उसी का विकास है। 'तटस्थ' भी ऐसा ही शब्द है। जो धार में न कूदकर तट पर हो। 'ओवरकोट' तथा 'वेस्टकोट' भी इसी श्रेणी के हैं।

(15) जन्म से—पंकज, जलज, स्वेदज, अंडज, उद्भिज, कार्तिकेय, अग्रिज, अन्त्यज, द्विज (जो दो बार जन्मे—पक्षी, एक बार अंडा फिर बच्चा, चन्द्रमा, प्रथम तीन वर्ण या ब्राह्मण। ये एक बार जन्मते हैं, फिर यज्ञोपवीत के समय दूसरा जन्म माना जाता है।)

(16) संख्या के आधार पर—चार सौ बीस, सठियाना (साठ से), दस नंबरी पसा, सतरा बहतरा होना (सत्तर बहत्तर)।

(17) कहानी के आधार पर—कभी-कभी किसी कहानी के आधार पर शब्द बन जाते हैं। उदाहरण के लिए 'मक्खीचूस' ऐसा ही शब्द है। कहते हैं कि कोई व्यक्ति घी लेकर जा रहा था। उसके घी में मक्खी पड़ गई। वह मक्खी को घी से निकालकर चूसने लगा ताकि जो घी उसके पंख आदि में लग गया है, वह व्यर्थ में जाया न हो। इसी आधार पर 'कंजूस' के लिए 'मक्खीचूस' शब्द बन पड़ा।

इस तरह शब्दों की रचना कई प्रकार से तथा कई आधारों पर की जाती है। यों पुराने शब्दों से नए शब्दों की रचना चार प्रकार से होती है —

(क) योजन से—अर्थात् दो या अधिक शब्द (डाकघर, समाजभाषाविज्ञान) उपसर्ग (अहित, लापता) या प्रत्यय (समता, भलाई) जोड़कर।

(ख) पश्चरचना (Backformation) से—'सुर' शब्द पहले नहीं था। 'असुर' में से 'अ' निकालकर 'सुर' बनाया गया। ऐसे ही अब 'श्लील' का प्रयोग चल पड़ा है जो 'अश्लील' में से 'अ' निकालने से बना है। 'डालना' से 'डलना' भी यही है। पहले 'पड़ना' चलता था।

(ग) संक्षेपण से—1 एकाधिक शब्दों के आदि अक्षरों को जोड़कर। जैसे भाजोद (भारतीय लोक दल) आसुका (आंतरिक सुरक्षा कानून), भाक्राद (भारतीय क्रांति दल), संविद (संयुक्त विधायक दल), सुदी (शुक्ल दिवस), वदी (बहुल-कृष्ण दिवस)। राडार, न्वॉइडा, यूनेस्को आदि भी ऐसे ही शब्द हैं। अंग्रेजी में इस शब्दों को acronym कहते हैं। 2 आदि-अंत जोड़कर मोटल (मोटर+होटेल)। 3 कतन से—अर्थात् एक भाग काटकर। जैसे 'हस्तिनापुर से हस्ती', 'रेलवे स्टेशन से 'स्टेशन', रिक्शा' से 'रिक्शा', 'कैपिटल सिटी से 'कैपिटल', प्रिंसिपल टीचर से 'प्रिंसिपल तथा 'मोटरकार' से 'कार' या मोटर' आदि।

(घ) किसी शब्द के आधार पर—जैसे ग्रीक Chaos से गैस।

6
शब्दार्थविज्ञान

'अर्थविज्ञान' भाषा के अर्थ पक्ष का अध्ययन करता है तो 'शब्दार्थविज्ञान' भाषा मे प्रयुक्त शब्दो के अर्थपक्ष के अध्ययन तक सीमित होता है। उसमे पद, पदबंध वाक्य आदि के अर्थ का अध्ययन नही आता।

ध्वनि शब्द का शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा है। शब्द की सार्थकता इस अर्थ के ही प्रेषण मे है। वस्तुत अर्थ के प्रेषण के लिए ही भाषा का प्रयोग होता है। इस तरह अर्थ भाषा की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इकाई है।

शब्द और अर्थ का सम्बन्ध कुछ शब्दो (जैसे ध्वन्यात्मक आदि) को छोडकर यादृच्छिक है। घ, ओ, ड्, आ के मिले रूप से 'घोडा' (ध्वनि) का 'घोडे के अर्थ' से सहजात सम्बन्ध नही है। यह सम्बन्ध केवल समाज का माना हुआ है। यदि समाज यह तै कर ले कि कल से 'क' का 'घोडा' के लिए प्रयोग होगा तो कल से 'क' का अर्थ घोडा माना जाने लगेगा। इसी प्रकार यदि सब लोग स्वीकार कर लें, तो कल से 'घोडा' शब्द का अर्थ फूल, आदमी, घर या कुछ भी हो सकता है। प्राचीन भाषाशास्त्रियो ने शब्द और अर्थ को एक माना है एकस्यैवात्मनो भेदौ शब्दार्थावपृथक स्थितौ (वाक्यपदीय 2-31)। तुलसी ने भी कहा है गिरा अर्थ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न। कालिदास भी कहते हैं वागर्थाविवसम्पृक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये (रघुवंश 1 1)।

मैं इस परपरागत मान्यता से बहुत सहमत नही हूँ। हम प्राय पाते है कि शब्द बदल जाता है किन्तु अर्थ वही रहता है (गृह घर, कृष्ण कान्ह, सपत्नी-सौत), और दूसरी ओर अर्थ बदल जाता है किन्तु शब्द ज्यो-का-त्यो रहता है (कुशल—मूल अर्थ 'कुश' उखाडने म प्रवीण, परवर्ती अर्थ दक्ष, प्रवीण—मूल अर्थ वीणा बजाने मे प्रवीण, परवर्ती अर्थ दक्ष)। दोनो एक होते तो एक के परिवर्तन से कदाचित दूसरा भी परिवर्तित हो जाता।

अर्थ है क्या और उसकी प्रतीति कैसे होती है? वस्तुत अर्थ प्रतीकात्मकता मे है। 'कलम' शब्द 'कलम' कहलाने वाली वस्तु का प्रतीक है और अर्थ है वस्तु तथा शब्द का प्रतीकात्मक सम्बन्ध। यहाँ यह बात भी सकेत करने की है कि शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टि से शब्द का वास्तविक अर्थ नही होता, अपितु उसका अर्थ केवल प्रतीकात्मक या माना हुआ होता है। अर्थ की प्रतीति वाक्य पर निर्भर करती

है।[1] इसीलिए वाक्य ही भाषा का चरम अवयव है। वाक्यों का प्रयोग करते-करते हम इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि अनेक शब्द सुनकर भी हमें अर्थ की प्रतीति होती है किन्तु मूलतः यह वाक्य पर ही आश्रित है। दूसरे शब्दों में शब्द का अर्थ प्रयोगाश्रित है। व्याकरण भी प्रयोग या प्रयोगों का ही सार होता है।

भर्तृहरि ने अर्थ निर्णय के सम्बन्ध में कहा है —

वाक्यात्प्रकरणादर्थादौचित्याद्देशकालतः
शब्दार्थाः प्रविभज्यन्ते न रूपादेव केवलात् (2 316)

अर्थात् केवल रूप जान लेने से अर्थ का पता नहीं चलता इसके लिए वाक्य (अर्थात् वाक्य में प्रयोग) प्रकरण (अर्थात् बात कहने का सन्दर्भ) अर्थ-औचित्य (अर्थात् प्रसंग में उपयुक्त अर्थ का औचित्य) देश (इसका अर्थ लोगों ने तरह-तरह से लिया है मेरे विचार में देश का अर्थ है स्थान। देश या स्थान भेद से अर्थ भेद हो जाता है। उदाहरण के लिए बनारस में 'मौसा' शब्द माँ की बहन का पति मात्र है, किन्तु हरियाना में भाई का ससुर भी मौसा है) काल (इसका अर्थ भी लोगों ने दूसरे रूप में लिया है किन्तु प्रस्तुत प्रक्रिया के सन्दर्भ में विचार में सार्थक यह है कि काल भेद से अर्थ भेद हो जाता है जैसे 'हरिजन' का अर्थ पहले 'भक्त' था अब 'अछूत' है) जानना अपेक्षित है।

इसी प्रकार तत्त्वचिंतामणि पर विचार करते हुए मथुरानाथ ने अर्थ जानने के लिए वृद्धव्यवहार आप्तवाक्य व्याकरण कोश, वाक्यशेष, विवृति सिद्धपद-सान्निध्य और उपमान का उल्लेख किया है जिनके अर्थ क्रमशः 'वृद्धों द्वारा प्रयोग' 'प्रामाणिक व्यक्तियों द्वारा प्रयोग', 'व्याकरणिक रचना का ज्ञान', कोशार्थ सम्बद्ध सन्दर्भ में अन्य शब्द तथा वाक्य 'व्याख्या' ज्ञात शब्दों के साथ शब्द का प्रायोगिक सम्बन्ध तथा उपमान द्वारा अर्थ स्पष्टीकरण है।

कहना न होगा कि उपर्युक्त सभी बातों में अर्थ को जानने का प्रमुख साधन प्रयोग ही है। अन्य जितने हैं वे भी मूलतः प्रयोग पर ही आधारित हैं। अपवाद व्याकरण है।

अर्थविज्ञान इसी अर्थ के अध्ययन का विज्ञान है। जैसा अन्यत्र संकेत किया जा चुका है, यह अध्ययन वर्णनात्मक, ऐतिहासिक तुलनात्मक तथा व्यतिरेकी हो सकता है।

अर्थ के वर्णनात्मक अध्ययन का अर्थ है किसी एक समय में किसी शब्द के अर्थ का विवेचन। ध्वनि, रूप या वाक्य की तुलना में अर्थ अधिक सूक्ष्म होता है इसी कारण इसका अध्ययन भी अधिक कठिन है जिसका परिणाम यह हुआ है कि अन्य क्षेत्रों (ध्वनि या वाक्य आदि) में वर्णनात्मक या संरचनात्मक दृष्टि से जितना काम हुआ है उतना अर्थ को लेकर नहीं हुआ है।

1 वाक्यभवमवाप्तस्य सार्थकस्यावबोधतः
सम्पद्यते शाब्दबोधो न तन्मात्रस्य बोधतः (शब्दशक्ति प्रकाशिका १२)

किसी एक काल मे किसी शब्द के कौन कौन से अर्थ है इसका पता—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है—प्रयोग से चलता है। इसका आशय यह हुआ कि भाषा के सारे प्रयोगो को एकत्र करके ही इस बात का पता लगाया जा सकता है। इस दृष्टि से अच्छे-से अच्छे कोश भी हमारी बहुत सहायता नही कर पाते।

शब्दो के अर्थ के वर्णनात्मक अध्ययन के आधार पर हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि किसी भी भाषा मे किसी एक समय मे शब्द का अर्थ मुख्यत तीन[1] प्रकार का होता है —

(क) केन्द्रीय अर्थ—यह उस शब्द का उस काल मे मूल प्रकृत या सामान्य अर्थ होता है। इसी अर्थ मे यह शब्द अधिक प्रयुक्त होता है। बच्चा, घर शाकाहारी के केन्द्रीय अर्थ मे प्रयोग हैं उसका बच्चा मर गया, उस गाँव मे सौ घर है, मैं शाकाहारी हूँ, मास और अडे नही खाता।

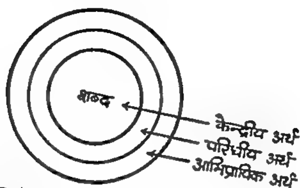
(ख) परिधीय अर्थ—परिधीय अर्थ केन्द्रीय अर्थ से ही विकसित होता है। यह किसी एक काल मे एक से अधिक भी हो सकता है। 'राम पच्चीस का हुआ तो क्या, अभी तो बच्चा है, ये बातें नही समझ सकता।' मे 'बच्चा' का अर्थ 'नासमझ' है। इसी प्रकार 'भोला भाला', 'अपरिपक्व' आदि भी इसके परिधीय अर्थ हैं। परिधीय अर्थ मे शब्द का प्रयोग प्राय केन्द्रीय अर्थ की तुलना मे कम होता है। परिधीय अर्थ के कुछ और उदाहरण हैं 'यह बात उसके मन मे घर कर गई है', 'वह तो पूरा बनिया है, एक पैसा नही दे सकता', 'क्या मुहर्रमी सूरत बना रखी है', 'भारत मे जाने कितने ऐसे हैं जिनको दोनो जून रोटी नही मिलती।'

(ग) आभिप्रायिक अर्थ—केन्द्रीय अर्थ तो सुनिश्चित अर्थ होता है और परिधीय अर्थ केन्द्रीय से ही विकसित होता है। यह भी प्राय निश्चित रहता है। किसी शब्द का आभिप्रायिक अर्थ वहाँ मिलता है जहा कोई व्यक्ति किसी ऐसे विशेष अर्थ को अभिव्यक्त करने के अभिप्राय से उस शब्द का प्रयोग करता है, जिस अर्थ मे सामान्यतया वह शब्द प्रयुक्त नही होता। शैलीकार साहित्यिकों के लेखन मे ऐसे प्रयोग कभी कभार मिल जाते हैं 'वह आदमी तो बिलकुल ही शाकाहारी है, उसके साथ लडकी भेजने मे भला क्या परेशानी हो सकती है', 'अरे भला राम क्या खाकर थानेदार बनेगा, बिलकुल ही शाकाहारी है, थानेदार का पद पा जाने से थोडे कोई थानेदार बनता है', 'आज पत्नी का पत्र मिला मगर बिलकुल ही शाकाहारी, कही भी कोई प्रेम मुहब्बत की बात नही', 'कोयला कोयला ही रहेगा चाहे सौ मन साबुन खा जाय।'

इस तरह पहले अर्थ मे शब्द का प्रयोग सर्वाधिक होता है, दूसरे मे कम और तीसरे मे बहुत कम। बहुप्रयुक्त होने पर कोई आभिप्रायिक अर्थ परिधीय बन सकता है तथा परिधीय अर्थ (यद्यपि बहुत कम) केन्द्रीय। तीनो अर्थों को चित्र

(1) यो सामाजिक अर्थ (जैसे आप मे मध्यम पुरुष के अर्थ के अतिरिक्त आदर का सामाजिक अर्थ भी है) तथा शैलीय अर्थ (जैसे 'बैठना' और 'तशरीफ रखना' मे शैलीय अर्थ का अन्तर है) आदि कुछ और अर्थ भी होते हैं।

रूप म यो दिया सकते हैं —



ध्वनि (स्वन) विज्ञान और रूपविज्ञान आदि के क्षेत्र म स्वनिम (phoneme)—सस्वन (allophone) तथा रूपिम (morpheme)—सरूप (allomorph) की बात बहुत प्रचलित है। अर्थविज्ञान म भी ऐसे विश्लेषण की पूरी गुजाइश है। अर्थिम (sememe) किसी शब्द के सारे अर्थों का योग है और सअर्थ (alloseme) विभिन्न अर्थ हैं जो अलग-अलग सन्दर्भों म आते हैं। य अलग अलग सन्दर्भ ही वितरण हैं। इस दृष्टि से किसी भी भाषा का कोई व्यवस्थित विवेचन अभी तक मेरे देखने म नहीं आया। यहाँ एक हिन्दी शब्द 'पानी' द्वारा इस बात को उन्नहृत किया जा सकता है। मान लीजिए, पानी के चार प्रयोग हमने लिए —

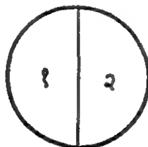
(1) आसाम का पानी अच्छा नहीं है। (जलवायु)
(2) सबके सामने उसका पानी उतार दिया। (इज्जत)
(3) पानी आया छतरी तान लो। (वर्षा)
(4) यह पेड़ पाँच पानी का है। (वर्ष)

इनम किसी मे भी पानी का सामान्य अर्थ नहीं है। पानी का सामान्य अर्थ इन अर्थों की तुलना म अधिक प्रयुक्त होता है तथा आर्थिक संरचना की दृष्टि से वही केन्द्र म है। अन्य अर्थ विशेष प्रसंग या सन्दर्भ के हैं। यदि हम थोड़ी देर के लिए मान लें कि 'पानी' शब्द के सामान्य अर्थ को छोड़कर केवल ये ही चार अर्थ हिन्दी म चलते हैं तो कहा जा सकता है कि पानी के अर्थ या अर्थिम के पाँच सअर्थ हैं। जलवायु अर्थ म वह एक प्रसंग म आता है 'इज्जत' अर्थ म दूसरे म वर्षा अर्थ म तीसरे म 'वर्ष' अर्थ चौथे म और सामान्य, मूल, प्रकृत या केन्द्रीय अर्थ म अन्यत्र। इसी प्रकार भाषा के अधिकांश शब्दों के सअर्थों तथा उनके वितरणों का पता लगाया जा सकता है।

वर्णनात्मक स्तर पर शब्द के अध्ययन की यह एक पद्धति थी। दूसरी पद्धति हो सकती है उसी अर्थ क्षेत्र के अन्य शब्दों के अर्थ के संदर्भ म शब्द के अर्थ को देखना। अर्थ इतना सूक्ष्म होता है कि कुछ अपवादों को छोड़कर उसे प्राय दूसरे

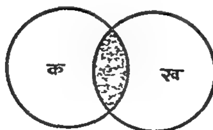
समानार्थी शब्दो के साथ अधिक अच्छी तरह समझा जा सकता है। 'प्रयोगविज्ञान' शीर्षक अध्याय मे कुछ जोडो को लेकर इसी पुस्तक मे अन्यत्र यह देखा गया है। यहा हमने देखा है कि पर्याय शब्दो मे अर्थ का सूक्ष्म अन्तर होता है। वैसे शब्दो मे एक का अर्थ दूसरे की पृष्ठभूमि मे अधिक स्पष्ट होता है एक उदाहरण लें — 'कष्ट' का अर्थ यो तो कोशो मे 'दुख' दे दिया जाता है तथा 'दुख' का 'कष्ट' किन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि इन दोनो मे किसी का भी ठीक अर्थ दूसरे के सदर्भ या दूसरे की तुलना मे ही अधिक अच्छी तरह समझा या समझाया जा सकता है। दुख या कष्ट दोनो समानार्थी-जसे हैं, किन्तु दुख मानसिक है तो कष्ट शारीरिक।

वस्तुत होता यह है कि किसी भाव या अर्थ का एक क्षेत्र होता है, और यदि उसके लिए एक से अधिक शब्दो—मान लें दो—का प्रयोग होता है तो कभी तो दोनो शब्द एक दूसरे के पूरक होते हैं, अर्थात उस अर्थ-क्षेत्र के कुछ भाग को एक व्यक्त करता है तथा शेष को दूसरा।



चित्र अ

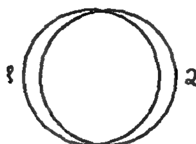
और कभी कुछ प्रयोगो मे दोनो समानार्थी होते हैं और कुछ मे भिन्न। उदाहरण के लिए इस चित्र मे काले भाग मे —



चित्र आ

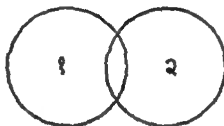
दोनों का प्रयोग हो सकता है किन्तु दानो मे भाग म एक का तथा ख म दूसरे

का । प्रयोग या अथ का यह अ तर कभी तो बहुत कम होता है —



चित्र इ

और कभी बहुत अधिक —



चित्र इ

उदाहरण के लिए 'आधार' के लिए अंग्रेजी के दो शब्द—'बेस' (base) तथा बेसिस (basis)—लें। इन दोनों के प्रामाणिक अथ या प्रयोग मे चित्र 'अ' वाली स्थिति है। बेस का प्रयोग ठोस वस्तुओं के लिए (पहाड) होता है, जबकि 'बेसिस' आलकारिक रूप से तक, आरोप, विश्वास जसे सूक्ष्म के लिए। इसी प्रकार 'चाइल्डलाइक और चाइल्डिश' भी है। पहला अच्छे अथ मे आता है, दूसरा बुरे मे। कुछ लोग कभी कभी दोनो को कुछ स दर्भों म समानार्थी जैसा प्रयोग करते हैं तो चित्र इ वाली स्थिति होती है। चित्र ई वाली स्थिति कभी नहीं होती।

उद्देश्य ध्येय की स्थिति चित्र इ जैसी है। अधिकाश प्रयोगो मे य प्राय एकार्थी-जस आते हैं कि तु सतक प्रयोगो मे उद्देश्य वह होता है जिसे पाने के लिए व्यक्ति प्रयत्नशील होता है, ध्येय वह है, जिस पर प्रयत्न के समय हमारा ध्यान रहता है। इस तरह उद्देश्य म प्रयत्न का भाव प्रमुख है तो ध्येय म प्राप्य पर ध्यान का।

चित्र अ वाली स्थिति के कुछ और उदाहरण भी लिये जा सकते हैं। रोग के लिए हि दी मे आधि और व्याधि दोना शब्द चलते हैं, किंतु दोना के अथ मे भेद है। भेद यह है कि आधि मानसिक बीमारी के लिए है तो व्याधि शारीरिक के लिए। इसी प्रकार हथियार के लिए अस्त्र और शस्त्र दो शब्द हैं। प्रथम म व

हथियार आते हैं जिन्हें फेंक कर मारते हैं जैसे तीर, दूसरे में वे हथियार आते हैं जिन्हें हाथ में पकड़े हुए मारते हैं जैसे तलवार। आविष्कार और अन्वेषण भी इसी प्रकार के हैं। आविष्कार जिसका करते हैं, उसका पहले से अस्तित्व नहीं रहता। अन्वेषण जिसका करते है, उसका अस्तित्व पहले से रहता है, अन्वेषक उसे केवल सामने ला देता है।

इस प्रकार के शब्द-वर्गों के अर्थ या अर्थ पर आधारित प्रयोग में स्पष्ट अंतर का अध्ययन तुलना के आधार पर ही अच्छी तरह किया जा सकता है।

एक शब्द के एकाधिक अर्थों के आपसी संबंध का अध्ययन भी इस वर्णनात्मक अर्थविज्ञान के अंतर्गत ही आएगा। या इसका ऐतिहासिक अध्ययन भी [illegible] है कि कैसे पानी का अर्थ इज्जत, चमक, अप आदि हो गया।

कभी-कभी कुछ भाषाओं में दुहरे प्रयोग चलते हैं। हिन्दी में [illegible] छोटा ऊँच-नीच इसी वर्ग के हैं। ऐसे प्रयोगों में प्राय [illegible] नकारात्मक या कोई भी एक भाव ही प्रमुख रहता है, [illegible] कुछ शब्दों के साथ आकर कुछ शब्द अपना अर्थ प्राय [illegible] खरी-खोटी सुनाई' में 'खरी' का भाव तो बहुत नहीं [illegible] तीक्ष्ण नहीं है, किन्तु 'उसने बहुत बुरा भला कहा' में [illegible] नहीं है। 'अगर फिर कुछ कहा-सुना तो ठीक न होगा' [illegible] ऐसी ही है। 'खंडन मंडन के अनेक प्रयोगों में 'मंडन' [illegible] है।

कुछ उपसर्ग भी अर्थ की दृष्टि से [illegible] बेरहम, बेजान में तो पूरी तरह सार्थक हैं [illegible] में 'फजूल' के अर्थ में प्रयुक्त शब्द 'बेफजूल' [illegible]

मोटर, इंजन, कमरा, रेडियो, ग्रामोफोन, लारी, बस, साईकिल, वार, आपरेशन, अस्पताल, डाक्टर, ड्रेसिंग, स्कूल, कॉलिज, मास्टर, रीडर, प्रोफेसर, फीस पट, कोट सूट, टाई, वारंट, डिप्टी कलक्टर, कलक्टर कमिश्नर, टाइप, प्रूफ, हाकी, क्रिकेट, बैडमिंटन बिस्कुट, कॉफी, टोस्ट, आइसक्रीम, रजर, टब, बम, ग्रेन, फोटो, स्केच, क्रीम, पाउडर, स्नो आदि। कुछ पुर्तगाली, फ्रांसीसी, स्पेनी तथा रूसी शब्द भी आए हैं।

किसी भाषा में इस प्रकार के विदेशी शब्द तीन रूपों में आते हैं। कुछ तो प्राय ज्यों के-त्यों आ जाते हैं पट कोट, ट्रक, स्कूल, वकील, मुख्तार। यहा प्राय इसलिए कहा गया कि सूक्ष्म दृष्टि से उच्चारण म अन्तर तो आ ही जाता है किंतु सामान्यत इस श्रेणी के शब्द मूल जैसे ही लगते हैं। दूसरे प्रकार के शब्द वे हैं जो ग्रहण करने वाली भाषा की ध्वनि-व्यवस्था के अनुकूल परिवर्तित या अनुकूलित होकर आते हैं। तिजोरी (ट्रेजरी), रपट (रिपोर्ट), अगस्त (आगस्ट) अरदली (आडरली), कुर्ता (कुर्तह) आदि। तीसरे प्रकार के शब्द अनूदित होकर आते हैं कटिबद्ध (कमरबस्ता) लालफीताशाही (redtapism), स्वर्णजयंती (golden jubilee), हीरक जयंती (diamond jubilee), दृष्टिकोण (angle of vision), प्रधानाध्यापक (headmaster), मालगाडी (goods train)।

किसी भाषा में अन्य भाषाओं से, सर्वाधिक शब्द संज्ञा के आते हैं और सबसे कम सर्वनाम। विशेषणों की संख्या संज्ञा से कम किंतु अन्यों से अधिक होती है। धातु और अव्यय सर्वनाम और विशेषण के बीच में आते हैं। हिन्दी में फारसी से आने वाले शब्दों का संख्या की दृष्टि से क्रम है संज्ञा (सर्वाधिक) विशेषण, धातु अव्यय सर्वनाम (सबसे कम)। संज्ञा के उदाहरण ऊपर आ चुके हैं। अन्यों के उदाहरण हैं आसान, बेइमान, खुश, तेज, बदनाम, बारीक, तराशना, वसूलना शर्माना खरीदना, अगर, कि, वरना, लेकिन खुद फलां। यूरोपीय भाषाओं से केवल संज्ञा शब्द ही आए हैं। विशेषण (फाइन, रफ सुपरफाइन, मसराइज्ड, डबल गोल्डन, हेड, हाफ) इने गिने हैं तथा क्रिया (फिल्माना) तो इक्की दुक्की।

भाषाओं के शब्दभंडार से कभी कभी कुछ शब्द अश्लील हो जाने से निकल जाते हैं। स्त्री पुरुष के विशेष अंगों या उनसे सम्बद्ध क्रियाओं के लिए प्रयुक्त शब्द ऐसे ही है। कभी कभी कुछ शब्द उच्च स्तर के लोगों के शब्दसमूह से ही 'निकल' या 'प्राय निकल' जाते हैं। यहां हिन्दी की तुलना में अंग्रेजी का उदाहरण सुविधाजनक हो गया। पहले लटिन और यूरिनल शब्द चलते थे। अत्यन्त प्रचलित हो जाने पर इनमें अश्लीलता की गन्ध आ गई अत 'बाथरूम' शब्द इन दोनों या दूसरे के लिए प्रयुक्त होने लगा, हालांकि इसका अर्थ स्नानघर है। धीरे-धीरे यह भी अश्लीलता की गन्ध से युक्त हो गया तो 'टवायलेट' (जिसका मूल अर्थ बालों का शृंगार करते समय कंधों पर डाला जाने वाला कपडा, शृंगार की मेज, सिंगारदान, या शृंगारघर आदि था) का प्रयोग होने लगा और अब इस

शृंखला में आने वाला नवीनतम शब्द 'क्लोकरूम' (मूल अर्थ ओवरकोट तथा हैट रखने का बाहरी कमरा या स्टेशन पर सामान रखने का कमरा) है। पता नहीं अभी और कितने श्लील शब्दों को इस परम्परा में आ-आकर अश्लील बनना है।[1]

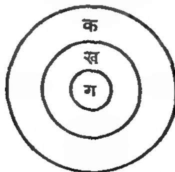
जैसा कि कहा जा चुका है कि किसी भाषा में प्रयुक्त सारे शब्दों को उस भाषा का 'शब्दभंडार' या 'शब्दसमूह' कहते हैं। प्रयोग-बाहुल्य और भाषा की विभिन्न स्तर की आवश्यकताओं के आधार पर किसी भाषा के शब्दसमूह को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है :—

(क) उच्च या बाह्य शब्दसमूह—इसमें वे शब्द आते हैं जिनका प्रयोग दैनिक व्यवहार की सामान्य भाषा में अपेक्षाकृत कम होता है। पारिभाषिक शब्दों का काफी बड़ा भाग इसी प्रकार का होता है। हिन्दी में अद्वैतवाद, विपयय नाभिकीय जैसे शब्द इसी श्रेणी के हैं।

(ख) मध्यवर्ती शब्दसमूह—इस वर्ग के शब्द 'क' की तुलना में अधिक प्रयुक्त होते हैं, साथ ही ये अपनी भाषा के अधिक आवश्यक अंग होते हैं, किंतु भाषा की मूलभूत अभिव्यक्ति के लिए ये प्रायः बहुत आवश्यक नहीं होते। सामान्य शब्दों के अल्पप्रयुक्त पर्याय, साहित्य में शैलीय सौंदर्य के काम आने वाले शब्द तथा सामान्य जीवन में नहीं, अपितु अवसर विशेष पर काम आने वाले शब्द आदि इसके अन्तर्गत आते हैं। उदाहरणार्थ हिन्दी में नीर, मनोरम, गृह, दिवस, लेखनी आदि शब्द ऐसे ही हैं।

(ग) आधारभूत शब्दसमूह—इस वर्ग के शब्द भाषा के आधार या नींव होते हैं, तथा इनका प्रयोग उपयुक्त दोनों की तुलना में बहुत अधिक होता है। हिन्दी में पहाड़, पानी, सुन्दर, घर आदि शब्द इसी श्रेणी के हैं। आधारभूत शब्दसमूह को 'बेसिक या बुनियादी शब्दावली' भी कहते हैं।

किसी भाषा के शब्दसमूह को निम्न रूप में रेखांकित किया जा सकता है—



(1) शब्दसमूह में परिवर्तन पर विस्तार से देखने के लिए प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक की 'भाषाविज्ञान' का 'शब्दविज्ञान' शीर्षक अध्याय देखा जा सकता है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि उपर्युक्त आरेख में 'ग' आधारभूत शब्दसमूह है, जो केन्द्र में है तथा 'क' एवं 'ख' से छोटा है। 'ख' मध्यवर्ती शब्दसमूह है जो 'ग' की तुलना में बाहरी है तथा उससे बड़ा भी है। 'क' उच्च या बाह्य शब्दसमूह है जो 'ग' और 'ख' दोनों की तुलना में बाहरी या ऊपरी है, साथ ही दोनों की तुलना में बड़ा भी है।

आगे चौदहवें अध्याय में 'आधारभूत शब्दावली' शीर्षक में इस पर अलग से भी विचार किया जा रहा है।

8
नामविज्ञान

'नामविज्ञान' शब्दों के अध्ययन या 'शब्दविज्ञान' की एक महत्त्वपूर्ण शाखा है जिसमें नामों का अध्ययन होता है। अंग्रेजी में इसके लिए तीन नामों (onomatology, onomasiology, onomastics) का प्रयोग होता है। नाम वह शब्द या शब्दों का समूह है जिससे किसी व्यक्ति, वस्तु या सत्ता आदि का बोध होता है। कोई आवश्यक नहीं कि व्यक्ति, स्थान या वस्तु आदि का सार्थक संबंध उनके नाम से हो। 'सुंदरलाल' नाम का व्यक्ति महा असुंदर हो सकता है और 'घूरेलाल' कामदेव के अवतार हो सकते हैं। 'मानबरिसा' (जहाँ माना बरसे) नाम के गाँव में धूल उड़ सकती है और 'सूखेपुर' (जहाँ की धरती सूखी ही सूखी हो) में लहलहाते खेतों की सरसता दृष्टिगत हो सकती है। इसका अर्थ यह हुआ कि नाम संकेत या प्रतीक होता है। यह संकेत यादृच्छिक भी हो सकता है जैसे जिस घर में फूटी कौड़ी भी न हो, उस घर के लड़के का नाम अशर्फीलाल या करोड़पति के लड़के का नाम छकौड़ीमल और दूसरी ओर सार्थक भी हो सकता है जैसे मातावदल, कनछेदी, नकछेदी बेचू आदि। उल्लेख्य है कि कुछ क्षेत्रों में जिन व्यक्तियों के लड़के मर जाते हैं वे अंधविश्वासवश पुत्र पैदा होते ही माँ बदल देते हैं, अर्थात् दूसरी स्त्री (माँ) को दे देते हैं (मातावदल), कुछ लोग उसके कान (कनछेदी) या नाक (नकछेदी) या दोनों छेद देते हैं और कुछ आने-दो आने में टोना-टोटका स्वरूप उसे बेच (बेचू) देते हैं, और तदनुसार नामकरण कर देते हैं। नाम बहुत छोटे भी होते हैं जैसे शिव, लाजा (गाँव का नाम) तथा बहुत बड़े भी होते हैं जैसे उदयप्रताप बहादुर सिंह, मोहनदास करमचन्द गाँधी। ग्रेट *ब्रिटेन में एक रेलवे स्टेशन का नाम 58 वर्णों (Leanfairpwllgwyngyllg*ogerychwyrndrobwllllantysiliogogogoch) का तथा आस्ट्रेलिया में एक झील का नाम 38 (Kardivilliwarrakurrakurrieapparlarndoo) वर्णों का है।

के नाम (नाते आदि के जैसे आत्माराम, शिवशंकर, रामू आदि), भौगोलिक नाम (महासागर, सागर खाडी, नदी, झील तालाब, महाद्वीप, द्वीप, अंतरीप, प्रायद्वीप सभा के सघ, देश प्रदेश या प्रांत, डिविजन, सबडिविजन, कमिश्नरी, जिला तहसील परगना, नगर कस्बा ग्राम, मुहल्ला, स्टेशन सडक, गली, चौराहा तिराहा आदि के) लोगो के मकानो व बँगलो के नाम, पुस्तकों के नाम, पत्र-पत्रिकाओं के नाम तथा कविता, कहानी, नाटक रेखाचित्र, तथा चलचित्र के शीर्षक जाति, धर्म, आश्रम के नाम, त्योहारो के नाम, संस्थाओं के नाम, छापनाम [जैसे अशोक (इजन) सनलाइट (साबुन), कोकाकोला (पेय), डालडा (वनस्पति घी), ब्रुकबाड (चाय) नेस (काफी) पार्कर (कलम), मरफी आदि], ऋतुओं महीनो तिथियो दिनो के नाम तारा ग्रह उपग्रह राशि के नाम, भाषा-उपभाषा बोली उपबोली के नाम—कहने का आशय यह कि सभी तरह के नाम आते है

इन नामो के वर्गीकरण के आधार पर नामविज्ञान को कभी दो (व्यक्ति-नामविज्ञान तथा स्थाननामविज्ञान), कभी तीन [व्यक्तिनामविज्ञान, सामूहिक नामविज्ञान (जैसे जाति धर्म आस्पद, गोत्र आदि के नामो का अध्ययन), भौगोलिकनामविज्ञान] तथा कभी और अधिक शाखाओ मे बाँटा गया है। वस्तुत उपर्युक्त नामो का ठीक ठीक वर्गीकरण काफी कठिन है, इसी कारण अभी तक सर्वसम्मति या बहुसम्मति से नामविज्ञान की शाखाओ प्रशाखाओं के नाम स्वीकृत नहीं हुए है। यो मोटे रूप से व्यक्तिनाम स्थाननाम, सामूहिकनाम तथा अन्य नाम—ये चार वर्ग माने जा सकते है।

नामविज्ञान के क्षेत्र मे विदेशो मे पर्याप्त काम हुआ है। अंग्रेजी वाड मय इस दृष्टि से काफी सम्पन्न है। गार्डिनर की 'द थ्यूरी ऑफ प्रापर नेम्ज', एकवल (Ekwall) की 'द कन्साइज आक्सफर्ड डिक्शनरी आफ इगलिश प्लेस नेम्ज' तथा टेलर एव अन्य लोगो की द ओरिजिन ऑफ इगलिश प्लेस नेम्ज इस क्षेत्र मे उल्लेख्य है। लदन की गलियो के नामो पर भी काम हो चुका है।

भारत मे, नामविज्ञान रूप मे शब्दविज्ञान की यह शाखा अभी अपनी शैशवावस्था मे है, किन्तु नामो के अध्ययन के प्रयास अत्यन्त प्राचीन काल से होते रहे है। संस्कृत वाड मय मे अनेक ग्रथो मे यत्र-तत्र स्थान या व्यक्तिनामो की व्युत्पत्ति देने के प्रयास हुए है। इस दृष्टि से यास्क का निरुक्त प्राचीनतम उल्लेख्य ग्रथ है। उसमे पृथ्वी अग्नि, आदित्य, वैश्वानर आदि अनेक देवी देवताओ तथा कम्बोज आदि कई स्थाननामो की व्युत्पत्तिया दी गई हैं। पाणिनि के अष्टाध्यायी, वाल्मीकि रामायण, महाभारत, विष्णु पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण आदि मे भी यत्र तत्र अच्छी सामग्री है।

आधुनिक काल मे अंग्रेजो के आने के बाद इस दृष्टि से ठोस प्रयास हुए हैं। इस दिशा मे सर्वप्रमुख उल्लेख्य ग्रथ विभिन्न जिलो के गजेटियर हैं जिनमे नगरो कस्बो आदि के नामो पर काफी सामग्री है। कुछ अन्य प्रकार के ग्रथो

(जन ग्राउज का 'मथुरा मेम्वॉयर' या प्रयाग, काशी, अयोध्या आदि तीर्थों पर धार्मिक दृष्टि से लिखी गई परिचयात्मक पुस्तिकाएँ)म भी कुछ सामग्री मिल जाती है। इसी प्रकार भाषाओं के इतिहास पर लिखी गई पुस्तकों म भी स्थानों और कहीं कहीं व्यक्तिनामो की व्युत्पत्ति पर थोडी बहुत सामग्री (जैसे सुनीति कुमार चटर्जी के 'ओरिजिन एंड डेवलपमेंट ऑफ बेंगाली लग्विज' या वानीकात काकती के 'असमीज, इट्स फार्मेशन एंड डेवलपमेंट' मे) है।

हिन्दी मे नामविज्ञान के क्षेत्र मे धीरेन्द्र वर्मा का लेख अवध के जिलो के नाम' (उनकी पुस्तक विचारधारा' मे सकलित) प्रथम व्यवस्थित अध्ययन है। बाद मे उन्ही के निर्देशन मे काय करके विद्याभूषण विभु ने हिन्दी प्रदेश के हिन्दी पुरुषो के नाम पर प्रयाग विश्वविद्यालय से डी० फिल० की उपाधि ली। ग्रथ 'अभिधान अनुशीलन' नाम से छप चुका है। राहुल साकृत्यायन ने एक लम्बा लेख 'जिला आजमगढ के नामो का इतिहास' सम्मेलन पत्रिका (भाग 43, सख्या 1) म प्रकाशित किया था। सरयूप्रसाद अग्रवाल ने 'अवध के स्थाननामो का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन' पर लखनऊ विश्वविद्यालय से डी० लिट० तथा श्री प्रकाश शुक्ल ने सहारनपुर जिले के स्थाननामो (a socio linguistic study of District Saharanpur place names) पर एव लक्ष्मीनारायण शर्मा ने 'व्रज के स्थान अभिधानो का भाषावैज्ञानिक अध्ययन' पर आगरा से पी एच० डी० की उपाधि प्राप्त की है। श्री शर्मा जी ने एम० ए० के लिए लघु शोधप्रबन्ध भी इसी विषय (आगरा मुहल्ले के नामो का भाषावैज्ञानिक अध्ययन) पर प्रस्तुत किया था। मुरादाबाद के स्थाननामो पर भी एक शोधप्रबंध डॉ० उषा चौधरी आ चुका है। प्रस्तुत पक्तियो के लेखक ने भी 'अमृत पत्रिका' (प्रयाग से प्रकाशित हिन्दी दैनिक जो अब बन्द हो चुका है) के कुछ अको म इस विषय पर कुछ लेख लिखे थ। इसी प्रकार प्रस्तुत लेखक की पुस्तक 'भाषाविज्ञान कोश' मे विश्व की प्रमुख भाषाओ के परिचय मे बहुतो के नाम पर सक्षेप मे विचार किया गया है। लेखक की दूसरी पुस्तक 'हिन्दी भाषा' मे हिन्दी उर्दू आदि नामो पर काफी विस्तृत तथा हिन्दी प्रदेश की प्रमुख बोलियो के नामो पर सक्षिप्त सामग्री दी गई है। या हिन्दी मे ऐसे कार्यों का अभी श्रीगणेश ही हुआ है और काफी काय होना शेष है।

नामो का अपने आप म एक मनोरजक अध्ययन तो है ही, और इससे नामो के बारे मे हमारी जिज्ञासा की शान्ति तो होती ही है साथ ही इससे हमारे अध-विश्वास, प्राचीन इतिहास और सस्कृति, जाति मिश्रण तथा मनोविज्ञान आदि पर भी अच्छा प्रकाश पडता है।

भारत एक धर्म प्रधान देश है। इसीलिए यहाँ व्यक्तिनामो म लगभग अस्सी प्रतिशत नाम धर्म और दर्शन पर आधारित हैं शेष म अन्य प्रकार के नाम हैं। स्थाननामो की आवश्यकता तो कभी कभार ही पडती है अत उन का प्रभाव बहुत अधिक नही पडता, किन्तु व्यक्तिनामो की

पड़ती है, अत उनपर बहुत अधिक प्रभाव दृष्टिगत होता है। हमारे नाम समय के साथ बदलते रहे ह। वैदिक काल स लेकर अब तक के नामो पर एक दृष्टि डालें तो यह बात स्पष्ट हुए बिना नही रहती। प्राचीन वदिक नाम बहुत अधिक धम प्रधान नहीं है किंतु परवर्ती काल म जैस-जसे धम के प्रति अध आस्था बन्ती गइ धार्मिक नाम बढ़ते गए। बौद्ध और जन धम आए,ता उनके आधार पर भी नाम करण किए जाने लगे (अमिताभ गौतम बुद्ध, सिद्धाथ, राहुल, बुद्धदव, ऋषभ, जिनेश्वर, जैनेन्द्र सुपाश्व)। आगे चलकर मुसलमाना के आगमन तक इसी प्रकार के नामो की सम्मिलित प्रवत्ति विशेष रूप स चलती रही। मुसलमाना के आगमन ने अन्य क्षेत्रो की भाति नामो पर भी प्रभाव डाला और राम गुलाम, राम इकबाल इज्जतसिंह, उलफत राय मुसद्दीलाल, खुशीराम, हुरमत, खुशवक्त, मुशीराम बहराम हजूरसिंह, सुहराव, रुस्तम, खुरशेद जस नाम हिंदुओ म भी काफी प्रचलित हो गए। अंग्रेज भारत म राजा तो रहे किन्तु व हमारी सस्कृति में प्रवश न कर सके। इसी कारण स्वीटी, बेबो, रूबी, लिली, डाली जस कुछ ही नाम विशेष मिलते हैं। इनम भी प्राय वास्तविक नाम न होकर पुकारन के नाम होते हैं। हाँ डिप्टीसिंह कप्तानसिंह जसे कुछ नाम अवश्य है। स्वामी दयानद सरस्वनी के आय समाज आदोलन ने भी नामो को बहुत अधिक प्रभावित किया शान्ता देवी, ओमवती, ओमप्रकाश वदपाल, वदप्रकाश, धर्ममित्र, धर्मव्रत वदमणि। दश की आजादी के लिए सघष और स्वराज्य की प्राप्ति न भी नामो पर अपनी छाप छोडी है नशराज, देशरत्न, भारत भूषण, भारत मित्र, स्वदशी लाल, शांतिकुमार, स्वतन्त्रनारायण स्वराज्यपाल, सुरेशचद, स्वदेश कुमार।

व्यक्ति नामो मे सबस मनोरजक सामग्री अधविश्वास पर आधारित नामो में मिलती है। पीछे मातावदल, छेदी, बचू का उल्लेख किया जा चुका है। एम नाम अनपढ या कम पढे लिखे निम्न श्रेणी के लोगो म विशेष रूप स मिलत ह। कुछ नाम हैं खदेरन, खदेरू पवारू, घुरफेंकन, फेंकू लुटई, बदलू, घसीटू, घसीटेलाल खचेड़ू, छेदी, कनछेदी, छिद्दन, नत्थू नथुनी जोखू लुल्लू फेरू लौटू, बिक्कू बिकाऊ बेचन बेचई, बेचू सौदू मालू बिसाऊ, माँगू, मँगटू घुरहू, अलियार।

ये सारे के सारे मूलत अधविश्वास पर आधारित है। एक सबस बडा अधविश्वास तो यह है कि जस अच्छी चीज सबको पस द आती है वसे ही अच्छा नाम रखन से वह सबका पसन्द आएगा अत नाम पर नजर लग कर उस पर भी लग जाएगी और दूसरे, वह भगवान को भी पसन्द आ जाएगा, अर्थात मर जाएगा। इस कारण बहुत स अनपढ भारतीय अच्छे नामो की तुलना म बुरे नामो को पस द करत रहे हैं।

उपयुक्त नाम मूलत इस अधविश्वास पर आधारित हैं कि बच्चे को यदि पैदा होत ही घर से निकाल (खदेरन खदेड़ू) या बाहर फक (पवारू फेंकू) दें, घरे पर फेंक दें (घुरफेंकन) लुटा या किसी और के बच्चे से बदल दे (लुटई

फेक बदलू) जमीन पर घसीट दें (घसीटू घसीटेलाल, खचेड़ू=जो खींचा गया हो) कान या नाक या दोनों छेद दें (छेदी कनछेदी, नकछेदी, नत्थू=जो नाथ दिया गया हो, नथुनी=नथ), पैदा होते ही तराजू पर तोल कर बेच दें (जोखू, तुल्लू बेचऊ, सोदू मोलू, बिकाऊ, बिक्कू) या बदल दें (बदलू) तो वह दीर्घायु होता है। बहुत से लोग, जिनके बच्चे बार बार मर जाते हैं, ऐसा करते रहे है, और इसी आधार पर ऐसे नाम रखते रहे है। बाद मे परपरा चल जाने पर ऐसी कोई क्रिया न करने पर भी लोग ऐसे नाम रखने लगे। अब शिक्षा के प्रचार के साथ ऐसे नाम कम होते जा रहे है, और शायद शीघ्र ही वह समय आएगा जब ये नाम इतिहास की चीज बन जाएँगे।

पुराकालीन नामो का अध्ययन अपार सभावनाओ से भरा है। रामायण और महाभारत के बारे मे परपरागत विश्वास यह है कि ये सारी की सारी घटनाएँ ऐतिहासिक हैं और इन दोनो काव्यो के सभी पात्र ऐतिहासिक है। किंतु इनके नामो के अध्ययन से विचित्र सकेत मिलता है। कौरवो के नाम दुर्योधन, दुःशासन, दुस्सह आदि है। कौन बाप अपने लडके के ये नाम रखेगा ? इसी प्रकार रामायण मे रावण पक्ष के नाम कुभकर्ण, मेघनाद, शूर्पणखा आदि भी वही बात कह रहे है। तो क्या ये कल्पित है ?

महाभारत के कुछ पात्रो के नामो का अध्ययन कुछ विद्वानो ने किया है जिससे बडे आश्चर्यजनक परिणाम निकलते है। यहा विस्तार से इस प्रश्न को नही उठाया जा सकता। किंतु निष्कर्षस्वरूप यह कहा जा सकता है कि पाँचो पाडव वस्तुत सगे भाई नही थे। अर्जुन जाति के प्रतीक अर्जुन, वृक जाति के प्रतीक भीम, यौधेय जाति के प्रतीक युधिष्ठिर तथा मद्र जाति के प्रतीक नकुल और सहदेव थे। इन चारो जातियो ने मिलकर पुरु और भरत जातियो के मिश्रण कौरवो से युद्ध किया था (विस्तार के लिए देखिए महाभारत एक ऐतिहासिक अध्ययन—बुद्ध प्रकाश इलाहाबाद 1959)।

यह कम लोगो को ज्ञात है कि 'विनोबा भावे' का वास्तविक नाम विनायक भावे है। वे जब पहले-पहले गाधीजी के आश्रम मे गए तो वहाँ पहले से एक पजाबा नाम के सज्जन रहा करते थे। गाधीजी ने पजाबा के सादृश्य पर इनको विनोबा कहना प्रारभ किया और 'विनायक भावे 'विनोबा भावे' बन गए।

अब तक हम लोग व्यक्तियो के नामो पर विचार कर रहे थे। स्थाननामो का अध्ययन भी कम उपयोगी और मनोरजक नही है। नीचे कुछ नामो पर सक्षेप मे विचार किया जा रहा है।

'बिहार' प्रात का नाम यहाँ पर बौद्ध विहारो के आधिक्य के कारण पडा है। अडमान द्वीप का पुराना नाम अगमान (अग बग का उल्लेख मिलता है) माना जाता रहा है। अब लोगो का विचार है यह नाम 'हनुमान' का विकसित रूप है। सभव है पहले यहाँ 'वानर' जाति के लोग रहते हो। उल्लेख्य है कि राम के साथ सेना बदरो की नही थी, वह 'वानर' नामक आदिवासियो की

पूजा के कारण या कुछ कुछ बंदर-सा होने के कारण उन्हें कदाचित् यह नाम दिया गया था। मध्य एशिया स्थित 'बुखारा' नगर का नामकरण वहाँ प्राचीन काल में बौद्ध विहारों के बाहुल्य के कारण पड़ा है। इतिहास के विद्यार्थी इस बात से भली-भाँति परिचित हैं कि बौद्ध धर्म किसी समय में वहाँ तक फैला था। प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक को अपनी बुखारा-यात्रा में वहाँ काफी भग्नावशेष देखने को मिले जो भारतीय सम्पर्क के प्रमाण थे। एक प्राचीन खँडहर पर तो स्वस्तिक का चिह्न भी मिला।

आसाम में मिट्टी के तेल का प्रसिद्ध केन्द्र है 'डिगबोई'। इस नाम का मूल बड़ा अजीब है। कहा जाता है कि 'असम रेलवेज़ एंड ट्रेडिंग कम्पनी लिमिटेड' को डिब्रूगढ़ से आगे रेलवे लाइन बनाते समय उधर मिट्टी का तेल होने का संकेत मिला। तेल के लिए खुदाई एक अंग्रेज की देख-रेख में शुरू हुई। खोदने वाले मजदूरों से वह अंग्रेज 'डिग ब्वाय डिग ब्वाय' (खोदते जाओ, खोदते जाओ) कहता था। यह 'डिगब्वॉय' मजाक-मजाक में वहाँ के मजदूरों की जबान पर चढ़ गया और वह स्थान डिगब्वाय के आधार पर डिगबोई कहलाने लगा।

प्राचीन काल में नगर, ग्राम, मुहल्ले आदि के नामों के साथ ग्राम पल्ली, क्षेत्र, प्रस्थ, स्थल, हट्ट, पुर, नगर पट्टन, मंडप, चत्वर, चतुष्क आदि का प्रयोग होता था। मुस्लिम काल में कटरा, बाजार, बाड़ा, कूचा, गली, बाग, बस्ती, दरवाजा मोहल्ला दरीबा, गंज आदि प्रयोग शुरू हुए। अंग्रेजों के समय में रोड, गार्डन मार्केट सिटी, गेट टाउन आदि जोड़े जाने लगे। इस श्रेणी के कुछ नाम बड़े दिलचस्प हैं। मुसलमानों के काल में भारत में 'गुलामों' की बिक्री होने लगी थी। घोड़े का प्रचार भी बहुत अधिक बढ़ गया था, जिसका परिणाम यह हुआ कि हर अच्छे नगर में घोड़ों और गुलामों के बाजार लगा करते थे। अरबी भाषा में एक शब्द है नख्खास जिसका अर्थ होता है 'जानवर या गुलाम बेचने वाला'। भारतीय नगरों में वे स्थान जहाँ गुलाम और घोड़े बेचे जाते थे, इसी आधार पर नख्खास कहलाए। आज भी गाजीपुर बनारस, इलाहाबाद, लखनऊ आगरा, फर्रुखाबाद आदि अनेक नगरों में नख्खास, नख्खास कोना या नख्खास मुहल्ला नाम के स्थान हैं। यों अब लोग भूल चुके हैं इनका अर्थ किंतु इनका विश्लेषण स्पष्ट करता है कि ये स्थान कभी गुलामों और घोड़ों आदि के विक्रय-स्थल थे।

इसी प्रसंग में दिल्ली के मुहल्ले 'मोरी गेट' का नाम लिया जा सकता है। यह मुहल्ला मुसलमानी काल का है, और उस समय इसका नाम 'मोरी दरवाजा' था। 'मोरी' तुर्की भाषा का शब्द है और इसका अर्थ है 'घोड़ा'। इस शब्द के अर्थ का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि तुर्कों के जमाने में इस स्थान पर घोड़े बिका करते थे। इसी प्रकार दिल्ली के 'उर्दू बाजार' को सामान्यतः लोग 'उर्दू भाषा की पुस्तकों का बाजार' समझते हैं। वस्तुतः उर्दू का मतलब है 'फौजी शिविर'। उर्दू बाजार मूलतः सैनिकों के लिए बाजार होने के कारण इस नाम से

अभिहित हुआ था।

यहाँ तक हमने स्थाननामों पर कुछ फुटकल रूप से विचार किया। स्थान नामों का पूरा और विस्तृत अध्ययन विस्तार से भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यहाँ उत्तर प्रदेश के एक छोटे से नगर गाजीपुर के नाम का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

'गाजीपुर' या इससे मिलते जुलते नाम से, गाजीपुर नगर का कोई पुराना उल्लेख हमें नहीं मिलता। प्रसिद्ध चीनी यात्री फाह्यान पटना से बनारस इधर से ही गया होगा किंतु उसने इसका कोई उल्लेख नहीं किया है। फाह्यान के प्रायः 200 वर्ष बाद ह्वेनसांग यहाँ गया था। उसके अनुसार इस प्रदेश का नाम चन चू था। कहने की आवश्यकता नहीं कि चीनी भाषा में व्यक्तिवाचक नामों का भी अनुवाद कर लिया जाता है। 'चेन चू' का शाब्दिक अर्थ 'युद्धों के स्वामी का राज्य' होता है। इस आधार पर लोगों का अनुमान है कि उस समय इसका नाम कदाचित 'युद्धपतिपुर' था। कनिंघम ने 'चेन चू' के आधार पर उस स्थान का नाम गजपतिपुर' या 'गजपुर' होने का अनुमान लगाया है और 'गाजीपुर' इस विचार से गजपतिपुर या गजपुर का विगड़ा रूप है। फ्लीट ने भी इस मत का समर्थन किया है। किंतु परवर्ती विद्वानों ने प्रायः इसे अशुद्ध माना है। नंदलाल डे ने भी अपने भौगोलिक कोश में इसे अशुद्ध कहा है। डॉ० होई भी इसी मत के हैं। नखिल के मतानुसार ह्वेनसांग का 'चेन चू' गाजीपुर जिले का 'उधरनपुर' है जिसका उस समय अनुमानित नाम युद्धरनपुर रहा होगा। आज का 'उधरनपुर' युद्धरनपुर का ही विगड़ा या विकसित रूप है।

गाजीपुर के नाम के सम्बन्ध में दूसरा अनुमान वहाँ के एक बड़े टीन या कोट से लगाया जाता है। गाजीपुर नगर से बिल्कुल लगा एक बहुत ऊँचा टीला है जिसे लोग राजा गाधि का टीला कहते हैं। इस अनुमान पर लोगों का कहना है कि महर्षि विश्वामित्र के पिता राजा गाधि का यहाँ किला था और उन्हीं के नाम पर उस नगर का प्राचीन नाम 'गाधिपुर' था। इस आधार पर गाजीपुर' 'गाधिपुर' का ही विकसित रूप ठहरता है। एक 'गाधिपुर' नाम का उल्लेख पुराणों में है किंतु वह कदाचित कन्नौज के पास था। कुछ लोगों के अनुसार 'कन्नौज का ही पुराना नाम 'गाधिपुर' था।

गाजीपुर' नाम के सम्बन्ध में एक और जनश्रुति भी है। कहा जाता है कि मांधाता नाम के राजा एक बार जगन्नाथपुरी जा रहे थे। रास्ते में गाजीपुर जिले के पठौत गाँव के एक तालाब में स्नान करने से उनकी इच्छा पूरी हो गई। इसके फलस्वरूप मांधाता वहीं रुक गए और एक किला बनवा कर रहने लगे। उनके परिवार में किसी ने एक मुसलमान की लड़की पकड़ ली और फलस्वरूप उसकी विधवा माँ ने उस समय के मुसलमान बादशाह के यहाँ प्रार्थना पत्र दिया और उनके यहाँ से चालीस गाजियों का एक समूह आया और राजा को मार डाला। गाजियों के इस समुदाय के नेता सईद मसऊद ने यहाँ के बागी हिंदुओं को

तरह पीगा, जिसके फलस्वरूप उसे 'मलिक-उस-सदत-गाजी' की पदवी मिली।
उसने इस गाजी उपाधि के उपलक्ष्य में ही 'गाजीपुर' का शहर बसाया।
यह जनश्रुति कुछ साधार मालूम होती है। 'गाजीपुर' नाम निश्चय ही
किसी मुसलमान का बसाया या कम-से-कम उनके नाम पर रखा गया होता है।
गाजी शब्द किसी पुराने संस्कृत शब्द का (जैसे गाधि का) बिगड़ा रूप नहीं हो
सकता। बिगड़े रूप में 'ग' और 'ज' जैसी विदेशी ध्वनि आने की प्रवृत्ति प्राय
नहीं मिलती। यहाँ एक और बात की ओर भी ध्यान जाता है। ह्वेनसांग के
अनुसार इसका नाम चेन चू था जिसका अर्थ 'लड़ाई के स्वामी का प्रदेश' या
'लड़ाई करने वाले का प्रदेश' है। आश्चर्य के साथ कहना पड़ता है 'ग़ाज़ी' का
भी शाब्दिक अर्थ यही है। 'गाजी' शब्द अरबी का है। इसका सम्बन्ध अरबी
शब्द गज़्व से है जिसका अर्थ लड़ना होता है। अरब में इसी आधार पर बड़े
धर्मयुद्धों को 'गज़वा' तथा छोटों को 'सरिया' कहते थे। इसका अर्थ तो यह होता
है कि ह्वेनसांग के समय में भी इसका नाम 'ग़ाज़ीपुर' ही था। पर यह संभव
नहीं लगता। उसका समय 7वीं सदी है और इस प्रकार की घटना घटने का समय
एक हज़ार इसवी के आस पास। अतः यह अर्थैक्य आकस्मिक हो सकता है।
यों एक संभावना यह भी हो सकती है कि इसका पुराना नाम भी इसी प्रकार
का कुछ रहा हो और मुसलमानी काल में यह नया नाम दे दिया गया हो या
उसी का मुसलमानीकरण कर दिया गया हो। आश्चर्य है कि इसे ग़ाज़ियाबाद
(गाजी+आबाद) नहीं कहा। वस्तुतः मुसलमानी काल में मिश्रित नाम भी
काफी रखे गए थे—बादशाहपुर, बेगमपुर, सुलतानपुर।
नामों के अध्ययन से तरह-तरह की सूचनाएँ मिलती हैं। 'वृन्दावन' कहता
है कि कभी यहाँ जंगल था। ब्रज का महावन स्थान भी अपने बारे में यही संकेत
करता है यद्यपि अब वहाँ वन बिलकुल नहीं हैं। 'मिर्ज़ापुर' स्पष्ट ही मुसलमानी
शासन काल का नाम है। इधर भारतीय संस्कृति के बहुत से तथाकथित प्रेमी उसे
'मीरज़ापुर' कहने और लिखने लगे हैं। उनका कहना है कि 'मीर' का अर्थ है
समुद्र और 'जा' का अर्थ 'उत्पन्न'। अर्थात् यह 'मिर्ज़ा' नहीं है, अपितु 'मीरजा'
अर्थात् लक्ष्मी' है और इस तरह 'मीरजापुर' का अर्थ है 'लक्ष्मीपुर'। कहना न
होगा कि यह शब्द इन प्रयोक्ताओं के मनोविज्ञान का अच्छा उद्घाटन कर रहा
है। बनारस का पुनः 'वाराणसी' या 'अलक्ज़ेंडर' का 'अलक्षेन्द्र' कर देने वालों
का मनोविज्ञान भी इससे बहुत भिन्न नहीं है।
वाराणसी नाम स्पष्ट कहता है कि मूलतः यह नगर गंगा के 'असी' घाट तथा
'वरुणा' नदी के बीच में स्थित था।
अंत में दो शब्दों की कहानी देखकर हम यह प्रकरण समाप्त करेंगे।

सिनहा

हिन्दी का एक बहुत प्रचलित शब्द है 'सिनहा' जिसे कुछ कायस्थ अपने

नामो के साथ लगाते हैं। मूलत यह शब्द सस्कृत भाषा का 'हिंस्र' है जिसका सम्बन्ध 'हिंस्' धातु से और जिसका अर्थ है 'खूखार' या 'हिंसा करने वाला'। आगे चलकर वर्णविपर्यय से यही शब्द हिंस्र 'सिंह' वन गया ('र' का लोप) जो शेर का सस्कृत पर्याय है। सिंह अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध है, अत प्रारभ मे क्षत्रियो ने प्रतीकस्वरूप इसका प्रयोग अपने नामो के साथ आरम्भ किया, और धीरे धीरे यह क्षत्रियो या राजाओ के नाम के साथ प्रयुक्त होने लगा। साहित्य मे प्राप्त इसका प्राचीनतम प्रयोग अमरसिंह के अमरकोश मे 'शाक्यसिंह' रूप मे मिलता है, जिसका अर्थ यह हुआ कि पहली ईसवी के आस पास यह प्रयोग मे आ चुका था। आगे चलकर यह केवल क्षत्रियो तक सीमित नही रहा कोई भी राजा जाट गूजर, अहीर आदि तथा यो भी अपने को वीर समझने वाले इसका प्रयोग करने लगे। राजस्थान के बहुत से ब्राह्मण अपने नाम के साथ 'सिंह' लगाते हैं। क्षपन इसी प्रचार मे यह कायस्थो के नामो के साथ भी प्रयुक्त होने लगा। अंग्रेजी भाषा के प्रचार के बाद कुछ 'सिंह' लोगो ने अपने 'सिंह' की वर्तनी अंग्रेजी मे SINHA की जिसे इस शब्द से अपरिचित अंग्रेजो और अन्य लोगो ने 'सिनहा' पढा। प्रारम्भ मे ऐसा कदाचित अंग्रेजी से कायस्थो के नाम के साथ हुआ, अत वे ही 'सिनहा' कहलाए। आश्चर्य है कि 'हिंस्र' शब्द की यात्रा की परिसमाप्ति 'सिनहा' मे हुई है।

हिन्दी

'हिन्दी', 'हिन्दू', 'हिन्दुस्तान' मूलत 'हिन्दु' शब्द से सम्बन्धित हैं। प्रश्न यह है कि इस 'हिन्दु' का मूल क्या है ?

हमारे परम्परावादी सस्कृत-पण्डित मूल शब्द 'हिन्दु' मानते हैं। इसकी व्युत्पत्ति कई प्रकार से दी जाती है। कुछ लोग 'हिन' (=नष्ट करना)+'दु' (=दुष्ट) से हिन्दु मानते है। अर्थात 'हिन्दु' का अर्थ है 'दुष्टो का विनाश करने वाला (हिनस्ति दुष्टान)। 'शब्दकल्पद्रुम' (खण्ड 5, 1961) मे 'हीन +दुष+डु से 'हिन्दु सिद्ध किया गया है। इस दृष्टि से 'हिन्दु का अर्थ हुआ 'हीनो या आछो का दूषित करने वाला' हीन दूषयति)। 'मेरुतन्त्र' के 23वें प्रकाश मे शकर, पार्वती से कहते हैं —

हिन्दुधर्मप्रलोप्तारो जायन्ते चक्रवर्तिन ।
हीनञ्च दूषयत्येव हिन्दुरित्युच्यते प्रिये ॥

अर्थात हीनो को दूषित करने वाला हिन्दु है। यहाँ 'हीन' का अर्थ कुछ लोग 'म्लेच्छ आदि विदेशी मानते हैं। 'मेरुतन्त्र' को प्राय परम्परावादी पण्डित प्राचीन ग्रन्थ समझते हैं, किन्तु वास्तविक स्थिति यह नही है। इसमे फिरगी शब्द का प्रयोग मिलता है जिससे स्पष्ट है कि यह बहुत बाद का ग्रन्थ है और यूरोपीयो के भारत मे आने पर लिखा गया है।

हिन्दु की एक तीसरी व्युत्पत्ति हीन—दु' [हीनो (म्लेच्छो) का दलन या

दण्डित करने वाला] से भी मानी गई है। 'हिन्दु' की एक चौथी व्युत्पत्ति है—'यो हिंसाया दूयते, स हिन्दू' अर्थात हिंसा को देखकर जो दुखी होते हैं, वे हिन्दू हैं।

वस्तुत उपर्युक्त चारो व्युत्पत्तियाँ कल्पनाप्रसून हैं। 'हिन्दु' शब्द 'हू' के साथ संस्कृत शब्द नही है। उल्लेख्य है कि किसी भी प्राचीन ग्रन्थ मे इसका प्रयोग नहीं हुआ है। मुझे इसका प्राचीनतम प्रयोग सातवी सदी के अंतिम चरण के ग्रन्थ 'निशीथ चूर्णि' मे मिला है।

आधुनिक विद्वानो द्वारा स्वीकृत एव प्राय सर्वमान्य मत यह है कि 'हिन्दु' शब्द फारसी भाषा का है। यो फारसी का यह अपना शब्द नहीं है अपितु संस्कृत शब्द 'सिंधु' का फारसी रूपान्तरण है। प्रश्न उठता है कि 'सिन्धु' की व्युत्पत्ति क्या है? संस्कृत के अधिकाश वैयाकरण इसका सम्बन्ध 'स्यन्द' धातु से मानते हैं, जिसका अर्थ है पसीजना द्रवना, स्रवित होना। इसी स, य' के सम्प्रसारण, 'दस्य ध', तथा 'उद' प्रत्यय के योग से 'सिन्धु' शब्द बना है, जिसका अर्थ नदी विशेष तथा समुद्र आदि है। हाथी के गण्डस्थल से मद बहने के कारण उसे भी 'सिंधु' या 'सिन्धुर' आदि कहा गया है। इस प्रकार इसका मूल अर्थ 'बहना' है।

'सिन्धु' की एक दूसरी व्युत्पत्ति संस्कृत की 'इन्द्' धातु से मानी गई है। 'इन्द' का अर्थ होता है 'ऐश्वर्य होना'। संस्कृत का इन्द्र' शब्द भी इसी से सम्बद्ध है। ग्रासमान, रॉथ आदि विद्वान इन्द् को मूलत इध' या 'इन्ध मानते हैं, यद्यपि वेनफे तथा कुछ और विद्वान् 'इन्द्र को भी मूलत 'स्यन्द से ही निष्पन्न मानते है। 'इन्द' या स्यन्द से ही स्लाव शब्द 'जद्', स० 'इन्द्र अवेस्ता 'जन्गाह' (जिन्दा, जिन्दगी) आदि सम्बंधित है। 'सिन्धु' शब्द को 'इन्द' या 'इन्ध से सम्बद्ध मानने वाले उस नदी के ऐश्वर्य या उसकी जीवन शक्ति पर बल देते हैं। मोनियर विलियम्स 'सिन्धु शब्द को 'सिध' (=जाना) धातु से निकला होने का अनुमान लगाते हैं।

प्रस्तुत पंक्तियो का लेखक उपर्युक्त मतो से सहमत नही है। ये सब पुरानी धातुएँ तो ठीक हैं, किन्तु मेरी निजी राय यह है कि इस नदी विशेष का 'सिंधु' नाम, मूलत संस्कृत का शब्द नहीं है। जब आर्य भारत म आये उस समय पश्चिमोत्तर भारत म आर्येतर लोग रहते थे, और ये लोग पर्याप्त सुसस्कृत थे। ऐसी स्थिति मे यह स्वाभाविक है कि सिन्धु नदी का कोई नाम इन आर्येतर लोगो द्वारा प्रयुक्त होता रहा होगा। प्राय ऐसा होता भी नही कि कोई विदेशी जाति किसी देश मे आये और वहाँ के सारे के सारे नामो को बदल डाले, विशेषत ऐसी स्थिति म जब कि वहाँ के रहने वाले असभ्य न होकर सुसस्कृत हो। हाँ नवागन्तुक ऐसी नदियो या ऐसे पहाड़ो आदि के नाम तो बदल सकते या रख लेते है, जिनको अधिक लोग नही जानते, किन्तु पश्चिमोत्तर भारत की सबसे बड़ी नदी के सम्बन्ध मे, जिसकी घाटी मे इतनी बड़ी संस्कृति थी, उनको ऐसा करना पड़ा

हो या उन्होंने ऐसा किया हो, ऐसा मानने का कोई कारण नहीं दीखता[1]। ऐसी स्थिति में कम-से-कम इतना तो कहा ही जा सकता है कि यह शब्द मूलतः द्रविड भाषा का है। यों, यह भी असम्भव नहीं कि द्रविड लोग जब भारत में आये हों तो उन्हें भी यह नाम आस्ट्रिक आदि किसी अन्य पुरानी जाति से मिला हो। साथ ही यह भी सम्भव है कि आर्यों के आने के समय इस नदी का जो नाम प्रचलित रहा हो, आर्यों ने 'सिन्धु' रूप में उसका संस्कृत रूप बना लिया हो, क्योंकि शब्दों के संस्कृतीकरण की परम्परा आर्यों में प्राचीनकाल से मिलती है। उन्होंने अनेक देशी विदेशी नामों ('एलेग्जेंडर' के लिए कौटिल्य के अर्थशास्त्र में 'अलक्द' आया है) एवं शब्दों के साथ ऐसा किया है। 'सिड' 'सिद', 'सित्' या 'चिन्द' आदि रूपों में, द्रविड परिवार की कई भाषाओं एवं बोलियों में एक अत्यन्त प्राचीन धातु मिलती है, जिसका प्रयोग 'छिड़कने', 'सींचने' या 'बहने' आदि के लिए होता है। मेरा अनुमान है कि द्रविडों को यह शब्द यदि किसी पुरानी जाति से नहीं मिला था, तो इसी धातु के आधार पर प्राचीन द्रविडों ने इस बड़ी नदी (सिन्धु) को 'सिद' या सित' नाम दिया। यह नाम इसमें बहते हुए बहुत अधिक पानी के कारण भी हो सकता है या इस कारण भी हो सकता है कि इनकी सभ्यता का उस काल में मूल केन्द्र (सिन्धु की घाटी) जो था, इसी से सींची जाने वाली भूमि पर बसा था। नदी ही नहीं, मेरे विचार से तो, नदी के आधार पर आसपास के प्रदेश का भी तात्कालिक नाम कदाचित् सिद' या सित्' ही था। सन् 1928 29 में पश्चिमोत्तर भारत में प्राप्त कुछ अभिलेखों से यह पता चलता है कि हड़प्पा मोहनजोदड़ो के लोगों के स्थान का नाम उस काल में सिद्' या 'सित्' था[2]। इससे मेरे उक्त अनुमान की पुष्टि होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि संस्कृत में इस नदी या प्रदेश के लिए 'सिन्धु' शब्द वस्तुतः संस्कृत शब्द न होकर प्राचीन द्रविड शब्द 'सिद् या सित्' का ही संस्कृतीकृत रूप है, जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है। ज्ञान की वर्तमान परिधि में 'सिन्धु' शब्द को और पीछे तक ले जाना सम्भव नहीं। किन्तु यह असम्भव नहीं कि भविष्य में और प्रमाणों के मिलने पर इसे आस्ट्रिक या और किसी प्राचीन भाषा का शब्द सिद्ध किया जा सके।

द्रविड सिद' या 'सित' के आधार पर संस्कृतीकरण के द्वारा बने इस 'सिन्धु'

1 गंगा को भी संस्कृत के पण्डित संस्कृत शब्द मानते हैं तथा गम्यते ब्रह्मपदमनया गच्छतीति वा गम्+गन+टाप रूप में उसकी व्युत्पत्ति देते हैं। किन्तु अब यह प्रायः स्वीकृत तथ्य है कि यह शब्द मूलतः संस्कृत का नहीं है और भारत के प्राचीन निवासियों से ही यह आर्यों को मिला है।

2 जर्नल आफ ओरियण्टल रिसर्च मद्रास अंक 11 पृष्ठ 2,6

3 प्राचीन चीनी साहित्य में शिन्तु (परवर्ती साहित्य में 'इन्तु') को देवों का देश कहा गया है यह भी सिंधु ही है। भारत में भारत के लिए प्राचीनतम नाम मातृभूमि (अथर्ववेद) है। भारतवर्ष (महाभारत) भारत (विष्णुपुराण) भरत खण्ड जम्बूद्वीप (बौद्ध ग्रन्थ) तथा कुमारीद्वीप (परवर्ती पुराण) बाद में मिलते हैं। हिन्द पर आधारित

शब्द का भारतीय साहित्य मे प्रथम प्रयोग 'ऋग्वेद' मे मिलता है। 'ऋग्वेद' म इसका प्रयोग सामान्य रूप से नदी (भारवक्षसो अत्यक्नुन सिन्धवोऽग्ने 1 143 3 आदि), नदी विशेष (10 75) तथा कदाचित नदी के आस पास के प्रदेश (2 8 96) के लिए हुआ है। यो जल-देवता आदि अन्य अथ भी हैं जो मूल अथ से बहुत दूर नही हैं। प्रदेश विशेष के अथ मे बाद म यह 'महाभारत' तथा पर वर्ती काव्य ग्रन्थो मे भी आता है। 'ऋग्वद' मे 'सप्तसिन्धव' (सात नदियाँ) तथा 'सप्तसिन्धुपु आदि भी मिलत है।

आर्यों के भारत-आगमन के पूव भी भारत से ईरान का सास्कृतिक तथा व्यापारिक सम्बन्ध रहा है, जसा कि ज्योतिष, पौराणिक कथाओ तथा अन्य क्षेत्रो म आपसी प्रभावो से स्पष्ट होता है। आर्यों के भारत आगमन के बाद यह सम्पक सगोत्रीय होने के कारण कदाचित और अधिक बढ गया। 500 ई० पू० के आस-पास दारा प्रथम के काल म सिन्धु नदी के आसपास का प्रदेश ईरानी लोगो के हाथ म था। इन्ही सम्पर्कों के साथ भारत से ईरान तथा ईरान से भारत में याजक आया जाया करते थे। शकद्वीप के मग ब्राह्मण (जो भारत म शाकलद्वीपी ब्राह्मण कहलाए) फारस के पूर्वोत्तर भाग से ही आकर यहाँ बसे। कदाचित याजको के साथ हमारे 'सिन्धु और 'सप्तसिन्धव' आदि शब्द भी ईरान पहुँचे। हमारी प्राचीन 'स ध्वनि ईरान की अवेस्ता आदि मे 'ह' उच्चारित होती रही है जसे स० 'सप्त', अवेस्ता 'हप्त', स० 'असुर', अवस्ता अहुर' आदि। इसी कारण ये 'सिधु और 'सप्तसिन्धव' आदि शब्द अवेस्ता म हिन्दु' (अवेस्ता मे महाप्राण ध्वनियां नही होती, अत 'ध' का 'द' हो गया है) और 'हप्तहिन्दव आदि रूप मे मिलते हैं। प्राचीन ईरानी साहित्य मे 'हिन्दु शब्द नदी के अथ म तो प्रयुक्त हुआ ही है साथ ही सिन्धु नदी के पास के प्रदेश के अथ में भी प्रयुक्त हुआ है। उस समय ईरान वालो के पास भारत की भूमि के लिए केवल यही एक शब्द था अत धीरे धीरे ईरानी भारत के जितने भी भाग स परिचित होते गए, उस वे इसी नाम से अभिहित करते गय। इस प्रकार किसी अन्य शब्द के अभाव म इस शब्द का अथ विस्तार होता गया और 'सिन्धु नदी के पास की भूमि का वाचक शब्द धीरे धीरे पूरे भारत का वाचक हो गया। ईरानी सम्राट दारा (प्राचीन रूप दारयवहु स० धारयद्वसु) के अभिलेखो मे 'भारत के लिए हिन्दु आया है। सूसा के राजमहल के अभिलेख म आता है पिरुश्हया इदा क्रत हचा कुश उता हिन्दौव उता हचा हरउतिया अबरिय, अर्थात राजमहल मे अभिलख म हाथीदाँत जिस पर यहाँ काम किया गया कुश (सम्भवत अबी-सीनिया) हिन्दु (भारत) और हरह्वती (स० सरस्वती कदाचित सीमा प्रात) स लाया गया। अवस्ता ग्रन्थ 'वन्दीदाद (1 18) म हप्त हिन्दु (सप्त सिन्धु) को

नाम भारत म प्रथम बार कदाचित अनग्रय निशाय चूर्णि म एदि हिन्दुगेण दसचामो रूप म (7 वा सदी उत्तिम चरण) म आता है।

सोलह पवित्र स्थानों मे एक माना गया है। 'यस्न' (57 29) मे भी 'हिंदु' शब्द भारत के लिए प्रयुक्त हुआ है। प्राचीन ईरानी साहित्य मे 'हिंदुश' (यूनानी शब्द Indos यही है), हिंदु हिंदुवअ (स० सिंधुव्य=सिंधुवासी) आदि अनेक अन्य प्रयोग भी मिलते हैं। 'हिंदु' शब्द में धीरे धीरे अर्थ सम्बन्धी विकास ('सिंध प्रदेश' से बढ़कर 'भारत') तो हुआ ही, साथ ही इसमें ध्वनिक विकास भी हुआ और इसमें 'हि' पर बलाघात होने के कारण अन्त्य 'उ' लुप्त हो गया, और इस प्रकार यह शब्द हिंदु से 'हिंद' हो गया। आगे चलकर 'हिंद' शब्द मे ईरानी के विशेषणार्थक प्रत्यय 'ईक' जुड़ने से 'हिंदीक'[1] शब्द बना जिसका अर्थ था 'हिंद का'। इसी 'हिंदीक' का विकास ('क' के लुप्त हो जाने के कारण) 'हिंदी' रूप में हुआ। इस प्रकार 'हिंदी' का मूल अर्थ है 'हिंद का' या 'भारतीय'। इस अर्थ मे 'हिंदी' शब्द का प्रयोग मध्यकालीन फारसी तथा अरबी आदि मे अनेक स्थलों पर हुआ है। उदाहरणार्थ अरबी मे 'तमर' का अर्थ है 'सूखा खजूर'। इमसे कुछ मिलते जुलते होने के कारण उन लोगो ने 'इमली' को (जिसका परिचय उन्हें भारत से ही प्राप्त हुआ था) 'तमर हिंदी' या 'तमर ए हिंद' कहा। विशेषण के रूप में प्रयुक्त होने के अतिरिक्त 'हिंदी' शब्द संज्ञा रूप मे भी बहुत सी भाषाओं में प्रयुक्त होता रहा है उदाहरणार्थ फारसी तथा अरबी मे 'हिंदी' शब्द का प्रयोग विशेष प्रकार की तलवार के लिए (जो भारतीय इस्पात की बनी होती थी या भारत से जाती थी) तथा तलवार के वार के लिए भी होता रहा है। मिस्र मे मलमल (जो भारत से जाती थी) के लिए 'हिंदी' शब्द चलता रहा है। भारतीयों के काला होने के कारण फारसी में 'हिंदू' का अर्थ 'काला' भी है। कभी भारतीयों से उनकी अनबन भी थी, इसी कारण फारसी मे 'हिंदू' के अन्य अर्थ 'डाकू' भी है।

भाषा के लिए 'हिंदी' शब्द के प्रयोग का इतिहास भी फारस और अरब से ही आरम्भ होता है। छठी सदी ईसवी के कुछ पूर्व से ही ईरान मे 'ज्बान-हिंदी' का प्रयोग भारत की भाषाओं के लिए होता रहा है। इस दृष्टि से कुछ उदाहरण उल्लेख्य है (1) ईरान के प्रसिद्ध बादशाह नौशेरवाँ (531-579 ई०) ने अपने दरबार के प्रमुख विद्वान हकीम बजरोया को 'पञ्चतन्त्र' का अनुवाद कर लाने के लिए भारत भेजा था। बजरोया ने यह काम पूरा किया। 'करकट और दमनक' के आधार पर उसने इस अनुवाद का नाम 'कलीला व दिमना' रखा। इसकी भूमिका नौशेरवा के मन्त्री बुजर्च मिहर ने लिखी। भूमिका मे अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी कहा गया है कि यह अनुवाद 'जबाने हिंदी' से किया गया है। यहां स्पष्ट ही 'जबाने हिंदी' का प्रयोग 'भारतीय भाषा' या 'संस्कृत' के

1 यही 'हिंदीक' शब्द अरबी से होता, ग्रीक में इंदिक इंदिका लैटिन मे इंडिया तथा अंग्रेजी आदि में इण्डिया हुआ। चीनी साहित्य मे कभी कभार प्रयुक्त इतुको भी यही है।

2 यहां शब्द अंग्रेजी में टमरिण्ड (Tamrind=इमली) है।

लिए है। (2) इस पहलवी अनुवाद से इस पुस्तक के अरबी गद्य तथा पद्य में कई नामा से कई अनुवाद हुए। 9वीं सदी तक के प्राय सभी अनुवादों में मूल पुस्तक को 'जबाने हिन्दी' का कहा गया है। उदाहरणार्थ 700 ई० के आस-पास में किए गए अब्दुल्ला इब्नुल मुकफ्फा के अनुवाद में, इब्ने मकना के अनुवाद में तथा 'जाविदाने खिरद' नाम से 813 ई० में इब्ने सुहैल द्वारा किए गए अनुवाद में। (3) 'महाभारत' के भी कुछ भागों का रूपान्तर पहलवी भाषा में 7वीं सदी में किया गया था। उसमें भी मूल भाषा को 'जबाने हिन्दी' कहा गया। (4) 1227 ई० में मिनहाजुस्सिराज भारत आया था। उसने अपनी पुस्तक 'तबकाते नासिरी' में लिखा है कि 'जबाने हिन्दी में 'बिहार' का अर्थ 'मदरसा' है। स्पष्ट ही यहाँ 'जबाने हिन्दी' का प्रयोग संस्कृत के लिए न होकर या तो सामान्य भारतीय भाषा के अर्थ में है, या फिर भारत के मध्य भाग की भाषा' (कदाचित हिन्दुवी या हिन्दी) के लिए। (5) 1333 ई० में इब्ने बतूता अपने 'रेहला इब्ने बतूता' में तारन नगर के सम्बन्ध में लिखता है—'कितावत अला वाज अलजदरात बिल हिन्दी' अर्थात कुछ दीवारों पर हिन्दी में लिखा था। भाषा के अर्थ में स्वतन्त्र 'हिन्दी' शब्द का विदेशों में यह कदाचित प्राचीनतम प्रयोग है यद्यपि यह नाम आज की हिन्दी के लिए न होकर संस्कृत के लिए है। (6) तैमूर लंग के पोते के काल में (1424 ई०) शरफुद्दीन यज्दी ने तैमूर और उसके परिवार के सम्बन्ध में 'जफरनामा' नामक ग्रन्थ लिखा। इसमें एक स्थान पर आता है कि 'राब हिन्दी शब्द है। विदेशों में हिन्दी भाषा के लिए 'हिन्दी' शब्द का सम्भवत यह प्रथम प्रयोग है।

भारतवर्ष में भी भाषा के अर्थ में 'हिन्दी' शब्द के प्रयोग का प्रारम्भ मुसलमानों द्वारा ही किया गया। भारतीय परम्परा में प्रचलित भाषा' के लिए प्राचीन काल से ही 'भाषा' शब्द का प्रयोग होता आया है। इसका प्रयोग क्रम में संस्कृत, प्राकृत तथा बाद में हिन्दी आदि के लिए हुआ। यहाँ कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं— सो देव कै बनमाली शिष्यार्थ भाषा टीका कीन्ह (1438 ई० में लिखित भास्वती की भाषा-टीका), संस्कृत कबिरा कूप जल भाषा बहता नीर' (कबीर) आदि अंत जसि कथ्था अहै लिखि भाषा चौपाई कहै' (जायसी) 'भाषा भनति मोर मति थोरी', 'भाषा निबद्ध मति मंजुल' (तुलसीदास), भाषा बोल न जानही जेहि के कुल के दास (केशवदास)। संस्कृत आदि के ग्रन्थों की हिन्दी टीकाओं में भाषा-टीका रूप में भी यह शब्द उसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। रामप्रसाद निरञ्जनी कृत 'भाषा योगवासिष्ठ' (1741 ई०) 19 फरवरी 1802 को फोर्ट विलियम कालिज द्वारा 'भाखा मुंशी' की माँग की स्वीकृति तथा लल्लू लाल को उक्त कालिज के कागजों में 'भाषा मुंशी' कहे जाने से पता चलता है कि हिन्दी के लिए 'भाषा' शब्द का प्रयोग आधुनिक काल तक चलता रहा है। संस्कृत के टीका ग्रन्थों में तो यह अब भी चल रहा है। पुरानी पीढ़ी के पण्डित 'हिन्दी-टीका' न कहकर 'भाषा-टीका' ही कहते हैं।

मुसलमान यहा आये तो यहा की भाषा को 'जवाने हिन्दी' कहने लगे। उनका विशेष सम्बन्ध मध्यदेश से था, अत धीरे-धीरे मध्यदेशीय बोली के लिए उन्होंने 'ज़बाने हिन्दी' या 'हिन्दी जबान' या 'हिन्दी' नाम का प्रयोग किया। आरम्भ मे इस नाम के अन्तर्गत पजाबी (कम से कम पूर्वी) भी कदाचित् आती थी।

'हिन्दी' नाम का भारत मे प्रथम प्रयोग कब और किसने किया, यह अभी तक अनुसन्धान का विषय है। प्राय यही कहा जाता है कि अमीर खुसरो की रचना मे सबसे पहले 'हिन्दी' शब्द हिन्दी भाषा के लिए मिलता है। वस्तुत भाषा के अर्थ मे खुसरो मे 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग सदिग्ध है। हाँ उन्होंने हिन्दी शब्द का प्रयोग 'भारतीय मुसलमानो' या 'भारतीय' (इलियट 3 8 539) के लिए किया है। यहा बहुत विस्तार से इस विषय को लेना सम्भव नही है, किंतु सक्षेप मे कुछ बातें कही जा सकती हैं। इस सम्बन्ध मे सबसे बडा तर्क तो यह दिया जाता है कि खुसरो लिखित 'खालिकबारी' मे 'हिन्दी' शब्द कई बार आया है। किंतु कुछ के अनुसार 'खालिकबारी' खुसरो की रचना नही है, वह खुसरो के बहुत बाद के किसी 'खुसरो शाह' की रचना है। इसके लिए कई तर्क दिये जा सकते हैं, जिनमे से प्रमुख ये हैं (क) अमीर खुसरो जैसे विद्वान की रचना यदि 'खालिकबारी' होती तो वह पर्याप्त व्यवस्थित होती, जबकि 'खालिकबारी' बहुत ही अव्यवस्थित है। कभी फारसी शब्दो के समानार्थी हिन्दी शब्दादि दिये गये हैं, तो कभी वाक्यो के समानार्थी वाक्य। भाषा सीखने की दृष्टि से भी इन वाक्यो या शब्दो मे कोई एकरूपता नही है। जो शब्द लिये गये हैं, उनमे सब ऐसे नही हैं जिनको भाषा के प्रारम्भिक ज्ञान के लिए आवश्यक समझा जाय। साथ ही, प्रारम्भिक ज्ञान के लिए बहुत से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शब्द छूट भी गए हैं। जो वाक्य दिये गये है वे भी तुक या छन्द बठाने की दृष्टि से लिये गये ज्ञात होते है। भाषा के प्रारम्भिक ज्ञान की दृष्टि से उनका कोई विशेष मूल्य नही है। कारक, काल रचना आदि की दृष्टि से भी व महत्त्व नही रखत। (ख) छन्दो का बिना किसी योजना के परिवर्तन और कही कही उनमे अप्रवाह या दोष भी 'खालिकबारी' को कविवर खुसरो की रचना मानने म व्याघात उपस्थित करते है। (ग) बीच म आता है— तुर्की जानी ना'। तुर्की का विद्वान् खुसरो यह लिखे कि उस अमुक शब्द की तुर्की उस नही आती, यह बात कल्पनातीत है। यो सभी शब्दो के लिए तुर्की शब्द दिये भी नही गय हैं। अत एसा कथन निरर्थक-सा लगता है। यह बात भी खालिकबारी को अमीर खुसरो म सम्बद्ध करने म अडचन डालती है। (घ) शब्दो की गलतियाँ भी हैं। हिन्दी 'काना' के लिए फारसी 'कोर' दिया गया है जबकि कोर का अर्थ 'अन्धा होना है। निदव', 'कुवक' और हस को एक माना है, जबकि तीनो अलग-अलग हैं। 'तीतर' के लिए एक स्थान पर दुर्राज' तथा अन्यत्र लगलग' दिया गया है। 'खालिकबारी से इस तरह की अशुद्धियो के अनेक उदाहरण दिय जा सकत ह। ऐसी भद्दी गलतियाँ खुसरो नही कर सकते और न ऐसी कम योग्यता के आदमी को, जसा कि 'खालिकबारी' का लेखक लगता है, ग़यासुद्दीन तुग़लक

अपने लडको को हिन्दी पढाने के लिए ऐसा कोश बनाने का आदेश ही दे सकते थ। (कहा जाता है कि गयासुद्दीन तुगलक के कहने से अमीर खुसरो ने उनके लडको को हिन्दी पढाने के लिए इसे बनाया था।) उपर्युक्त बातो को देखते हुए यह कहना उचित नही लगता कि 'खालिकबारी' खुसरो की रचना है। ऐसी स्थिति म हिन्दी शब्द का खुसरो द्वारा प्रयोग 'खालिकबारी' के आधार पर नही माना जा सकता। दूसरे प्रमाण के रूप मे खुसरो का एक वाक्य उद्धृत किया जाता है जिसमे उन्होने कहा है कि मैंने फारसी के साथ-साथ हिन्दी म भी चन्द नज्मे कही है ('जुज्व चन्द नज्मे हिन्दी नीज नज्मे दोस्ता करदा शुदा अस्त') वस्तुत यह वाक्य उनके किसी भी प्रामाणिक संस्करण म मुझे नही मिला। 'देवल देवी खिज्र खां' मसनवी स कुछ लोगो न उद्धरण दिये हैं, किन्तु वहाँ भी मूलत 'हिन्दुवी' का प्रयोग है न कि 'हिन्दी' का। इसके अतिरिक्त खुसरो द्वारा भाषा के अर्थ म 'हिन्दी' शब्द के प्रयोग का कोई अन्य प्रमाण देखने मे नही आया। यो भाषा के अर्थ म 'हिन्दवी' या 'हिन्दुई' शब्द का प्रयोग खुसरो मे कई स्थलो पर मिलता है। एक स्थान पर वे कहते है—'तुर्क हिन्दुस्तानियम मन हिन्दवी गोयम जवाब' अर्थात् मैं हिन्दुस्तानी तुर्क हूँ, हिन्दुवी मे जवाब देता हू।' उनकी मसनवियो मे भी यह शब्द एकाधिक स्थलो पर आया है। इस प्रकार खुसरो के द्वारा 'हिन्दी' नाम के प्रयोग की बात बहुत प्रामाणिक नही ज्ञात होती। हाँ यह अवश्य है कि उनके कुछ ही बाद इस शब्द का भाषा के अर्थ म प्रयोग हो गया था।

यह प्राय कहा जाता है कि 'हिन्दी' और 'हिन्दवी' शब्दो का एक ही अर्थ था और य एक ही अर्थ मे प्रयुक्त होते थे। किन्तु मुझे यह बात ठीक नही ज्ञात होती। एक ही भाषा के लिए बिना किसी विशेष कारण के दो नामो का साथ साथ प्रयुक्त होना और बिलकुल एक ही अर्थ मे चलना कुछ जँचता नही। मुझे ऐसा लगता है कि प्रारम्भ मे ये दोना शब्द भिन्नार्थी थे। ऊपर कहा गया है कि खुसरो ने 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग भारतीय मुसलमानो के लिए किया है और 'हिन्दवी' शब्द का प्रयोग 'मध्यदेशीय भाषा' के लिए। यह 'हिन्दवी' शब्द वस्तुत 'हिंदुवी' या 'हिन्दुई' है। हिन्दू+ई=अर्थात 'हिन्दुओ की भाषा'। 'हिन्दवी' शब्द के प्रयोग के कुछ दिन बाद 'हिन्दी' (अर्थात भारतीय मुसलमानो) की भाषा के लिए कदाचित 'हिन्दी' शब्द चल पडा। 'हिन्दुवी' या 'हिन्दवी' तो वह भाषा थी जो शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई थी और मध्यप्रदेश म सहज रूप से प्रयुक्त हो रही थी। 'हिन्दी' अर्थात् 'भारत के मुसलमानो' न भी इसे अपनाया, किन्तु स्वभावत धार्मिक तथा सास्कृतिक (खान पान रहन सहन, कपडा लत्ता) कारणों स उनकी भाषा मे अरबी फारसी तुर्की के शब्द अधिक थे। इसी भाषा के लिए आरम्भ म कदाचित 'हिन्दी' शब्द चला। इसी प्रकार 'हिन्दवी' शब्द पुराना है और 'हिन्दी' अपेक्षाकृत बाद का। साथ ही मूलत दोनो मे कुछ अन्तर भी है। शुद्ध हिन्दी म लिखने वाले पुराने कवियो तथा लेखको ने सम्भवत इसी कारण अपनी भाषा को प्राय 'हिन्दवी' ही कहा है—'तुरकी अरबी हिन्दवी भाषा जेति आहि। जामे

मारग प्रेम का, सबे सराहे ताहि' ॥ (जायसी)। श्री परकासदास (1666 ई०) के अम्बेर के दीवान को लिखे गये पत्र, तुलसी के फारसी पञ्चनामे, जटमल की 'गोरा-बादल की कथा' तथा इशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' मे भी 'हिंदवी' शब्द ही मिलता है, 'हिंदी' नही।

किंतु ऐसा लगता है कि यह भेद अधिक दिनो तक चला नही। अरबी फारसी-तुर्की के बहुत से आम-फहम शब्द 'हिंदवी' मे आ गये, और दूसरी ओर हिंदुओ एव भारतीय वातावरण के प्रभाव से पर्याप्त भारतीय शब्द मुसलमानो की भाषा मे भी गृहीत हो गये तथा हिंदी हिंदवी दोनो ही शब्द प्राय (किंतु पूर्णत नही) समानार्थी हो गये। यो कुछ विशेष प्रयोगो मे इन शब्दो के मूल अर्थ भी लगभग 18वी सदी उत्तरार्द्ध तक या उसके भी बाद तक चलते रहे। हातिम (18वी सदी उत्तरार्द्ध) ने 'दीवानेजादे' के दीबाचे मे लिखा है—'जबान हर दयार ता बहिंदवी, कि आरा भाका गोयंद।' इससे स्पष्ट है कि हिंदवी और भाषा प्राय एक थी। उसी के कुछ दिन बाद 'तज्किरह मखजन उलगरायब' मे लिखा मिलता है—'दर जबाने हिंदी कि मुराद उर्दू अस्त' अर्थात हिंदी मे जिससे मतलब उर्दू है। किंतु जैसा कि सकेत किया गया है तथा आगे भी कुछ उदाहरणो से स्पष्ट होगा इस प्रकार का अंतर सर्वत्र नही किया गया है। श्री चंद्रबली पाण्डेय ने यह दिखाने का (उर्दू का रहस्य, पृष्ठ 40 48) प्रयास किया है कि 'हिंदवी' हिंदुओं की भाषा नही थी। इसी आधार पर डॉ० उदयनारायण तिवारी (हिंदी भाषा का उद्गम और विकास, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 184) ने भी कदाचित इसे स्वीकार कर लिया है, किंतु पाण्डे जी के तर्क वस्तुत उनके मत को प्रमाणित करने मे समर्थ नही दीखते।

'हिंदी' शब्द का प्रयोग, जब भी और जिसके भी द्वारा हुआ हो, इसके अविच्छिन्न प्रयोग की प्राचीन परम्परा 'दक्खिनी हिंदी' के कवियो एव गद्यकारो मे ही मिलती है। उदाहरणार्थ (1) शाह मीराजी (1475 ई०)— 'या दखत हिंदी बोल' (2) शाह बुर्हानुद्दीन (1582 ई०)— 'ऐब न राखें हिंदी बोल' ('इर्शादनामा' मे), (3) मुल्ला वजही (1635 ई०)— 'हिंदोस्तान म हिंदी जबान सो ('सबरस' की भूमिका म), (4) जुनूनी (1690 ई०)—'मैं इसको दर हिंदी जबाँ इस वास्ते कहन लगा (मौलाना रूम के 'मोजजा' के अनुवाद मे)। इसके साथ साथ हिंदवी शब्द भी प्रयुक्त हो रहा था। 17वी सदी से 'हिंदी' शब्द उत्तर भारत मे भी अविच्छिन्न रूप से मिलने लगता है। उदाहरणार्थ शफी खा के 'मुनतखबुल्लबाब' (17वी सदी उत्तरार्द्ध), मिर्जा खा के 'तुहफतुल हिंद' (1676 ई०) बरकतुल्ला पेमी के 'अवारिफे हिंदी (लगभग 1700 ई०) तथा 'मआसिरुल उमरा (1742 1747) आदि मे। हिंदी कवियो मे 1773 ई० म सूफी कवि नूर मुहम्मद ने लिखा है—'हिंदू मग पर पाव न राख्यौं। का जो बहुतै हिंदी भाख्यौं ॥' इससे सकेत यह मिलता है कि इस काल तक आते-आते 'हिंदी' शब्द हिंदुओ की भाषा की ओर झुक गया था और इसम

से हिंदुओं की शब्दावली निकालकर, फारसी शब्दों के आधार पर उर्दू की नींव पड़ रही थी। 1800 ई० के लगभग मुरादशाह लिखते हैं —

विझोड़ा फारसी के उस्तख्वा को
किया पुर मग्ज तब हिंदी ज़बाँ को
फसाहत फारसी से जब निकाली
लताफत शेर में हिंदी के डाली।

इस प्रकार जैसा कि हम आगे देखेंगे, 'हिंदी' शब्द का प्रयोग इसके विरुद्ध सामान्य अर्थों में लगभग 19वीं सदी के मध्य तक मिलता है।

यह ध्यातव्य है कि हिंदवी या 'हिंदी' का प्रयोग यद्यपि मध्यदेश की जनभाषा के लिए चल रहा था और वह उत्तर भारत से दक्षिण भारत में भी जा पहुँचा था, किंतु इसका स्वीकृत भाषाओं में अकबर के काल तक नाम नहीं मिलता। अमीर खुसरो ने अपने ग्रंथ 'नुहेसिहेर' में उस काल की प्रसिद्ध ग्यारह भाषाओं (सिंधी लाहौरी, काश्मीरी, बंगाली, गौडी, गुजराती, तिलंगी मावरी (कोंकणी), ध्रुव समुंदरी, अवधी देहलवी) का उल्लेख किया है, किंतु इनमें 'हिंदवी' या 'हिंदी' नहीं है। अबुलफजल की 'आइने अकबरी' में दी गई बारह भाषाओं (देहलवी, बंगाली, मुलतानी मारवाड़ी गुजराती, तिलंगी, मरहठी, कर्नाटकी, सिंधी, अफगानी बलूचिस्तानी, काश्मीरी) में भी इसका नाम नहीं आता। हाँ एक बात अवश्य विचार्य है। खुसरो और अबुलफजल दोनों ही ने 'देहलवी' का उल्लेख किया है और मध्यप्रदेश की कोई भाषा नहीं ली है। इसका आशय यह हुआ कि खुसरो से लेकर अबुलफजल के काल तक इस भाषा का प्रचलित नाम शायद 'देहलवी' था। 'हिंदवी', 'हिंदी' नाम कदाचित् केवल साहित्य तक ही सीमित थे।

ऊपर यह संकेत किया जा चुका है कि हिंदी शब्द मूलतः मुसलमानों की हिंदी के लिए प्रयुक्त होकर, फिर हिंदुओं की भाषा की ओर आ रहा था। किंतु 19वीं सदी के मध्य के पूर्व तक उर्दू के लेखकों के प्रायः इसका प्रयोग 'उर्दू' या 'रख्ता' के समानार्थी रूप में चल रहा था। हातिम (18वीं सदी उत्तरार्द्ध), नासिख सौदा (1713 1780 ई०) मीर (1719 1758 ई०) आदि ने एकाधिक बार अपने शेरों को 'हिंदी शेर' कहा है। गालिब ने अपने रचना में 'उर्दू', 'हिंदी', 'रेख्ता' को कई स्थलों पर समानार्थी शब्दों के रूप में प्रयुक्त किया है। 1803 ई० लिखित तजकिरह मखजन उलगरायब' में आता है— दरजबान हिंदी कि मुराद उर्दू अस्त। फोर्ट विलियम कॉलेज के हिंदी अध्यापक गिलक्रिस्ट के लेखों से पता चलता है कि वे हिंदी, [illegible] ी, उर्दू तथा रेख्ता आदि को समानार्थी समझते थे, किंतु उनके [illegible] परिनिष्ठित रूप अरबी फारसी मिश्रित [illegible] ी 'हि[illegible] से 'उर्दू' थी। 1820 में उनकी एक कित[illegible] नाम ...य महा हिंदी। पुस्तक पर अंग्रे[illegible] ules

है, जिसमें अरबी फारसी शब्दों का प्रयोग नहीं होता और मुसलमानी आक्रमण Grammar । पुस्तक के भीतर सवत्र ही हिन्दी या रेख्ता शब्द का प्रयोग है, किन्तु व्याकरण उर्दू का है । इसकी भाषा भी अरबी फारसी शब्दों से लदी है, जसा कि नाम (कवानीन-सफ) म भी स्पष्ट है । आशय यह है कि सन् 1800 के आस पास 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग 'उर्दू' तथा 'रेख्ता' के लिए हो रहा था ।

हिन्दी के आधुनिक अथ म प्रयुक्त होने का इतिहास बड़ा विचित्र है । पीछे के नूर मुहम्मद तथा मुरादशाह के उद्धरणों से इस बात का कुछ सकेत मिलता है कि कभी-कभी उसका प्रयोग हिन्दुओ की भाषा या अरबी फारसी के कठिन शब्दों न रहित मध्यदेशीय भाषा के लिए होता था किन्तु ऐसे प्रयोग प्राय अपवाद स्वरूप हैं । प्राय 'हिन्दी' का प्रयोग उस भाषा के लिए मिलता है, जो अरबी-फारसी से भरती जा रही थी, या जो वह भाषा थी जो बाद म विकसित होकर 'उर्दू' कहलाई । जनता म 19वीं सदी के प्राय मध्य तक कुछ अपवादों को छोड़कर 'हिन्दी' का इसी अथ म प्रयोग मिलता है ।[1]

आधुनिक अथ मे हिन्दी शब्द के व्यापक प्रयोग का श्रेय मूलत अंग्रेजों को है। 1800 ई० म कलकत्ते म फोट विलियम कालिज की स्थापना हुई । वहाँ गिलक्राइस्ट हिन्दी या हिन्दुस्तानी के अध्यापक नियुक्त हुए। यदि गिलक्राइस्ट ने मध्यप्रदेश की वास्तविक प्रतिनिधि भाषा को, जो न तो अधिक अरबी फारसी की ओर झुकी हुई थी और न सस्कृत की ओर, अपनाया होता, तो आज हिन्दी-उर्दू नाम की दो भाषाएँ न होती और हिन्दी भाषा एव उसके साहित्य का नक्शा कुछ और ही होता। किन्तु उनकी हिन्दी(जसा कि उनके हिन्दी-व्याकरण के नाम 'क्वानीने-सफ्य नहो हिन्दी' से स्पष्ट है) बहुत ही कठिन उर्दू थी। व सन् 1904 तक अध्यापक रहे, अत वही भाषा हिन्दी कही जाती रही । किन्तु वहाँ के कमचारियो का ध्यान इस बात की ओर गया कि प्रतिनिधि भाषा वह नही है । इसका परिणाम यह हुआ कि 'हिन्दुस्तानी' शब्द तो अरबी फारसी शब्दों से युक्त गिलक्राइस्ट की हिन्दी (जो वस्तुत उर्दू थी) के लिए प्रयुक्त होने लगा और 'हिन्दी' शब्द हिन्दुओं मे प्रचलित सस्कृत मिश्रित भाषा के लिए । इस अथ म हिन्दी' शब्द की परम्परा प्राप्त साहित्य म कहीं-कहीं ही मिलती है । सम्भव है, जनता म उस समय 'हिन्दी' नाम का कुछ अधिक प्रचार रहा हो, जहाँ से अंग्रेजों ने उसे लिया । इस नवीन अथ म 'हिन्दी' का स्पष्ट रूप से लिखित प्रयोग कदाचित् सवप्रथम कप्तान टलर ने किया । 1812 मे फोट विलियम कालिज के वार्षिक विवरण मे व कहते हैं—' मैं केवल हिन्दुस्तानी या रेख्ता का जिक्र कर रहा हूँ जो फारसी लिपि म लिखी जाती है मैं हिन्दी का जिक्र नही कर रहा, जिसकी अपनी लिपि

1 शासन के लोगों म इस रूप मे प्रयुक्त होने पर भी हिन्दी शब्द उर्दू के अथ म साहित्यिकों तथा जनता आदि म 19वीं सदी के लगभग मध्य तक चलता रहा । ग़ालिब ने अपने कई पत्रों मे हिन्दी उर्दू और रेख्ता को प्राय समान अर्थों मे प्रयुक्त किया है ।

से पहले जो भारतवर्ष के समस्त उत्तर-पश्चिम प्रान्त की भाषा थी" (Imperial Records, Vol IV, पृ० 276 77)। इस उद्धरण से यह स्पष्ट है कि उस समय तक 'हिन्दी' शब्द इस अर्थ मे कम से कम कालिज के लोगो मे कुछ समझा जाने लगा था, किन्तु बहुत अधिक नही, क्योंकि उसे 'हिन्दुस्तानी' या 'रेख्ता' से अलग स्पष्ट करने की आवश्यकता अभी समाप्त नही हुई थी जैसा कि टेलर के कथन से स्पष्ट है। उक्त कालिज मे हिन्दी उर्दू (या हिन्दुस्तानी) का यह अलगाव बढता ही गया। 1824 मे उक्त कालिज के हिन्दी प्रोफेसर विलियम प्राइस ने स्पष्ट शब्दो मे हिन्दी के लगभग सभी शब्दो के संस्कृत के होने की बात कही तथा हिन्दुस्तानी के शब्दो के अरबी फारसी के होने की। 1825 मे कालिज के वार्षिक अधिवेशन के भाषण मे लार्ड ऐमहर्स्ट ने 'हिन्दी' भाषा को हिन्दुओ से सम्बद्ध कहा तथा उर्दू' को उनके लिए उतनी ही विदेशी कहा, जितनी 'अंग्रेजी'। इस प्रकार अंग्रेजो ने, जिस नीयत से भी किया हो, 19वी सदी के प्रथम 25 वर्षों मे एक ओर हिन्दवी' या हिन्दी देवनागरी संस्कृत हिन्दू' शब्दो को जोड दिया, तो दूसरी ओर 'हिन्दुस्तानी रेख्ता या उर्दू फारसी लिपि अरबी फारसी मुसलमान' शब्दो को। सम्भवत शासन के ही इशारे पर 1862 मे हिन्दी उर्दू का प्रश्न शिक्षा के संयोजको के समक्ष आया और इस प्रकार 19वी सदी के तीसरे चरण मे 'हिन्दी' आजकल के अर्थ मे निश्चित रूप से स्वीकृत हो गई। उर्दू और हिन्दी भाषा को लेकर उस काल मे कितनी गरमागरमी थी, इसके चित्र 'सितारे हिन्द' और भारतेन्दु उपाधि की अन्तकथा मे मूर्तिमान है।

इस तरह नामो के अध्ययन मे एक तरफ तो भाषाविज्ञान, इतिहास, समाजशास्त्र, संस्कृति, भूगोल आदि की जानकारी अपेक्षित होती है, और दूसरी ओर शब्दो का अध्ययन भाषा इतिहास, समाजशास्त्र, संस्कृति तथा प्राचीन भूगोल आदि पर प्रकाश डालने के लिए बडी उपयोगी सामग्री प्रस्तुत करता है।

9

शब्दध्वनिविज्ञान

यहा 'शब्दध्वनिविज्ञान' शब्द का प्रयोग भाषा विशेष म प्रयुक्त शब्दा के आधार पर उस भाषा की ध्वनियो के अध्ययन के लिए किया जा रहा है। अग्रजी म इस अथ म 'वडफोनॉलजी' का प्रयोग होता है। इस या भी कहा जा सकता है कि इसके अतगत किसी भाषा के शब्दो का ध्वनि की दृष्टि से अध्ययन किया जाता है।

वस्तुत समग्रत किसी भाषा की ध्वनि व्यवस्था का अध्ययन तथा मात्र शब्दा क आधार पर उसकी ध्वनि-व्यवस्था के अध्ययन म थोडा अतर होता है। इस प्रसग मे मुख्यत दो तीन बातें कही जा सकती हैं। एक तो यह कि शब्दध्वनि-विज्ञान मे मात्र शब्दा की रचना म प्रयुक्त होने वाली सधियो का अध्ययन आता है, किंतु यदि भाषा की पूरी व्यवस्था को लें तो कुछ सधियाँ वाक्य म प्रयुक्त दो शब्दा के बीच म भी उच्चारण के स्तर पर मिलती हैं। जसे मार+डाला= माडडाला, दूध+दो=दूद्दो। इस तरह की सधिया शब्द स्तर पर प्राय नही मिलती। दूसरे, यदि तान भाषाओ (Tone language) की बात छोड दें तो हिंदी आदि भाषाओ म अनुतान (Intonation) शब्द के स्तर पर न होकर वाक्य स्तर पर होता है अत भाषा की सामान्य ध्वनि व्यवस्था म तो अनुतान किया जायगा किंतु एसी भाषाओ के शब्दध्वनिविज्ञान मे यह नही आएगा। हा, तान भाषाओ मे शब्द स्तर पर तान (Tone) को अवश्य लिया जाता है। ऐसे ही सगम, विवति या सहिता (Juncture) का विचार भी शब्दध्वनिविज्ञान मे नही किया जाता।

शब्दध्वनिविज्ञान मे सबसे पहले भाषा विशेष क शब्दो म आने वाली ध्वनियो म स्वनिमो का निर्धारण करते हैं। ये स्वनिम, स्वर तथा व्यजन आदि खड्य भी होने है तथा दीघता अनुनासिकता आदि खडयतर भी। साथ ही सयुक्त व्यजन व्यजन अनुक्रम, सयुक्त स्वर, स्वरानुक्रम तथा अक्षर आदि की व्यवस्था का भी विश्लेषण किया जाता है। (विस्तार के लिए देखिए, प्रस्तुत लेखक की पुस्तक भाषाविज्ञान का 'ध्वनिविज्ञान शीर्षक अध्याय।)

शब्दध्वनिविज्ञान मे ध्वनियो के निर्धारण मे यह ध्यान रखना चाहिए कि लिखित सामग्री मे शब्दो की वतनी ध्वनियो या उच्चारण की दृष्टि स कभी-कभी बहुत भ्रामक होती है। अत अध्ययन म हमारा ध्यान उच्चारण पर होना चाहिए, वतनी पर नहा। इस दृष्टि से कई बातें सकेत्य हैं जो आगे दी जा रही ह।

शब्दो मे ध्वनियाँ आसपास की ध्वनियो से प्रभावित होती हैं। होता यह है कि प्राय आगे आनेवाली ध्वनि के उच्चारण की तैयारी मे उच्चारण-अवयव पूववर्ती ध्वनि का उच्चारण परवर्ती ध्वनि के अनुरूप कर देते हैं। उदाहरण के लिए जब हम डाकघर' शब्द बोलते हैं तो वस्तुत 'डाकघर' नही कहते। घ' का उच्चारण करने के लिए स्वरतन्त्रिया पहले से एक दूसरे के समीप आ जाती हैं। अत पूववर्ती ध्वनि 'क 'ग हो जाती है। 'घ के घोष होने के कारण 'क का घोष रूप 'ग' हो जाता है अर्थात घोष हो जाने की प्रक्रिया काम करती है। इसका आशय यह हुआ कि जिस रूप मे कोई भी भाषा लिखी जाती है उसी रूप मे यदि कोई पढने का यत्न करे तो उस भाषा का स्वाभाविक उच्चारण वह नही कर सकता। इस तरह, इस दृष्टि से शब्दो का अध्ययन, शब्दो का ठीक उच्चारण जानने के लिए आवश्यक है। उच्चारण मे यदि कोई व्यक्ति इन बातो का ध्यान न रखे तो वह शब्दो का ठीक उच्चारण नही कर सकता। हिन्दी शब्दो का इस दृष्टि से विश्लेषण किया गया है जिसके कुछ प्रमुख निष्कर्ष निम्नांकित हैं —

(1) शब्द के मध्य या अन्त मे आने वाला कोई ऐसा संयुक्त व्यंजन जिसका दूसरा सदस्य य, व, र या ल हो, उच्चारण मे तीन व्यंजनो का युक्त रूप हो जाता है, क्योंकि प्रथम व्यंजन द्वित्व या दीर्घीकृत हो जाता है

वर्तनी	वास्तविक उच्चारण
उपन्यास	उपन्न्यास
अन्य	अन्न्य
कन्या	कन्न्या
शक्य	शक्क्य
अन्वय	अन्न्वय
परिपक्व	परिपक्क्व
तत्व	तत्त्व
चक्र	चक्क्र
अजस्र	अजस्स्र
अक्ल	अक्क्ल

(2) उपर्युक्त परिस्थितियों मे यदि प्रथम व्यंजन महाप्राण हो तो उसके पूर्व एक अल्पप्राण व्यंजन आ जाता है —

अभ्यास	अब्भ्यास
सभ्य	सब्भ्य
मुख्य	मुक्ख्य
मध्य	मद्ध्य
मध्व	मद्ध्व

(3) यदि पूववर्ती अक्षर (syllable) की अ तिम ध्वनि क, च, ट, त, प, हो और परवर्ती अक्षर की प्रथम ध्वनि घोप व्यजन हो तो क, च, ट, त, प, क्रमश ग, ज, ड, द, व हो जाते हैं —

डाकघर	डाग्घर
नाचघर	नाज्घर
ठाटबाट	ठाड्बाट
मतदाता	मद्दाता
धूपबत्ती	धूब्बत्ती

(4) इसके विपरीत यदि परवर्ती अक्षर की प्रथम ध्वनि अघोप व्यजन हो तो पूववर्ती अक्षर के अ त मे आने वाले ग, ज, ड, द, ब क्रमश क, च, ट, त, प हो जाते है —

नागपुर	नाक्पुर
आजकल	आच्कल
बदतमीज़	बत्तमीज़
किताबकापी	किताप्कापी

(5) उपर्युक्त परिस्थितियो मे पहले ख, छ, ठ, थ, फ हो तो क्रमश क, च, ट त, प हो जात हैं —

लेखपाल	लेक्पाल
पूछताछ	पूच्ताछ
अठपहला	अटपह्ला
हाथपाँव	हात्पाँव
हाँफकर	हाँप्कर

सस्कृत सधि के नियम भी इसी प्रकार थे। एक बडी अजीब बात है कि यद्यपि विश्व के सभी लोगो के उच्चारण अवयव प्राय समान होते हैं किन्तु इस प्रकार के नियम विभिन्न भाषाओ मे अलग-अलग होते है। उदाहरण के लिए ऊपर हमने देखा कि पूववर्ती ध्वनि, परवर्ती से प्रभावित हो रही थी। अग्रेजी मे बात ठीक उलटी है। परवर्ती ध्वनि पूववर्ती से प्रभावित होती है। इसी कारण dogs, clubs, buds के उच्चारण डॉग्ज़, क्लब्ज़, बडज़ होते हैं। यदि ये शब्द हिन्दी मे होते तो इनके उच्चारण डॉक्स, क्लप्स, बटस हो जाते। तो, इस तरह वतनी उच्चारण की दृष्टि से भ्रामक होती है।

ऊपर पार्श्ववर्ती ध्वनियो के प्रभाव के कारण परिवतन से वतनी और उच्चारण मे अ तर की बात की जा रही थी। शब्दा की वतनी और उच्चारण मे एक अन्य प्रकार का भी अ तर मिलता है, और उसका भी अध्ययन शब्दध्वनिविज्ञान

मे अपेक्षित है। होता यह है कि प्रारंभ मे जब कोई भी भाषा लिखी जाती है, तो शब्दो की वतनी उच्चारण के अनुकूल होती है, किन्तु वतनी तो वही रहती है और उच्चारण परिवर्तित होता चला जाता है। उच्चारण मे जितना ही अधिक परिवतन होता है वतनी और उच्चारण के बीच की खाई उतनी ही ज्यादा बढ़ती चली जाती है। अंग्रेजी मे डाटर डाग्हटर (daughter), टॉक टॉल्क (talk), नाक्नोव (Know), साइकालजी प्साइकालजी (psychology), नॉ ग्नॉ (gnaw), हैच-हैट्च (hatch) मे यह अन्तर स्पष्ट है।

हिन्दी मे प्राय लोग समझते है कि उच्चारण और वतनी मे कोई अन्तर नही है किन्तु वास्तव मे यह बात नही है। कुछ प्रमुख अन्तर निम्नांकित है —

(1) हिन्दी शब्दो के लेखन मे अक्षरांत अ वतनी मे तो है, किन्तु उच्चारण मे नही है राम—राम आवश्यक्ता—आवश्यकता, अप्ना—अपना, बोल्चाल्—बोलचाल, फार्सी—फारसी, चल्ना—चलना।

(2) अनेक तत्सम शब्दो मे हम ष का प्रयोग करते हैं किन्तु वास्तविक उच्चारण मे श बोलते है शेश—शेष वश—वष, विशम—विषम।

(3) इसी प्रकार कुछ तत्सम शब्दो मे हम ऋ लिखते हैं किन्तु बोलने मे हम 'रि' बोलते है क्रिश्ड़ँ—कृष्ण, रितु—ऋतु क्रिपा—कृपा, क्रित—कृत।

(4) जिसे हम ण लिखते हैं उसका भी अधिकांश भाषियो मे उच्चारण ड़ँ हो गया है क्रिष्ड़ँ—कृष्ण, प्रड़ँ—प्रण, मड़ि—मणि, विशड़ँ ड़ँ—विपण्ण।

(5) विसर्ग को हम ह उच्चरित करते है प्रायह—प्राय, विशेशतह—विशेषत क्रमशह—क्रमश।

(6) ज्ञ का मूल उच्चारण ज+ञ था, आज लिखते तो ज्ञ ही हैं किन्तु आर्यसमाजी लोग इसका उच्चारण ज्य या ज्यँ करते है तथा अन्य लोग इसे ग्य या ग्यँ बोलते है। मराठी आदि अन्य भाषाओ मे इसका उच्चारण तो और भी भिन्न है। ज्यान ज्यान ग्यान ग्यान द्नान—ज्ञान।

(7) [illegible] का मूल उच्चारण क+ष् है किन्तु अब इसे बहुत से लोग क्+श् बोलते है दक्श—दक्ष, कक्शा—कक्षा।

(8) कुछ फुटकल शब्द ऐसे हैं जो लिखे तो और तरह से जाते हैं किन्तु बोले और तरह से जाते हैं —

लिखित रूप	उच्चरित रूप
साहित्यिक	साहित्तिक
स्थायी	स्थाई
गयी	गई (ऐसे भी लिखित)
गये	गए („ „ „)
लिये	लिए („ „ „)

रखा	रक्खा
दो	धो (कुछ लोगों द्वारा उच्चरित)
नब्बे	नव्वे, नब्बे, नब्भे
उत्तरदायी	उत्तरदाई
द्विवेदी	दुवेदी

शब्दों की ध्वनियों का सांख्यिक अध्ययन भी किया जा सकता है। इससे पता चलता है कि विभिन्न स्वरों और व्यंजनों का अनुपात क्या है। इसके आधार पर टाइपराइटर, आशुलिपि, प्रेस में तो सहायता मिलती ही है, किसी व्यक्ति की शैली का अध्ययन भी किया जा सकता है।[1] विश्व की अनेक भाषाओं में ध्वनियों की गणना के प्रयास विभिन्न दृष्टियों से हुए हैं। 1874 में ह्विटनी ने अंग्रेजी ध्वनियों पर काम किया। 1913 में मार्कोव ने पुश्किन की एक रचना के आधार पर रूसी भाषा में स्वरों और व्यंजनों के साथ-साथ आने के नियम निकाले। हिंदी ध्वनियों की गणना पर भी देश और विदेश में कार्य हुए हैं। मेरी अपनी गणना के अनुसार हिन्दी में लगभग 21 22 प्रतिशत अघोष ध्वनियों का तथा 78 79 प्रतिशत घोष ध्वनियों का प्रयोग होता है। 'हिन्दी के स्वर और व्यंजनों में कौन अधिक प्रयुक्त होते हैं और कौन कम', इस बात का अध्ययन कई लोगों ने किया है। मेरी अपनी गणना के अनुसार हिन्दी स्वरों का प्रयोग क्रम (अधिक प्रयुक्त स्वर पहले हैं, और कम प्रयुक्त बाद में) अ, आ, ए, ऐ, ओ, उ, ऐ, औ, ऊ है। व्यंजनों का क्रम है क, र, न, त, स, म, प, ह, ग, ल, य, द, ज, श, ग, ब, च, थ, भ, ध, ख, ट, ड, ण, छ, ड़, फ, ठ, प, ष, ढ, अ। इसी प्रकार की गणना हिन्दी को लेकर रूस में भी हुई है तथा पूना में भी। उन लोगों के परिणाम आपस में भी थोड़े भिन्न हैं, तथा मेरे परिणाम से भी कुछ भिन्न हैं। स्वर व्यंजन दोनों को साथ रखें तो क्रम अ, आ, क, र, ए, न, त, इ, ई, स, म, प, ह य, ल, आ, उ, व द, ज, श, ग, ऐ ब, च, ग, भ, औ, ध, ऊ, ख, ट, ऋ, ण, छ, ड़ फ ठ, ध, प, ट, ब आता है।

हर भाषा में ध्वनिक्रम एक समान नहीं होते। हिन्दी स्वरों एवं व्यंजनों की सम्मिलित क्रम-सूची ऊपर दी गई है। नीचे दी जा रही गुजराती की सूची इससे तुलनीय है अ, आ, न, ए र, ई, ओ, म, क, य, त, स, प, उ, ल, व, ण, ह, द, ग, थ, ण, छ, ध, ब, घ, श, इ, ट, ड, च, ख, ल, भ, फ, उ, ज, ठ, श, ढ, ऐ, झ, औ। इसमें ङ ञ नहीं है। उल्लेख्य है कि इसीलिए यदि हिन्दी और गुजराती के वर्णमाला क्रम टाइपराइटर बने तो दोनों में भी कोई एक जैसे नहीं होंगे।

1 Vowels and Consonants as features of style ... of Goethe and Klopstock - F. C. Ryder, ...
पृ० 89—110

ध्वनियों का ऐतिहासिक अध्ययन, ध्वनि परिवर्तन और उसके कारणों से सम्बद्ध है। ध्वनियों में परिवर्तन लोप (ध्वनि का लुप्त हो जाना—स्थाली थाली, एकादश ग्यारह, द्वादश बारह, कोकिल कोयल), आगम (किसी नई ध्वनि का आ जाना—अस्थि हड्डी, भक्त भगत, दर्जन दर्जन, समुद्र समुंदर), विपर्यय (दो ध्वनियों का एक दूसरे के स्थान पर चला जाना—वाराणसी-बनारस चिह्न चिन्ह, ब्राह्मण ब्राम्हण, बर्फ-बफ), समीकरण (दो असमान ध्वनियों का समान हो जाना—चक्र-चक्की पत्र पत्ता धर्म (प्राकृत में) धम्म), विषमीकरण (दो समान ध्वनियों का असमान हो जाना। यह प्रवृत्ति बहुत कम मिलती है तथा जिन शब्दों में मिलती भी है, उन्हें और रूपों में भी देखा जा सकता है। लांगूली लंगूर) महाप्राणीकरण [अल्पप्राण का महाप्राण हो जाना—सब सभ (भोजपुरी में) नब्बे नब्भे (पश्चिमी हिंदी के उच्चारण में), वप भेप], अल्पप्राणीकरण (महाप्राण का अल्प प्राण हो जाना—आज बोलने में प्रायः हम भूख के स्थान पर भूक तथा हाथ के स्थान पर हात कहते हैं। उर्दू में तो भूक धोका लिखते भी हैं), घोषीकरण अघोष ध्वनि का घोष हो जाना—मकर मगर, कङ्कण-कंगन, कुंचिका-कुंजी) स्वत अनुनासिकता (श्वास सांस अश्रु आंसू, भ्रू भौं, सर्प सांप) आदि रूपों में होता है तथा इसके कारण मुख सुख या उच्चारण-सुविधा अज्ञान, भ्रामक व्युत्पत्ति, बोलने में शीघ्रता, लेखन आदि हैं (विस्तार के लिए देखिए लेखक की पुस्तक 'भाषाविज्ञान' के 'ध्वनिविज्ञान' शीर्षक अध्याय का 'ध्वनि परिवर्तन' शीर्षक अंश)।

ऐतिहासिक ध्वनिविज्ञान के शब्दों में हुए ध्वनि-परिवर्तनों के अध्ययन विश्लेषण और वर्गीकरण के आधार पर ध्वनि परिवर्तन-संबंधी नियमों का भी निर्धारण होता है। ग्रिम ग्रासमान और वर्नर के प्रसिद्ध ध्वनि नियम (देखिए लेखक की पुस्तक भाषाविज्ञान के 'ध्वनिविज्ञान' अध्याय का 'ध्वनि नियम' शीर्षक अंश) इसी प्रकार के हैं। हिंदी में भी इस प्रकार के कुछ नियमों का निर्धारण (विस्तार के लिए देखिए लेखक की पुस्तक 'हिंदी भाषा' के प्रथम अध्याय 'ध्वनि' में 'हिंदी शब्दों में ध्वनि परिवर्तन संबंधी सामान्य नियम' शीर्षक अंश) किया गया है। हिंदी के प्रमुख ध्वनि नियम निम्नांकित हैं —

(1) क्षतिपूरक दीर्घीकरण का नियम—संस्कृत शब्दों में संयुक्त या दीर्घ (द्वित्त) व्यंजनों के पूर्व यदि ह्रस्व स्वर हो तो हिंदी में उस ह्रस्व स्वर के स्थान पर दीर्घ स्वर हो जाता है कर्म-काम सप्त सात अष्ठ आठ सर्प सांप, भिक्षा भीख, जिह्वा जीभ, दुग्ध दूध, अंगुष्ठ-अंगूठा।

(2) तुर्की फारसी-अरबी के शब्दांत के विशेष ह (हा इ-मुख्तफी) के आ हो जाने का नियम—वस्तह -वस्ता खजानह -खजाना, किनारह् किनारा, कुत्तह कुत्ता गुस्सह -गुस्सा, तमाशह -तमाशा।

(3) महाप्राणों के 'ह' हो जाने का नियम—संस्कृत शब्दों के हिंदी में तद्भव होने पर स्वरमध्यम महाप्राण ध्वनियां 'ह' में परिवर्तित हो जाती हैं मुख मुंह

प्राघूणक पाहुना मघ मेह, यूथी जूही, गाधूम गेहूँ, दधि दही, कटकफल कटहल, आभीर-अहीर गदभ गदहा। अपवाद स्वरूप कुछ शब्दों म अन्य स्थितियो म होने पर भी महाप्राण का ह हो जाता है। जैसे 'भू' (धातु) का 'हो'।

(4) सस्कृत शब्दो मे स्वर मध्यम 'म' का 'व' हो जाने का नियम—श्यामल-सावला, आमलक-आँवला, ग्राम गाँव कमल-कँवल, कुमार कुँवर, धूम धुवाँ। ऐसे शब्दो म प्राय, पूववर्ती स्वर अनुनासिक हो जाता है।

उपयुक्त नियम स्वरो तथा मूल व्यजनो के सबध मे थे। इसी प्रकार सयुक्त व्यजनो के सबध मे भी नियमो का निधारण किया जा चुका है (दे० वही)।

ऐसा प्राय होता है कि किसी एक भाषा से शब्द एक स अधिक भाषाओ मे जाते हैं और उन अलग-अलग भाषाओ मे उसका रूप (ध्वनि की दृष्टि से) अलग अलग हो जाता है। उदारण के लिए सस्कृत म 'सपत्नी' शब्द था हिन्दी म इस उसका रूप 'सौत' बना किन्तु पजाबी मे 'सौकन' हो गया (आगे 'व्युत्पत्तिविज्ञान' नामक अध्याय म इस शब्द पर विस्तार से विचार किया गया है)। ऐसे परिवतनो का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। कैसे एक ही शब्द कई भाषाओ मे जाकर अनेक रूप धारण कर लेता है? होता यह है कि हर भाषा की अपनी विशेष ध्वनि व्यवस्था होती ह। इसी कारण एक ही शब्द विभिन्न ध्वनि-व्यवस्थाओ म जाकर विभिन्न रूप धारण कर लेता है। कभी कभी तो ऐसा हो जाता है कि उसे पहचानना भी कठिन (जैस सस्कृत अध्यापक>मैथिली झा) हो जाता है। नीचे इस प्रकार के कुछ बहुरूपी शब्द दिए जा रहे है।

(1) सस्कृत कुठारक>पजाबी कुल्हाडा, गुजराती कुहाडो, मराठी कुरहाड
(2) सस्कृत अक्षयततीया>मराठी अखजा, हिन्दी आखातीज
(3) सस्कृत कच्छप>हिन्दी कछुआ, उडिया केछु मराठी कासव
(4) सस्कृत उपाध्याय>सिंधी वाझो, हिन्दी ओझा मराठी वाजा
(5) सस्कृत कपित्थ>भोजपुरी कइँत, सिंधी कविटु हिन्दी कथ
(6) सस्कृत अक्षोट>गुजराती अखोड, हिन्दी अखरोट
(7) सस्कृत अग्निष्ठिका>हिन्दी अगीठी, मराठी आकिट
(8) सस्कृत कुष्माड>हिन्दी कुम्हडा, बगाली कुमडा, भोजपुरी कोहडा, आसामी कोमोरा
(9) सस्कृत गुड>हिन्दी गुड, भोजपुरी गुर, गुजराती गाळ
(10) सस्कृत कृत्तिका>सिंधी कत्यू, मराठी कात्या, सिंहली कति, भोजपुरी कच
(11) सस्कृत कवत>हिन्दी केवट, भोजपुरी खेवट, सिंहली केवुळा
(12) सस्कृत कोकिल>सिंहली कोवुला, भोजपुरी कोइलर, हिन्दी कोयल
(13) सस्कृत केदारिका>भोजपुरी कियारी, हिन्दी क्यारी
(14) सस्कृत गभ>पजाबी गब्भ, बगाली गाब, हिन्दी गाभा, भोजपुरी गोभा

(15) सस्कृत कपद, कपर्दिका>हिन्दी कौडी, मराठी कवडा, सिंहली कवडिय, भोजपुरी कउडी
(16) सस्कृत बदर>मराठी भेर, हिन्दी बर, भोजपुरी बइर
(17) सस्कृत मुकुन>बगाली बोल, हिन्दी बौर, भोजपुरी मउर, गुजराती मोहोर
(18) सस्कृत चत्वारिंशत्>पजाबी चाली, हिन्दी चालीस, गुजराती चालीश
(19) सस्कृत छाया>उड़िया छाँइ, हिन्दी छाँव, छाँह, सिंहली सया
(20) सस्कृत घृत>सिंहली गिय, भोजपुरी घीउ, घीव, हिन्दी घी, पजाबी घ्यो
(21) सस्कृत सम्बन्धी>भोजपुरी समधी, उडिया समुदी
(22) अरबी शोरबा>भोजपुरी सुरुवा, उडिया सुरुआ, हिन्दी शारबा
(23) पुर्तगाली Papaia>हिन्दी पपीता, तमिल पप्पइ, नेपाली पपिता, मराठी पपया
(24) पुर्तगाली Ananas>हिन्दी अनन्नास, उडिया अनारस, सिंधी अनानसु, गुजराती अनेनस, अन्नस, मराठी अननस
(25) अग्रेजी Platoon>हिन्दी पलटन, मराठी पलटण
(26) अग्रेजी pencil>हिन्दी पेंसिल, भोजपुरी पिनसिन, बोलचाल की पजाबी पिलसन, पिलसण, बगाली पेंशिल
(27) अग्रेजी School>हिन्दी स्कूल, भोजपुरी इस्कूल, कुछ अवधी क्षेत्रों में अस्कूल, पजाबी सकूल, गुजराती स्कुल, उडिया इस्कुल, बगाली इस्कुल
(28) अग्रेजी Station>हिन्दी स्टेशन, पजाबी असटेशन, सटेशन, भोजपुरी इस्टेसन, टेसन, टीसन
(29) अग्रेजी private>हिन्दी प्राइवट, भोजपुरी पराइवट, मराठी प्रायव्हेट, उडिया प्राइभेट, तमिल पिरवट
(30) अग्रेजी Doctor>हिन्दी डाक्टर, भोजपुरी डगडर, उडिया डाक्तर
(21) अग्रेजी Hospital>हिन्दी अस्पताल पजाबी हस्पताल, गुजराती इस्पिताल, मराठी इस्पितळ, तमिल आस्पत्रि
(32) अग्रेजी Jail>हिन्दी जेल, भोजपुरी जेहल, तमिल चेजिल, जेजिल

10
व्युत्पत्तिविज्ञान

व्युत्पत्तिविज्ञान शब्दविज्ञान की एक शाखा है जिसमे शब्दो के पूरे इतिहास का अध्ययन किया जाता है। इतिहास मे उस शब्द का अध्ययन तो आता ही है, साथ ही उसको बनानेवाले भाषिक घटको (जैसे प्रकृति, प्रत्यय आदि) के भी विकास का अध्ययन आता है। इस तरह शब्द का उद्गम, उसकी रचना और उसका विकास तीनो ही इसके अतगत आते हैं। इस अध्ययन के लिए हिन्दी मे 'व्युत्पत्ति' के अतिरिक्त 'निरुक्त' या 'निवचनशास्त्र' शब्द भी चलते है।

निरुक्त' शब्द सस्कृत व्याकरण के अनुसार निस्+वच्+क्त से बना है। यो तो सस्कृत साहित्य मे ब्राह्मण, उपनिषद तथा महाभारत आदि मे इस शब्द का प्रयोग 'उच्चरित', 'अभिव्यक्त' तथा 'परिभाषित' आदि अनेक अर्थों मे हुआ है, किन्तु उसका मूल अथ 'अलग-अलग करके कहना' या 'अलग-अलग करके कहा हुआ' है तथा उसका मुख्य प्रयोग शब्द की व्युत्पत्तिमूलक व्याख्या के लिए हुआ है। इस अथ मे यह शब्द छादोग्य उपनिषद् (8 3 3) तथा महाभारत (1 266) आदि कइ ग्रथो म मिलता है। इसी अथ के आधार पर निरुक्त' नाम से कई प्राचीन ऋषियो ने वदिक शब्दो की व्युत्पत्तिमूलक व्याख्या के लिए ग्रन्थ लिखे जिनम अब केवल यास्क का 'निरुक्त' ही उपलब्ध है।

'निवचन' शब्द 'निरुक्त' से केवल इस बात मे भिन्न है कि 'निरुक्त' विशषण तो है ही, भाववाचक सज्ञा भी है क्योकि 'क्त' प्रत्यय दोनो अर्थों मे आता है, जब कि निवचन' केवल सज्ञा है। अर्थात 'निवचन' केवल 'निरुक्त' की प्रक्रिया है, जबकि 'निरुक्त' प्रक्रिया भी है और वह भी है 'जिसका निवचन किया गया हो। उसकी रचना 'निस+वच्+ल्युट' रूप मे हुई है तथा इसका अथ है 'अलग-अलग करके कहना।

'व्युत्पत्ति' शब्द 'पद' धातु से बना है जिसका अथ है 'गति करना'। इसमे वि+उत उपसग तथा क्तिन (भाववाचक अथ मे) प्रत्यय हैं। 'व्युत्पत्ति' शब्द का भी निरुक्त' की भाति ही एकाधिक अर्थों मे प्रयोग मिलता है, किन्तु भाषाशास्त्र के प्रसग मे उसका अथ व्याकरणिक विश्लेषण है अर्थात इसमे शब्द को विश्लेषित करके धातु उपसग प्रत्यय आदि का निर्देश किया जाता रहा है।

इस प्रकार निरुक्त मे शब्द विशेष की धातु आदि का निर्देश करके अथ को स्पष्ट करने पर बल होता है तो व्युत्पत्ति मे केवल धातु उपसग, प्रत्यय आदि

व्याकरणिक इकाइयों का निर्देश करने पर। यों आज व्युत्पत्ति में जैसा कि पीछे कहा जा चुका है शब्द का एक प्रकार से सर्वांगीण विकासात्मक अध्ययन आता है।

हर नई चीज का विकास आवश्यकतावश ही होता है। हमारे यहाँ प्राचीन काल में बोलचाल की भाषा जैसे जैसे वैदिक भाषा से दूर हटती गई वैदिक भाषा को समझना और उसका ठीक उच्चारण या पाठ करना लोगों के लिए कठिन होता गया। किन्तु वैदिक ऋचाओं का अध्ययन-अध्यापन तत्कालीन पंडित वर्ग के लिए एक प्रकार से अनिवार्यतः आवश्यक था परिणामतः इस कठिनाई को दूर करने के लिए दो शास्त्रों का विकास हुआ। अर्थ समझने के लिए निरुक्त या निर्वचनशास्त्र का तथा ठीक उच्चारण के लिए शिक्षाशास्त्र का।

यों शब्दों के निर्वचन करने के प्राचीनतम उदाहरण ऋग्वेद में मिलते हैं, जिससे यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि कदाचित शब्दों की निरुक्ति देने की मौखिक परम्परा निरुक्त से काफी पुरानी थी। आज भी कभी कभी सामान्य लोग इस प्रकार के अनुमान लगाते पाये जाते हैं।

निर्वचन या निरुक्त का प्राचीनतम रूप अनुमानाश्रित अधिक रहा होगा। धीरे धीरे समय के साथ उसमें वैज्ञानिकता आती गई होगी। यास्क के निरुक्त तक आते-आते इसमें काफी कुछ शास्त्रीयता आ गई थी, किन्तु फिर भी उसमें अनुमान का अंश बिल्कुल न रहा हो ऐसी बात नहीं। व्याकरण शास्त्र कदाचित् निरुक्त या निर्वचन का ही विकसित रूप है। इसी कारण व्याकरण के आधार पर शब्द विश्लेषण के उदाहरण बहुत पुराने नहीं मिलते, जबकि निरुक्त के उदाहरण बहुत पुराने भी मिल जाते हैं। यह भी कहना कदाचित अन्यथा न हो कि अंतिम निरुक्तकार यास्क के बाद ही सच्चे अर्थों में व्याकरण की परम्परा चली। वह काल संधिकाल है। उसके पूर्व निरुक्तकार ही प्रायः भाषा का विश्लेषण करते थे। उसके बाद व्याकरण ने इसका स्थान ले लिया। यों यास्क भी व्याकरण के महत्त्व से अपरिचित नहीं थे इसीलिए निरुक्तकार के लिए व्याकरण का ज्ञान उन्होंने आवश्यक माना है।

अंग्रेजी में व्युत्पत्ति को यों तो डेरिवेशन (derivation) भी कहते हैं, किन्तु इसके लिए मुख्य शब्द एटिमॉलजी (etymology) चलता है। अंग्रेजी में यह शब्द फ्रांसीसी शब्द etymologie से आया है और वहाँ यह शब्द लैटिन etymologia का विकसित रूप है। लैटिन का भी यह अपना शब्द नहीं है। वहाँ ग्रीक से आया है। ग्रीक 'एतिमॉलोजिया' के मूल में दो शब्द हैं एतिमास (etymos) और लागोस (logos) पहले शब्द का अर्थ 'यथार्थ', 'सच्चा' या 'ठीक' है और दूसरे का 'शब्द' या लेखा जोखा। इस तरह इसका मूल अर्थ हुआ 'यथार्थ या सच्चा शब्द' या 'शब्द के सच्चे अर्थ का लेखा जोखा'। प्रसिद्ध स्टोइक दार्शनिक क्रिसिपॉस (Chrysippos) ने जिनका काल तीसरी सदी ई० पू० है, एक ग्रन्थ 'एतिमॉलोजिका' लिखा था, जिसमें शब्दों के ठीक अर्थ की छानबीन थी। कहना

न होगा कि 'निरुक्त' भी मूलत इसी के समकक्ष था, और दोनो देशो में इन दोनो का विकास कदाचित् एक ही प्रकार की आवश्यकता के कारण हुआ, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। प्राचीन यूनान में 'एतिमॉलोजी' भाषाविज्ञान की शाखा न होकर दर्शन की एक शाखा थी, जिसमे शब्द द्वारा व्यक्त भाव की यथार्थ जानकारी के लिए उसके मूल आदि का अध्ययन किया जाता था। वस्तुत यूनानी और रोमन लोगो के लिए यह शास्त्र किसी शब्द का मूल अर्थ ज्ञान करने का साधन मात्र था। आज की तरह शब्द की उत्पत्ति और उस का इतिहास जानना इसका साध्य नही था। उत्पत्ति और इतिहास पर विचार होता भी था तो साध्य रूप मे नही अपितु शब्द का मूल या वास्तविक अर्थ जानने के लिए साधन रूप मे। इस तरह मुख्यत अर्थ से सम्बन्धित होने के कारण यह विचार उन लोगो के लिए दर्शन की शाखा अर्थविज्ञान के अन्तर्गत आता था।

व्युत्पत्तिविज्ञान मूलत ऐतिहासिक भाषाविज्ञान के अन्तर्गत आता है किन्तु व्युत्पत्तियो के अध्ययन में वर्णनात्मक एव तुलनात्मक भाषाविज्ञान की भी जरूरत पडती है। वर्णनात्मक की इसलिए कि शब्द किन किन तत्वो से बना है, तथा उसका इतिहास के विभिन्न कालो मे क्या अर्थ था, आदि बातें भी व्युत्पत्ति के अध्ययन के लिए अपेक्षित हैं। तुलनात्मक की इसलिए कि भाषा विशेष के शब्द विशेष की व्युत्पत्ति मे विभिन्न कालो मे उस शब्द के आर्थिक तथा ध्वन्यात्मक परिवर्तन की जानकारी के लिए उस परिवार की अन्य भाषाओ से तुलना करनी पडती है। वस्तुत किसी भी प्रकार के परिवर्तन का पता तुलना से ही लगता है। इसके अतिरिक्त यदि शब्द किसी और भाषा से गृहीत है तो मूल से किस दृष्टि से कितना परिवर्तित है इसके लिए उस भाषा से भी तुलना करनी पडती है।

व्युत्पत्तियो के अध्ययन मे सबसे अधिक सहायता ध्वनिविज्ञान से लेनी पडती है। शब्दो मे ध्वनि की दृष्टि से प्राय बहुत अधिक परिवर्तन हो जाया करते हैं। 'उपाध्याय' और 'ओझा' मे ऊपर से देखने मे कोई खास सम्बन्ध नही दिखाई पडता। ध्वनिविज्ञान के सहारे 'उपाध्याय' मे सभावित परिवर्तनो का पता लगाते हैं और तब यह स्पष्ट होता है कि 'ओझा' शब्द उपाध्याय का ही परिवर्तित रूप है। कृष्ण कान्ह अथ आज, नृत्य नाच को भी ध्वनिविज्ञान की सम्यक जानकारी से ही जोडा जा सकता है। ध्वनिविज्ञान अपने मुख्य तीनो (वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक) रूपो मे व्युत्पत्ति देने मे सहायता करता है।

व्युत्पत्तिविज्ञान मे सहायता पहुँचाने वाली भाषाविज्ञान की दूसरी शाखा अर्थविज्ञान है। शब्द के दो पक्ष होते है। एक बाहरी, जिसे उसका शरीर कह सकते हैं। ध्वनियो के रूप मे यही हमारे समक्ष रहता है। शब्द का दूसरा पक्ष भीतरी है जिसे उसकी आत्मा कह सकते है। परिवर्तित शब्द को बाहर और भीतर दोनो ओर से देखकर ही किसी पूर्ववर्ती शब्द से जोडा जा सकता है। अग्रेजी का शब्द है 'ट्रेजरी' और हिन्दी मे उसका विकास है 'तिजोरी'। 'ट्रेजरी' से 'तिजोरी' का सम्बन्ध केवल ध्वनि के आधार पर नही जोडा जा सकता। अर्थविज्ञान ही यह

व्याकरणिक इकाइयों का निर्देश करने पर। यों आज व्युत्पत्ति में जैसा कि पीछे कहा जा चुका है, शब्द का एक प्रकार से सर्वांगीण विकासात्मक अध्ययन आता है।

हर नई चीज का विकास आवश्यकतावश ही होता है। हमारे यहां प्राचीन काल में बोलचाल की भाषा जैसे जैसे वैदिक भाषा से दूर हटती गई वैदिक भाषा को समझना और उसका ठीक उच्चारण या पाठ करना लोगों के लिए कठिन होता गया। किन्तु वैदिक ऋचाओं का अध्ययन-अध्यापन तत्कालीन पंडित वर्ग के लिए एक प्रकार से अनिवार्यत आवश्यक था, परिणामत इस कठिनाई को दूर करने के लिए दो शास्त्रों का विकास हुआ। अर्थ समझने के लिए निरुक्त या निर्वचनशास्त्र का तथा ठीक उच्चारण के लिए शिक्षाशास्त्र का।

यों शब्दों के निर्वचन करने के प्राचीनतम उदाहरण ऋग्वेद में मिलते हैं, जिससे यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि कदाचित शब्दों की निरुक्ति देने की मौखिक परम्परा निरुक्त से काफी पुरानी थी। आज भी कभी-कभी सामान्य लोग इस प्रकार के अनुमान लगाते पाये जाते हैं।

निर्वचन या निरुक्त का प्राचीनतम रूप अनुमानाश्रित अधिक रहा होगा। धीरे धीरे समय के साथ उसमें वैज्ञानिकता आती गई होगी। यास्क के निरुक्त तक आते-आते इसमें काफी कुछ शास्त्रीयता आ गई थी किन्तु फिर भी उसमें अनुमान का अंश बिल्कुल न रहा हो ऐसी बात नहीं। व्याकरण शास्त्र कदाचित निरुक्त या निर्वचन का ही विकसित रूप है। इसी कारण व्याकरण के आधार पर शब्द विश्लेषण के उदाहरण बहुत पुराने नहीं मिलते, जबकि निरुक्त के उदाहरण बहुत पुराने भी मिल जाते हैं। यह भी कहना कदाचित अन्यथा न हो कि अंतिम निरुक्तकार यास्क के बाद ही सच्चे अर्थों में व्याकरण की परम्परा चली। वह काल संधिकाल है। उसके पूर्व निरुक्तकार ही प्राय भाषा का विश्लेषण करते थे। उसके बाद व्याकरण ने इसका स्थान ले लिया। यों यास्क भी व्याकरण के महत्त्व से अपरिचित नहीं थे, इसीलिए निरुक्तकार के लिए व्याकरण का ज्ञान उन्होंने आवश्यक माना है।

अंग्रेजी में व्युत्पत्ति को यों तो डेरिवेशन (derivation) भी कहते हैं, किन्तु इसके लिए मुख्य शब्द एटिमालजी (etymology) चलता है। अंग्रेजी में यह शब्द फ्रांसीसी शब्द etymologie से आया है और वहां यह शब्द लैटिन etymologia का विकसित रूप है। लटिन का भी यह अपना शब्द नहीं है। वहाँ ग्रीक से आया है। ग्रीक एतिमॉलोजिया के मूल में दो शब्द हैं एतिमास (etymos) और लागास (logos) पहले शब्द का अर्थ 'यथार्थ', 'सच्चा' या 'ठीक' है और दूसरे का 'शब्द' या 'लेखा जोखा'। इस तरह इसका मूल अर्थ हुआ यथार्थ या सच्चा शब्द या 'शब्द के सच्चे अर्थ का लेखा जोखा'। प्रसिद्ध स्टोइक दार्शनिक क्रिसिपास (Chrysippos) ने जिनका काल तीसरी सदी ई० पू० है एक ग्रन्थ 'एतिमॉलोजिका' लिखा था, जिसमें शब्दों के ठीक अर्थ की छानबीन थी। कहना

न होगा कि 'निरुक्त' भी मूलत इसी के समकक्ष था, और दोनो देशो में इन दोनों का विकास कदाचित एक ही प्रकार की आवश्यकता के कारण हुआ, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। प्राचीन यूनान में 'एतिमालोजी' भाषाविज्ञान की शाखा न होकर दशन की एक शाखा थी, जिसमे शब्द द्वारा व्यक्त भाव की यथाथ जानकारी के लिए उसके मूल आदि का अध्ययन किया जाता था। वस्तुत यूनानी और रोमन लोगो के लिए यह शास्त्र किसी शब्द का मूल अथ ज्ञान करने का साधन मात्र था। आज की तरह शब्द की उत्पत्ति और उस का इतिहास जानना इसका साध्य नही था। उत्पत्ति और इतिहास पर विचार होता भी था तो साध्य रूप मे नही, अपितु शब्द का मूल या वास्तविक अथ जानने के लिए साधन रूप मे। इस तरह मुख्यत अथ से सम्बन्धित होने के कारण यह विज्ञान उन लोगो के लिए दशन की शाखा अथविज्ञान के अ तगत आता था।

व्युत्पत्तिविज्ञान मूलत ऐतिहासिक भाषाविज्ञान के अ तगत आता है किन्तु व्युत्पत्तियो के अध्ययन मे वणनात्मक एव तुलनात्मक भाषाविज्ञान की भी जरूरत पडती है। वणनात्मक की इसलिए कि शब्द किन किन तत्वो से बना है, तथा उसका इतिहास के विभिन्न कालो मे क्या अथ था, आदि बातें भी व्युत्पत्ति के अध्ययन के लिए अपेक्षित हैं। तुलनात्मक की इसलिए कि भाषा विशेष के शब्द विशेष की व्युत्पत्ति म विभिन्न कालो मे उस शब्द के आर्थिक तथा ध्वन्यात्मक परिवतन की जानकारी के लिए उस परिवार की अन्य भाषाओ से तुलना करनी पडती है। वस्तुत किसी भी प्रकार के परिवतन का पता तुलना से ही लगता है। इसके अतिरिक्त यदि शब्द किसी और भाषा से गहीत है तो मूल से किस दृष्टि से कितना परिवर्तित है, इसके लिए उस भाषा से भी तुलना करनी पडती है।

व्युत्पत्तियो के अध्ययन मे सबसे अधिक सहायता ध्वनिविज्ञान से लेनी पडती है। शब्दो मे ध्वनि की दृष्टि से प्राय बहुत अधिक परिवतन हो जाया करते हैं। 'उपाध्याय' और 'ओझा' म ऊपर से देखने मे कोई खास सम्बन्ध नही दिखाई पडता। ध्वनिविज्ञान के सहारे 'उपाध्याय' मे सभावित परिवतनो का पता लगाते हैं और तब यह स्पष्ट होता है कि 'ओझा' शब्द उपाध्याय का ही परिवर्तित रूप है। कृष्ण कान्ह अद्य आज, नत्य नाच को भी ध्वनिविज्ञान की सम्यक जानकारी से ही जोडा जा सकता है। ध्वनिविज्ञान अपने मुख्य तीनों (वणनात्मक, ऐतिहासिक तुलनात्मक) रूपो म व्युत्पत्ति देने मे सहायता करता है।

व्युत्पत्तिविज्ञान मे सहायता पहुँचाने वाली भाषाविज्ञान की दूसरी शाखा अथविज्ञान है। शब्द के दो पक्ष होते हैं। एक बाहरी, जिसे उसका शरीर कह सकते हैं। ध्वनियो के रूप मे यही हमारे समक्ष रहता है। शब्द का दूसरा पक्ष भीतरी है जिसे उसकी आत्मा कह सकते है। परिवर्तित शब्द को बाहर और भीतर दोनो ओर से देखकर ही किसी पूववर्ती शब्द से जोडा जा सकता है। अंग्रेजी का शब्द है 'ट्रेजरी' और हिन्दी मे उसका विकास है तिजोरी। 'ट्रेजरी से तिजोरी' का सम्बन्ध केवल ध्वनि के आधार पर नही जोडा जा सकता। अथविज्ञान ही यह

बतलाएगा कि आर्थिक दृष्टि से भी इनके सबद्ध होने की सभावना है। एम ही सस्कृत 'पशु' और अग्रेजी 'फी', सस्कृत 'सिधु' और अग्रेजी इडि (या), सस्कृत 'गृह' और हिन्दी 'घर', सस्कृत 'आमलक' और हिन्दी 'आँवला', सस्कृत 'वाटिका', हिंदी 'बारी', सस्कृत 'द्वार' और पजाबी 'बारी' अर्थविज्ञान के आधार पर ही जोडे जा सकते हैं। अर्थविज्ञान के भी तीनो रूप (वणन, तुलना, इतिहास) हमारी सहायता करते हैं। अर्थ निर्धारण म वणनात्मक तथा अथ-परिवतन की ठीक जानकारी मे तुलनात्मक और वणनात्मक सहायक होते हैं।

इस प्रकार व्युत्पत्तिविज्ञान म सहायक के रूप म ध्वनिविज्ञान और अथ-विज्ञान दोनो ही एक दूसरे के पूरक हैं।

रूपविज्ञान स भी व्युत्पत्तिविज्ञान को कुछ न कुछ सहायता लनी पडती है। शब्द यदि कोई पद या रूप है तो उसके विश्लेषण एव उसके अथ निर्धारण म यह हमारी मदद करता है। किसी भाषा का सामान्य व्याकरण हम शब्द विशष के बारे मे अपेक्षित सारी जानकारी नही दे पाता या देता भी है तो गलत दता है। इसके लिए भी व्युत्पत्तिविज्ञान को रूपविज्ञान की शरण लनी पडती है। विशेषत प्राचीन भाषाओ के लिए तो यह और भी सत्य है।

वाक्यविज्ञान भी व्युत्पत्तिविज्ञान की सहायता करता है। कभी-कभी कोश से किसी शब्द के अथ तथा व्याकरण से उसके व्याकरणिक अथ का ठीक पता नही चलता। इसके लिए उसका वाक्यो म प्रयोग देखना पडता है, जिसमे वाक्यविज्ञान के बिना हमारा काम नही चल सकता। मुख्यत प्राचीन साहित्य के शब्दो के अध्ययन मे तो यह अनिवाय हो जाता है। वदिक सस्कृत, अवेस्ता ग्रीक लटिन शब्दो के व्युत्पत्तिमूलक अध्ययन मे सचमुच ही इस विज्ञान ने बडी सहायता की है।

भाषाविज्ञान की शाखा शब्दविज्ञान भी व्युत्पत्तिविज्ञान स पयाप्त सम्बधित है। एक तो व्युत्पत्तिविज्ञान अपने आप मे शब्दविज्ञान की एक शाखा है क्योकि शब्दविज्ञान शब्दो का अध्ययन है, और व्युत्पत्तिविज्ञान भी एक विशेष दृष्टि से शब्दो का ही अध्ययन है। इसके अतिरिक्त किसी भाषा का शब्दसमूह कसे और क्यो बदलता है कोई भाषा कहाँ-कहाँ से और क्यो शब्द लेती है, य बातें शब्दविज्ञान मे महत्त्वपूण हैं। कहना न होगा कि व्युत्पत्तिविज्ञान के लिए भी इन बातो की जानकारी अपेक्षित है। मदा, सेवई, दाम जसे शब्द भारतीय भाषाओ मे यूनान स आये है। अन्य विज्ञानो की सहायता से हिन्दी 'दाम' को हम सस्कृत द्रम्म या प्राकृत दम्म से जोड सकते हैं किन्तु शब्दविज्ञान ही यह बतलाएगा कि यह शब्द मूलत सस्कृत का नही है और यूनानी 'द्राख्मे से आया है। वस्तुत विदेशी मूल के सारे शब्दो की व्युत्पत्ति मे हम शब्दविज्ञान से बडी सहायता मिलती है।

भाषाविज्ञान की उपयुक्त शाखाएँ तो व्युत्पत्तिविज्ञान की सहायता करती ही हैं साथ ही इन्ही के माध्यम से या सामग्री या प्रमाण सकलन या विश्लेषण के लिए स्वतन्त्रत पुरातत्त्व, इतिहास, साहित्य, धम, भूगोल, मनोविज्ञान, मानव

'विनान आदि से भी इसे पर्याप्त सहायता मिलती है।

व्युत्पत्ति के क्षेत्र मे काम करने के लिए निम्नांकित बातें ध्यान मे रखन की हैं —

(क) जिस व्यक्ति को इस क्षेत्र म काय करना हो उसे भाषाविज्ञान का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। विशेषत ध्वनिविनान मे उसकी गति बहुत अच्छी होनी चाहिए।

(ख) शब्द या शब्दों से सबद्ध भाषाओ, साहित्य तथा सस्कृति का अच्छा ज्ञान हो तो उसका काय अधिक गहरा तथा विश्वसनीय हो सकेगा।

(ग) सबद्ध पुस्तको की उसके पास अधिक से अधिक पूण सूची हो नी चाहिए ताकि उस क्षेत्र मे जो कुछ काय हो चुका है उसमे वह परिचित हो सक। एसा न करने मे कभी-कभी तो ऐसे व्यथ के कामा म काफी समय लग जाता है जो दूसरे कर चुके हैं, और जिम आधार मानकर काम आगे बढाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त पहले के सारे कार्यों को पढ लेन स व्युत्पत्तिशोधकर्ता व बहुत सी गलतियाँ करने से बच जाता है जो पूववर्ती लोग कर चुके हैं। इस प्रकार पूव वर्ती काय जान लेने से उसका श्रम ठीक प्रकार से व्युत्पत्ति-काय को आगे बढान म लगता है, व्यथ के कामो म या पिष्टपेषण म नही।

(घ) जिस भाषा या भाषा परिवार पर इस दष्टि स काय करना हो उसके बारे मे तथा उसकी भाषाओ एव बोलियो के बारे म अधिक-स-अधिक जानकारी भी उपयोगी सिद्ध होती है।

(ङ) सबस पहल जिस (या जिन) भाषा(ओं) के शब्दा पर काय करना हो उनकी ध्वनियो का तुलनात्मक चाट बना लना चाहिए। इस चाट के लिए अधिक-से अधिक तुलनात्मक सामग्री एकत्र करनी चाहिए। इस सामग्री से ऐसे शब्दा का साथ-साथ रखना चाहिए जिनके किमी एक मूल शब्द से निकलने की सभावना हो। उदाहरणाथ —

सस्कृत	पालि	प्राकृत	जिप्सी
घृत	घित	घिअ	गिर
सिंधी	लहँदा	पजाबी	बगाली
गिहु	घिऊ	क्यो	घि
उडिया	भोजपुरी	अवधी	हिन्दी
घिअ	घीव	घीउ	घी

यहा एक शब्द के विभिन्न भाषाओ मे प्राप्त रूप एकत्र किये गये है। इनके आधार पर यह जाना जा सकता है कि सस्कृत की घ ध्वनि जिप्सी म 'ग, सिंधी मे 'ग तथा पजाबी म क-जसी' है और शेष मे घ ही है। यहा तो एक शब्द स निष्कष निकाला गया। 40 40, 50 50 इसी प्रकार के शब्द लेकर ध्वनि की आदि, मध्य, अत, बलाघातयुक्त एव बलाघातशून्य तथा अक्षर मे स्थिति देखकर

उसके विकास की रूपरेखा निर्धारित करते हैं। इसी प्रकार सारे स्वरों और सारे व्यंजनों के बारे में पता लगाते हैं। इसमें इन सभी भाषाओं और बोलियों के ध्वनि-समूह का तुलनात्मक ढंग से आपस में तथा ऐतिहासिक दृष्टि से संस्कृत, पालि, प्राकृत आदि के साथ सम्बन्ध का पता चल जाता है। इस ऐतिहासिक और तुलनात्मक चार्ट के सहारे सरलता से पता चल जाता है कि किसी भाषा की कोई ध्वनि पहले क्या रही होगी —

उदाहरणार्थ मान लीजिए, संस्कृत और हिन्दी में सम्बन्ध-स्थापन के लिए आपने कुछ शब्दों की सूची बनाई।

संस्कृत	हिन्दी
वन	वन
विवाह	ब्याह
दधि	दही
बधिर	बहरा

उपर्युक्त शब्दों से पता चलता है कि आदि स्थान का संस्कृत 'व' हिन्दी में 'ब' हो जाता है तथा बीच के स्थान का 'ध' 'ह' हो जाता है। अर्थात् संस्कृत व > हिन्दी ब, संस्कृत ध > हिन्दी ह। अब मान लीजिए आपको हिन्दी 'बहू' की व्युत्पत्ति खोजनी है। उपर्युक्त नियम को उलट दें तो कह सकते हैं कि हिन्दी 'ब' संस्कृत में 'व' रहा होगा तथा 'ह' 'ध', अतः इसका पुराना रूप 'वधू' होगा।

वस्तुतः व्युत्पत्ति खोजना इतना आसान काम नहीं है। यहाँ केवल समझाने के लिए यह एक बहुत ही सतही उदाहरण दिया गया। पर उपर्युक्त प्रकार का चार्ट तैयार कर लेने पर ठीक व्युत्पत्ति देना अपेक्षाकृत सरल हो जाता है।

(च) ध्वनि का चार्ट बनाते समय दो बातों का ध्यान रखना बड़ा जरूरी है। ये हैं भाषा की अनुलेखन पद्धति और वर्तनी। यह ध्यान में रखना चाहिए कि हम ध्वनियों का अध्ययन करते हैं, लिपि चिह्न का नहीं। कभी-कभी एक ही अक्षर (letter) कई भाषाओं में कई ध्वनियों का काम करता है। ऐसी स्थिति में उसे एक ध्वनि का प्रतीक न मान लेना चाहिए। उदाहरण के लिए 'ष' हिन्दी में 'ख' है किन्तु संस्कृत में 'ष' था या 'ऋ' संस्कृत में 'ऋ' थी किन्तु गुजराती में 'रु' है। t अंग्रेजी में 'ट' जैसी ध्वनि है तो फ्रांसीसी में 'त' जैसी। आशय यह है कि हमारा ध्यान ध्वनियों पर होना चाहिए और इस दृष्टि से सतर्क रहना चाहिए। ऐसा न हो कि लिपि चिह्न की अनेकरूपता हमें भटका दे। कभी-कभी एक भाषा में भी यह गड़बड़ी मिलती है। अंग्रेजी में u 'अ' भी है, 'उ' भी, ch 'च' भी है और 'क' भी।

यही बात वर्तनी के बारे में भी है। वर्तनी और उच्चारण में अंतर हो तो बड़ी सावधानी से अपने निष्कर्ष निकालने चाहिए। ऐसी वर्तनी शब्द के पुराने

रूप या पुराने उच्चारण को (psychology, talk, daughter) तो प्रकट करती है, किन्तु वतमान उच्चारण (साइकॉलजि, टाक, डाटअ) भिन्न होता है।

(छ) व्युत्पत्ति में शब्द कभी कभी तोडकर अर्थात उसके उपसग मूल शब्द एव प्रत्यय को अलग अलग करके (अ+कुश+ल+ता) देखना भी उपयोगी होता है।

(ज) बलाघात तथा अनुतान आदि का ध्वनियों पर कभी कभी ऐसा प्रभाव पड़ता है कि परिवतन के सामान्य नियम से उन्हें अलग कर देता है। अत इस पक्ष पर भी ध्यान आवश्यक है।

(झ) ऊपर ध्वनि चाट बनाने की बात कही गई है। कभी-कभी सादृश्य के कारण असाधारण परिवतन भी हो जाते हैं। सस्कृत मह्य >प्राकृत मज्झ से हिन्दी 'मझ' बनना चाहिए था किन्तु बन गया 'मुझ'। इससे यह निष्कर्ष निकालना भ्रामक होगा कि सस्कृत अ>प्राकृत अ>हिन्दी उ है। वस्तुत यह तुभ्य> तुज्झ>तुझ का प्रभाव है। यो ध्वनियो का परिवतन प्राय बहुत नियमित होता है। हाँ, इसमे सबसे बडी गडबडी सादृश्य के कारण पडती है अत इस पर भी हमारा ध्यान होना चाहिए।

(ञ) इसी प्रकार किसी भाषा म गृहीत परवर्ती शब्द भी पूववर्ती ध्वनि नियम के अनुसार नही चलता। ऐसी स्थिति मे यदि उसके बाहर से आने का ध्यान नही रखा गया तो निष्कष गलत हो जाएगा। उदाहरण के लिए सस्कृत 'कृष्ण' का हिन्दी म नामो म 'किशुन' रूप भी मिलता है। इसके आधार पर यह निष्कष निकालना गलत होगा कि सस्कृत ष हिन्दी म श हो जाता है। वष>बरस पष्टि>साठ षड>साँड म ष>स है। वस्तुत 'किशुन' तद्भव शब्द नही है। सस्कृत स हिन्दी काल मे 'कृष्ण' शब्द मूल रूप म आया और उसका यह विकास है अर्थात तथाकथित अध-तद्भव है।

(ट) कुछ लोग व्युत्पत्ति मे 'अनुमान' लगाना अवैज्ञानिक मानते है। मैं इस मत से असहमत हूँ। बिना अनुमान या अदाज के तो हम आगे बढ ही नही सकते। हाँ यह नही कि हम अपने अनुमान को ही सिद्ध करने के लिए कटिबद्ध हो जाएँ। हम चाहिए कि अपने अनुमान को शुद्ध वज्ञानिक दृष्टि से देखें। यदि वह उपर्युक्त नियमो के बिल्कुल अनुकूल हो तो उसे मानें, अन्यथा छोड दें। अनुमान आगे बढने का एक आधार होता है किन्तु यह आवश्यक नही कि वह सत्य ही हो। इस प्रकार अनुमान करने के बाद उसके प्रति तटस्थ होकर हमे छानबीन करनी चाहिए।

(ठ) ध्वन्यात्मक दृष्टि मे व्युत्पत्ति ठीक मिल जाने पर उसके अथ पर भी विचार कर लेना चाहिए। किन्तु ऐसा नही कि अथ मे अन्तर हो तो उसे गलत मान लें। अन्तर पर विचार कर लेना चाहिए और यह देखना चाहिए कि अथ-परिवतन के कारण वह अन्तर सम्भव है या नही। उदाहरण के लिए सस्कृत 'पशु', अग्रेज़ी 'फ़ी' एक हैं। पशु भी कभी रुपये-पसे के स्थान पर दिये लिये

से अत ऐसा अथ परिवतन समझ मे आता है, कितु हिंदी के 'आम' (फल) को सस्कृत 'आम्र' से सबद्ध मान लेने पर हिंदी 'आम' (सामान्य) उससे नही जोड सकते। यह अलग शब्द है जो अरबी से आया है।

इस तरह अनुमान से प्रारभित फिर ध्वन्यात्मक व्यवस्था, एव अथ की दष्टि से पूणत परीक्षित व्युत्पत्ति ही सच्ची व्युत्पत्ति हो सकती है।

कुछ शब्द ऐसे होते है जो विश्व की अनेक भाषाओ मे पहुँच जाते हैं। उनकी व्युत्पत्ति पर विचार करने मे यह भी देखना होता है कि व कहा कहाँ स अर्थात किस रास्ते गए यह ध्वनि के अध्ययन के आधार पर होता है। उदाहरण के लिए सस्कृत का शब्द है 'शृगवेर' जिसका अथ है अदरक'। यहा सक्षेप मे इसका इतिहास देखा जा सकता है। सस्कृत मे एक शब्द है शृग (सीग) इसी के आधार पर सीग जैसी होने से इस 'जड' (वेर) को 'शृगवेर' कहा गया। वस्तुत 'शृग' और 'वेर सस्कृत के अपने शब्द नही हैं। ये द्रविड परिवार के है और इनका अथ क्रमश सीग' और जड है। अर्थात शृगवर ऐसी जड है जो सीग जसी हो। यही सस्कृत मे शृगवर पालि मे सिंगिवेर तथा प्राकृत मे सिंगबेर हो गया। पालि प्राकृत से जाकर यह शब्द सिंहली म 'इगुरु', मध्य ईरानी म Sngypyl तथा ग्रीक मे Zingiberris बना। फिर एक तरफ मध्य ईरानी से (Sngrvel) आर्मेइक होते यह Zanghebhil रूप मे हिब्रू मे पहुचा तो दूसरी ओर आर्मेइक से अरबी म Zanjabil और तुर्की मे Zencefil रूप म। अरबी से स्वाहिली (Tangawizi) आदि के कई अफ्रीकी भाषाआ म यह गया। अरबी से ही जार्जियन (Janjapili) बना। अब ग्रीक से यह लटिन (Zingiber) मे पहुँचा और वहाँ से यह एक ओर तो इटलियन (Zenzero), स्पैनिश (Jengibre), पुतगाली (Gengivre) फ्रच (Gingembre), अग्रेजी (Ginger), जमन (Ingwer) तथा डच (Gember) आदि म गया और दूसरी ओर हगेरियन (Gyomder) आदि मे। रूसी, चश्च बलगेरियन, अल्वानियन, रूमानियन, उइगुर, फिजियन, इस्तोनियन स्वेडिश फिनिश आदि मे भी विभिन्न रूपो मे यही शब्द है। यह है सस्कृत 'शृगवेर' की विश्वविजयिनी यात्रा। सस्कृत 'शकरा' शब्द भी इसी प्रकार ससार की अनेकानेक भाषाओ मे शकर, शूगर, साखर, सक्रीन आदि रूपो मे आज प्रयुक्त हो रहा है।

कभी-कभी व्युत्पत्तियो मे बडी जटिल समस्याएँ आ जाती हैं। उदाहरण के लिए सस्कृत 'सपत्नी (इसका शाब्दिक अथ है 'पत्नी सहित' अर्थात 'और पत्नी वाला) से हिंदी सौत का विकास है। प (>व>व>) उ होकर 'स' क 'अ' से मिलकर 'औ हो जाता है और न' के लोप से 'त शेष रह जाता है। किंतु इसी स सम्बद्ध शब्द पजाबी मे है सौकन या 'सौकण। इसम 'स' 'औ 'न' या 'ण की कोई समस्या नहा है। किन्तु 'क' कहाँ से आ गया? किसी भी तरह से इसका समाधान नही हो रहा था। एक शिक्षाग्रथ मे मुझे यह सकेत मिला कि पुराने जमाने म कुछ प्रदेशो क लोग 'त्न' का ठीक उच्चारण नहीं कर पात थ, व

'त्न' को त्सन बोलते थे। इस सकेत के प्रकाश म अनुमान यह लगता है कि इस उच्चारण दोष ने ही त्न का त्सन कर दिया फिर त क लोप और क न क बीच 'अ' क आगमन स 'सौकण' बन गया।

नमूने के तौर पर नीचे दो शब्दो ('तुम' और 'आप') की व्युत्पत्ति पर कुछ विस्तार से विचार किया जा रहा है।

तुम

'तुम' शब्द विभिन्न भाषाओ और बोलियो म विभिन्न रूपो (बांगरू तम, तम्ह, यम, कौरवी तुम, तम, ताजुवेकी तम, ब्रज तुम, कनौजी तुम, तुम्ह, बुन्देली तुम, निमाडी तुम, अवधी तुम तुम्ह बघेली तुम्ह, छत्तीसगढी तुम, दक्खिनी तुम, राजस्थानी तुम तम, पहाडी तुम तुमू तिमि, जिप्सी तिमी, गुजराती तम, तम मराठी तुम बगाली आसामी तुमि उडिया तुम्ह आदि) म मिलता है। इसकी व्युत्पत्ति के सम्बन्ध म बहुत विवाद है। कामता प्रसाद गुरु स० त्वम् > प्रा० तुम्ह स इसे व्युत्पन्न मानते है। श्यामसुन्दर दास इसे स० त्वम् > प्रा० तुम स मानते हैं। पिशेल ने इस प्रसंग म यूयम के स्थान पर सस्कृत म तुष्म की कल्पना की है। तेसितारी सुकुमार सेन धीरेन्द्र वर्मा तथा उ० ना० तिवारी आदि सभी इसी से तुम को विकसित मानते है।

मेरे विचार म तुम की व्युत्पत्ति मे 'त' की समस्या इतनी सामान्य एव सीमित नही है जितनी उसे प्राय विद्वानो ने माना है। ऐसी स्थिति म इस प्रश्न को थोडे विस्तार से देखना अपेक्षित है। वस्तुत 'तुम' के अपभ्रंश प्राकृत तथा पालि म प्रयुक्त पूववर्ती रूपो की प्राप्ति म कोई कठिनाई नही है। इसका विकास पालि 'तुम्हे' प्राकृत, अपभ्रंश 'तुम्हे', परवर्ती अपभ्रंश या अवहट्ट तुम्ह स स्पष्ट है। वास्तविक कठिनाई है पालि के 'तुम्हे' के पूववर्ती रूप की प्राप्ति म। वदिक सस्कृत तथा सस्कृत म प्रथमा बहुवचन म रूप था यूयम। वस्तुत यूयम् रूप भी कल्पित उत्तम पुरुष बहुवचन से प्रभावित बाद का रूप था। जसा कि मूल 'युष्मद्' तथा बहुवचन के अन्य रूपो 'युष्मान्', 'युष्माभि', 'युष्मभ्यम्', 'युष्मत', 'युष्माकम्' तथा 'युष्मासु' स स्पष्ट है, 'यूयम्' का प्राचीन रूप यूषम रहा होगा। किन्तु तुम्हे या 'तुम' आदि का सम्बन्ध 'यूषम' या 'यूयम' स नही ज्ञात होता। वदिक सस्कृत म उत्तम पुरुष 'अस्मे' की भाँति मध्यम पुरुष म 'युष्मे' रूप मिलता है। इनका प्रयोग सम्प्रदान और अपादान म हुआ है, किन्तु कभी-कभी कर्ता म भी य प्रयुक्त हुए हैं। पालि 'तुम्हे' इस वैदिक 'युष्मे' के निकट है। किन्तु य का 'त' होना समझ मे नही आता। इसी कठिनाई के कारण पालि-प्राकृत 'तुम्हे' की उत्पत्ति कल्पित रूप 'तुष्मे' से मानी जाती है। यह कल्पित रूप पिशल का बनाया हुआ है। बाद मे जैसा कि ऊपर सकेत किया जा चुका है अन्य प्राय सभी विद्वानो ने इसी मत को स्वीकार किया है। युष्मे के आधार पर 'तुष्मे' रूप की कल्पना करने मे 'त' का आधार जहाँ तक मैं समझता हूँ बहुत

अन्य पुरुष (बहुवचन)

	मूल भारोपीय	ग्रीक	लटिन	अवेस्ता	वैदिक	संस्कृत	पालि
कर्ता	*ius	umeis	vos	yuzem	यूयम, युष्मे	यूयम	तुम्हे वो
कर्म	*ues, usme, uos	umas	vos	vo	युष्मान्	युष्मान्, व	तुम्हे वो, तुम्ह, तुम्हाक
करण	*usme	×	vobis	×	,,	युष्माभि	तुम्हेहि, तुम्हेभि, वो
सम्प्रदान	*ues, usmebh	umin	vobis	yus'maoyo	युष्मभ्यम, युष्मे	युष्मभ्यम्, व	तुम्हाक, तुम्हे, वो
अपादान	*usmed	×	vobis	yus'mat	युष्मत, युष्मे	युष्मत्	तुम्हेहि, तुम्हेभि, वो
सम्बन्ध	*ues, usmei, uos	umon	vestrum	yus'makem	युष्माकम	युष्माकम्, व	तुम्हाक, तुम्हे वो
अधिकरण	*usmin	ummin	vobis	×	युष्मे	युष्मासु	तुम्हेसु

है। यदि अन्य प्राचीन सगोत्रीय भाषाओं में 'त' वाले रूप मिलते तो इस कल्पना में कोई कठिनाई नहीं थी। किंतु प्राप्त रूपों में 'त' कहीं भी नहीं है।(द० पृ० 118)

पीछे की रूपावलियों से स्पष्ट है कि न तो मूल भारोपीय के पुनर्निर्मित रूप में मध्यम पुरुष बहुवचन में 'त' है और न ग्रीक, लटिन, अवस्ता आदि में। यहाँ स्थानाभाव के कारण और रूप नहीं दिये गये हैं किंतु उल्लेख्य है कि प्राचीन आइरिश, गॉथिक, आल्ड हाई-जर्मन, लिथु० प्रशन तथा प्राचीन चर्च स्लाव आदि अन्य प्राचीन सगोत्रीय भाषाओं में भी यही स्थिति है। कहीं भी 'त नहीं है। किसी ऐसी भाषा में जिसका साहित्य उपलब्ध हो, कल्पित रूप मानने का अर्थ यह होता है कि वह रूप लोक में व्यवहृत था, किंतु साहित्य में न आ सका अर्थात् अलिखित (unrecorded) रह गया। वस्तुतः वर्तमान समस्या यदि मात्र *तुम्हे तक ही सीमित होती तो मान लिया जाता कि यह रूप लोकप्रचलित था, और साहित्य में न आ सका। किंतु यहाँ समस्या कुछ और ही है। उपर्युक्त रूपों को साथ-साथ देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि केवल 'तुम्हे' में ही 'त' की समस्या नहीं है। यह समस्या पालि के बहुवचन के सभी रूपों के सम्बन्ध में है। ऐसी स्थिति में संस्कृत में *तुष्मे रूप की कल्पना के विरुद्ध दो बातें आ जाती हैं (अ) संस्कृत की सगोत्रीय किसी भी भाषा में बहुवचन में 'त' वाले रूप नहीं हैं। (आ) यदि इसके बावजूद पालि 'तुम्हे' के समाधान के लिए संस्कृत में *'तुष्मे' की कल्पना करें तो यह शृंखला यहीं नहीं समाप्त हो सकती। पालि के सभी कारकों के रूपों के लिए संस्कृत में इसी प्रकार की कल्पना (जैसे—*'तुष्मान', *'तुष्माभिः', *'तुष्मभ्यम्', *'तुष्माकम्', तथा *'तुष्मासु' आदि) करनी पड़ेगी। अर्थात् यह मानना पड़ेगा कि संस्कृत बहुवचन में 'यु—' वाले रूपों के साथ 'तु—' वाले रूपों की भी एक पूरी शृंखला चल रही थी। साहित्य में एक दो रूपों के न आ सकने की बात तो समझ में आती है, किंतु इन दोनों शृंखलाओं में एक ही साहित्य में आई और दूसरे के एक ओर से सारे के सारे रूप साहित्य में आए बिना रह गए, यह बात गले से उतरती नहीं। यदि 'यु—' और 'तु—' वाले इतने अधिक रूप लोक में प्रचलित थे और 'यु—' के सभी रूप साहित्य में आ गए तो कोई कारण नहीं था कि 'तु—' का एक भी रूप न आए।

इस प्रकार पिशेल की यह कल्पना बहुत समीचीन नहीं ज्ञात होती। प्रश्न उठता है कि फिर इन रूपों का विकास कैसे हुआ? मुझे एक ही बात सम्भव लगती है। संस्कृत में सभी रूप—एकवचन में 'त—' से प्रारम्भ होते थे और बहुवचन में 'य—' से किंतु पालि में एकवचन और बहुवचन दोनों ही में सभी रूप 'त—' से ही प्रारम्भ होने वाले हो गए। लगता है, संस्कृत और पालि के संधिकाल में जब पालि के रूप विकसित हो रहे थे, एकवचन के रूपों का बहुवचन के रूपों पर सामूहिक प्रभाव पड़ा और फल यह हुआ कि सभी रूपों में 'य—' के स्थान पर 'त—' हो गया। भाषाओं में इस प्रकार के प्रभाव देखे गए हैं। पालि में ही उत्तम पुरुष प्रथमा बहुवचन रूप 'मय' मिलता है। संस्कृत में यह रूप

था। वय से मय हान स सस्कृत के एकवचन क रूपा म 'म' के आधिक्य (माम, मा, मया, मह्यम, मे मत, मम, म, मयि) का ही हाथ है। इन रूपो म आनेवाले 'म' ने 'वय' को प्रभावित किया और 'व' के स्थान पर पर 'म' आ गया। इस प्रकार तुम का विकास निम्न रूप म हुआ माना जा सकता है —

वदिक सस्कृत युष्मे>लौकिक सस्कृत>*युष्मे>सस्कृत-पालि सधि-कालीन भाषा (एकवचन के रूपा के प्रभाव के कारण) *तुम्हे>पालि तुम्हे> अपभ्र श तुम्हे>परवर्ती-अपभ्र श तुम्ह>हिन्दी तुम।

आप

पिछली सदी मे पादरी स्टीवन्स ने द्रविड शब्द 'आव' से आदरार्थी 'आप' का सम्बन्ध माना था। द्रविड मे 'आव' है जिसस कुग अवु अव, तेलुगु आयन, अव तमिल एवण आदि बनते हैं किन्तु इसका अथ 'आप न होकर 'वह' है। बीम्स, चटर्जी, धीरेंद्र वर्मा आदि सस्कृत मे आत्मन् से इसको विकसित मानते हैं (स० आत्मा>*अत्वा>अत्वा>अत्पा (अशोक का गिरनार शिलालेख)>अप्प >आप)। सस्कृत मे आत्मन का अथ आत्मा, अपना, बुद्धि, स्फूर्ति, पुत्र आदि ता है, किन्तु इसके साथ आदर का भाव नही है जिसके आधार पर आदरार्थी 'आप' को इसक साथ सम्बद्ध किया जा सके। पालि, प्राकृत, अपभ्र श म भी इसके प्रयाग मे कही भी ऐसा भाव नही है। ऐसी स्थिति मे 'आत्मन' का इसका स्रात नही माना जा सकता। मुझे तीन और सम्भावनाएँ दिखाई पडती हैं। (क) यदि स्टीवन्सन का व (व>व>प) का प होना माना जाय तो स० 'भवान्' से आप का विकास (भवान>*भावन>आप) असम्भव नही है। (ख) सस्कृत मे एक शब्द 'आप्त' है, जिसका अथ बुद्धिमान, 'प्रामाणिक' आदि है। आप्त (>*अप्प> आप) से इसका विकास हो सकता है। (ग) द्रविड भाषाआ म एक मूल शब्द 'अप्प' है जो ध्वनि और आदराथता मे हिन्दी आप से दूर नही है तमिल अप्पन (पिता) अप्पच्चि (पिता) अप्पातै (बडी बहन), मलयालम अप्पन (पिता), कन्नड अप्प (पिता), अप (पिता), तुलु अप्पे (माता), तेलुगु अप्प (पिता माता, बडी बहन), गोंडी आपोडाल (पिता), कुवी अप्प (दीदी), प्राकृत अप्प (पिता) हिन्दी उर्दू आपा (माँ, बडी बहन) भी यही है। कन्नड मे 'अप्पा' नामो के साथ आदराथ (नागप्पा, करिअप्पा, चन्नप्पा निम्मप्पा) जोडा जाता है। तेलुगु, तमिल, मलयालम मे भी एक सीमा तक आदराथ म इसका प्रयोग होता है। मराठी अप्पाजी, अप्पाराव मे भी यही है। इस प्रकार इस अप्प से भी 'आप का सम्बन्ध हो सकता है।

उपर्युक्त मे द्रविड अप्प' से 'आप के निकलने की सम्भावना मेरे विचार मे सर्वाधिक है। दूसरी सम्भावना (यद्यपि द्रविड 'अप्प' की तुलना मे कम) स० 'आप्त' से हो सकती है।

भ्रामक व्युत्पत्ति

व्युत्पत्ति के प्रसग म भ्रामक व्युत्पत्ति भी विचारणीय है। कभी-कभी लाग किसी अन्य भाषा के अपरिचित शब्द को ध्वनि साम्य (या कभी-कभी अथ साम्य भी) क कारण अपन किसी परिचित शब्द के समान मान बठते है, और उसी रूप मे उस अपरिचित शब्द का उच्चारण करने लगत हैं। जैसे हिन्दी प्रदेश क कुछ भागा म लोग 'लाइब्रेरी को रायबरली' कहते हैं। हुआ यह कि लोग रायबरेली (शहर का नाम) शब्द से परिचित थे। 'लाइब्रेरी' उनके लिए नया था, अत उसे रायबरली मानकर उसी रूप मे बालने लगे। एसी प्रवत्ति को अग्रेजी मे फोक एटिमालजी (folk etimology) या 'पॉप्यूलर (Popular) एटिमॉलजी' कहते हैं। हिन्दी म लोक-व्युत्पत्ति, लौकिक व्युत्पत्ति भ्रामक व्युत्पत्ति, या भ्रमात्मक व्युत्पत्ति आदि कई नामो से इस अभिहित करते हैं। चूकि ऐसा करने म दो तत्वत असम्बद्ध शब्दो को जनता (people, folk) एक मान लेती है अर्थात् दोनो की व्युत्पत्ति एक मान बठती है, अत ऐसे नाम दिए गए हैं।

कुछ लागो ने 'हाब्सन जाब्सन' नाम का प्रयोग भी इस प्रकार की व्युत्पत्तियो के लिए किया है। इस शब्द की कहानी बडी दिलचस्प है। अग्रेज सिपाहिया ने भारत मे आने पर मुहरम म पहले-पहल जब शिया मुसलमानो को 'हसन हुसन चिल्लात सुना तो उनकी समझ म कुछ न आया। बाद मे ध्वनि-साम्य के कारण उन्होंने यह सोचा कि ये लोग कदाचित 'हाब्सन जाब्सन चिल्ला रहे हैं। परिणामत उनके लिए 'हसन हुसन' हाब्सन-जाब्सन बन गया। इस प्रकार 'हाब्सन जाब्सन' भ्रामक व्युत्पत्ति का अच्छा उदाहरण है। इस प्रसग मे मुझे अपन बचपन की एक घटना याद आ रही है। एक बार एक अनपढ बूढे ने आन्ध्र प्रदेश का नाम सुनकर मुझ से पूछा कि क्यो भइया, क्या वहाँ ज्यादातर लोग 'आन्हर (=अधे) हैं, जो उसका यह नाम पडा है। भोजपुरी मे 'आन्हर' का अथ 'अधा' होता है। उस बूढे की समय म 'आन्ध्र ता आया नही, उसने समझा कि 'आन्ध्र कदाचित उसकी अपनी बोली का 'आन्हर' ही है, और उसकी बोली म आन्हर का अथ अन्धा था, अत उसने आन्ध्र प्रदेश को 'आन्हर प्रदेश अर्थात् 'अन्धा का प्रदेश' समझ लिया। इस तरह उसने अपने ढग से 'आन्ध्र प्रदेश' की व्युत्पत्ति कर डाली।

हिन्दी का एक अल्पप्रचलित शब्द है 'हाथीचक'। यह एक पौधे का नाम है जो दवा के काम आता है। मूलत यह शब्द अरबी का है जो इतालवी भाषा म आकर Articioceo तथा अग्रेजी म Art Choke हो गया। अग्रेजो के साथ भारत मे आन पर इसका प्रचार कदाचित बगाल मे सवप्रथम हुआ। वहा इसका नाम एक अपरिचित और अस्पष्ट शब्द था अत लोगो ने 'आर्टी को हाथी कर दिया तथा 'चोक को 'चोख। हाथी और चाख' बँगला म साथक है। इस तरह बँगला मे भ्रामक व्युत्पत्ति क कारण यह शब्द 'हाथी चोख' हो गया। हिन्दी

में यही 'हाथी चक' है। भोजपुरी प्रदेश में इसे 'हाथीचिघार' अर्थात 'हाथी की चिंग्घाड' कहते हैं। 'चिंग्घाड' शायद 'चोक' को 'चोकरना' (भोजपुरी में चिंग्घाडना को 'चोकरना' भी कहते है) समझ लेने के कारण हुआ।

इसी प्रकार एक अच्छा उदाहरण 'हीराकुण्ड' है। उड़ीसा का प्रसिद्ध बाध है 'हीराकुद'। उडिया भाषा में 'कुद' का अर्थ है 'नदी द्वारा घिरा स्थान'। यह स्थान नदी द्वारा घिरा है तथा यहा कभी हीरो की खोज हुई थी अत इसका नाम 'हीराकुद' पडा। यह शब्द जब हिन्दी की पत्र पत्रिकाओं में आया तो लोगो (अनपढ लोग ही नही, पढ लिखे सम्पादको एव लेखको) ने सोचा कि 'हीरा' तो ठीक है किन्तु यह कुद क्या है? सम्भव है यह 'कुण्ड' हो। बस यह सोचना था, इसका नाम हिन्दी पत्र पत्रिकाओं में हीराकुण्ड हो गया। अब भी हिन्दी में इसे 'हीराकुण्ड' ही कहते और लिखते है। इस प्रकार शब्द भ्रामक व्युत्पत्ति के शिकार सर्वदा अनपढो के हाथ ही नही, कभी कभी पढे लिखे लोगो के हाथ भी हो जाते है।

पुलिस और सेना के सिपाही अब तो काफी पढे लिखे होते है किन्तु पहले यह स्थिति नही थी। परिणाम यह हुआ कि अनेक अग्रेजी शब्द उनकी बोलचाल मे भ्रामक व्युत्पत्ति के चक्कर मे पडकर कुछ से कुछ हो गए। खजाने पर पहरा देने वाले सिपाही के पास यदि आप 1950 के पूर्व रात मे जाते तो वह जोर से कहता, 'हुकुम सदर'। वस्तुत उसको सिखाया गया था 'हू कम्स देयर' (कौन आ रहा है), किन्तु अग्रेजी न जानने के कारण उसके लिए 'हू कम्स देयर' निरर्थक था अत उसने इसे 'हुकुम सदर' समझा और यही कहने लगा। हुकुम सदर अर्थात सदर का हुक्म है कि न आइए। इसी प्रकार सेना मे 'स्टैण्ड एट ईज' को ठण्डा टी कहते रहे हैं। 'ठण्डा टी' अर्थात 'ठडी चाय' की तरह अर्थात शान्त।

बनारस के रिक्शे वाले तथा मजदूर आदि हिन्दू यूनिवर्सिटी के 'आर्ट कालिज' को 'आठ कालिज' कहते रहे हैं। 'आर्ट' उनके लिए अपरिचित और अस्पष्ट था अत उसे 'आठ' कर लिया। इसी आधार पर 'आर्ट कॉलिज' से आगे स्थित 'साइन्स कालिज' उनकी भाषा मे नौ कालिज' (जो आठ के बाद आए) कहलाता है। एक बार मैंने एक रिक्शे वाले से बनारस स्टेशन पर कहा—मुझे हिन्दू विश्व-विद्यालय ले चलो। उसने तुरन्त पूछा—कहाँ जाएँगे बाबू जी 'आठ कालिज' या 'नौ कॉलिज'। मैं उसके प्रश्न को बिल्कुल न समझ सका। फिर किसी स्थानीय व्यक्ति ने हमारे उसके बीच दुभाषिए का काम करके समस्या सुलझाई।

'ऑनरेरी मजिस्ट्रेट' का 'ऑनरेरी' शब्द कुछ भोजपुरी क्षेत्रो मे 'अन्हेरी' हो गया है। 'ऑनरेरी मजिस्ट्रेट' को लोग 'अन्हेरी के साहब' कहते है। यहाँ ध्वनि और अर्थ दोनो साम्य, भ्रामक व्युत्पत्ति की पृष्ठभूमि में काम कर रहा है। 'अन्हेरी' ऑनरेरी मे ध्वनि साम्य है ही, अर्थ साम्य यह है कि 'ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट' वेतनिक तो होते नहीं अत उनके यहाँ रिश्वत का बोलबाला होता है और भोजपुरी में 'अन्हेरी' का अर्थ होता है 'अन्याय'।

यहाँ-वहाँ ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट के 'ऑनरेरी' शब्द को लोगो ने 'अनाडी' भी कर दिया है। यहाँ भी ध्वनि तथा अर्थ दोनो म साम्य है। अर्थ साम्य इसलिए है कि ऑनरेरी मजिस्ट्रेट कायदे-कानून की नियमित शिक्षा न पाने क कारण इन मामला म कुछ अपवादा को छोडकर, प्राय 'अनाडी' से ही होते रहे है।

रहीम न लिखा है —

रहीमन याचकता गहे वडे छोट ह्वै जात।
नारायण हूँ को भयो बावन आँगुर गात॥

इसम 'बावन आँगुर गात' ध्यान दने योग्य है। हिन्दी तथा उसकी बोलिया म बहुत ठिगन व्यक्ति का 'बौना, बावन' या 'बावण' आदि कहत है। उसे बावन आदि क्या कहत हैं यह लोगा को स्पष्ट नही था। अत लोगा न यह साचा कि 52 अगुल लम्बा होन क कारण 'बावन' या 'बौना' कहलाता है। रहीम जस विद्वान् भी इस भ्रामक व्युत्पत्ति क भ्रम स नही बच पाये। वस्तुत 'बावन' या 'बौना' का सम्बन्ध 52 से बिल्कुल नही है। 'बावन' संस्कृत 'वामन' तथा बौना संस्कृत वामनक' के तद्भव रूप हैं।

ऐसी प्रवृत्ति विश्व की सभी भाषाओ म मिलती है। मद्रास प्रात मे कभी एक कलक्टर आए थे जिनका नाम 'कालेटपट (Colletpet) था। ये कुछ सख्त थे। बहुत जल्द ही वहाँ की जनता म इनका नाम 'कालापेट्टी' प्रसिद्ध हो गया। 'कालापेट्टी' तामिल भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है सख्त' या 'क्रूर'। इस प्रकार ध्वनि-अर्थ दाना म साम्य होन क कारण यह परिवतन हो गया।

कटक म इसी प्रकार का एक मकट बाजार' है। इसम 'मकट' 'मार्केट' है। उस बाजार का नाम पहले कोई मार्केट था। 'मार्केट' शब्द अस्पष्ट था अत उसे लोगा ने मिलती जुलती ध्वनि वाला उडिया शब्द 'मकट'(=बदर, कदाचित वहाँ बन्दर भी रहे हों) बना दिया। बाजार वह है ही, अत हो गया 'मकट बाजार'। जिसका अर्थ ऊपर से देखने मे लगता है 'बदर बाजार' किन्तु वास्तविक अर्थ है 'बाजार-बाजार'।

अनेक भारतीय शब्द भी अग्रेजी मे जाकर भ्रामक व्युत्पत्ति के चक्कर मे कुछ से कुछ हो गये हैं। उदाहरणार्थ अग्रेजी म एक शब्द है बॉबरे (Bobbery) जिसका अर्थ होता है —'शोरगुल करती हुई कतार (चैम्बर्स डिक्शनरी 1960, पृ०115) यह सुनकर कितना आश्चर्य होता है कि मूलत यह हिन्दी शब्द 'बाप रे' है। इसमे भ्रामक व्युत्पत्ति ठीक उस रूप मे तो नही काम कर रही है किन्तु बॉबरे अग्रेजी शब्दा एव रूपा के अनुरूप है अत अग्रेजा ने 'बाप रे' सुन उसे न समझने के कारण 'बाबरे' कर लिया।

इसी तरह 'शाह शुजाउलमुल्क' (नाम) अग्रेजी म 'चा शुगर मिल्क' (चाय चीनी दूध 'इडियन 'वड स इन इगलिश' 1954, पृ० 48) हो गया है।

पटना मे एक बाग का नाम 'गदनिया' या 'गन्नी बाग' है। यह

शब्द असल में 'गार्डन' का भ्रामक व्युत्पत्ति के कारण परिवर्तित रूप है। 'गार्डन' का अर्थ है 'बाग'। उस बाग का पुराना नाम किसी अंग्रेज के नाम पर गार्डन था। 'गार्डन' अस्पष्ट एवं अपरिचित था अतः मिलता जुलता शब्द गर्दनिया या गर्दनी (गर्दन का भोजपुरी आदि में प्राप्त रूप) उसके स्थान पर आ गया और बाग था ही, अतः बाग जुड़ गया और हो गया 'गर्दनिया बाग अर्थात् 'बाग-बाग'। अब यह बाग कट गया है, कॉलोनी है और इसका नाम है 'गर्दनी बाग़ कालोनी'।

'पावरोटी' शब्द भी ऐसा ही है। 'पाउ' पुर्तगाली भाषा का शब्द है और इसका अर्थ है 'रोटी'। 'पाउरोटी' भारत में सर्वप्रथम पुर्तगाली ले आए और उन्होंने उसे 'पाउ' कहा। स्पष्टता के लिए लोगों ने इसके साथ 'रोटी' जोड़कर इसे 'पाउरोटी' बनाया। पर 'पाउ' शब्द अस्पष्ट था। रोटी बड़ी थी ही। यह सोचकर कि यह 'पाउ' शायद 'पाव' (1/4 सेर) हो, (पाव भर की एक रोटी) उसका भ्रामक व्युत्पत्ति प्राप्त रूप 'पावरोटी' हो गया। इधर अंग्रेज़ी 'डबल' ने 'पाव' को हटा दिया और 'पावरोटी' शब्द अब 'डबलरोटी' हो गया है।

कुछ दिन पूर्व तक 'अँगरेज़' को हिन्दी प्रदेश के अनेक क्षेत्रों की जनता 'रँगरेज़' कहती रही है। यहाँ भी वही बात है। अँगरेज़ उनके लिए प्रारम्भ में अपरिचित शब्द था किन्तु उससे ध्वनि साम्य रखने वाला 'रँगरेज़' परिचित शब्द था अतः लोग 'अँगरेज़' के स्थान पर 'रँगरेज़' मान बैठे। अनेक लोक गीतों में अँगरेज के स्थान पर 'रँगरेज़' मिलता भी है —

देसवा के कइलस बर्बाद रँगरेज़ बेइमनवा। (भोजपुरी)

इसी तरह 'ऐक्टिंग रजिस्ट्रार' को कहीं-कहीं 'एकटाँग रजिस्ट्रार' कहा जाता रहा है। यहाँ भी ध्वनि और अर्थ दोनों साम्य हैं। अर्थ साम्य इसलिए कि स्थायी व्यक्ति ही दोनों टाँगों से टिक सकता है अतः 'ऐक्टिंग' निश्चय ही 'एक टाँग' (अर्थात एक पैर का) कहलाने का अधिकारी है।

'ब्रेकवाटर' का बृखभान, चेम्सफोर्ड (वाइसराय का नाम) का कुछ भोजपुरी क्षेत्रों में 'चिलमफोड़' (यह कहा जाता है कि यह धूम्रपान का विरोधी था और उसने चिलम फोड़ दी थी), 'कैम्पबेल' का 'कम्बल', 'चार्ज शीट' का 'चार शीट' (जो चार शीट कागज़ पर लिखी हो) 'लाइब्रेरी' का 'रायबरेली' (एक शहर के प्रचलित नाम के आधार पर), सिगनल' का 'सिकन्दर', 'असर्र नौ' का 'साढ़े नौ', अरबी 'इंतिकाल' का हिन्दी 'अंतकाल' (अंतिम समय=मृत्यु) अंग्रेज़ी 'ऐडवांस' का भोजपुरी में 'अठवांस' (आठवां अंश), 'बनर्जी' का 'बानर जी' (हाब्सन जाब्सन नामक प्रसिद्ध कोश में), 'ऐंडरसन' (नाम) का मराठी में 'इन्द्रसेन' 'जान मार्ले' नाम का कुछ हिन्दी क्षेत्रों में 'जान मार ले', 'मैकेंज़ी' नाम का 'मक्खनजी', क्वाटर गार्ड' का 'कातलगारद' तथा अँग्रेज़ी शब्द 'टन्डेम' (Tandem एक सवारी का नाम) का हिन्दी में 'टमटम' (उसकी घंटी टमटम

चलती या कदाचित् इसी कारण यह परिवर्तन हुआ) कुछ अन्य उदाहरण हैं।

भ्रामक व्युत्पत्ति सहज प्रक्रिया है। पर कभी कभी पढ़े लिखे लोग जान बूझ कर विदेशी शब्दों को स्वदेशी रूप दे देते हैं। इस प्रक्रिया का परिणाम भी वही होता है जो भ्रामक व्युत्पत्ति का। अंतर केवल यह है कि यह सहज न होकर सप्रयास होता है। मैक्समूलर' का 'मोक्षमूलर', 'अफग़ानिस्तान' का 'आवागमन स्थान (अर्थात भारत से बाहर जाने और फिर भारत में लौटने का स्थान), 'जापान' का 'जयप्राण', 'अलेक्जेंडर' का 'अलक्षेन्द्र', 'मिस्टर' का 'मित्र', 'चीन' का 'च्यवन देश', 'क्राइस्ट' का 'कृष्ण' तथा 'स्कैंडेनवियन' का स्कन्धनिवासी' आदि उदाहरण इसी श्रेणी के हैं।

11
शब्दकोशविज्ञान

हिंदी मे सामान्यत 'कोशविज्ञान' शब्द का प्रयोग चलता है, किंतु यहाँ उससे थोडा अलगाने के लिए 'शब्दकोशविज्ञान' का प्रयोग किया जा रहा है। शब्दकोशविज्ञान तो शब्दो के कोश बनाने का विज्ञान है, जबकि कोशविज्ञान वह विज्ञान है जिसका सामान्य रूप से सभी प्रकार के कोशो के बनाने से सबध है। उदाहरण के लिए कोशविज्ञान का सबध उद्धरणकोश, लोकोक्तिकोश, ज्ञानकोश, शब्दकोश आदि से भी है किंतु शब्दकोशविज्ञान का सबध इनसे नही है। वस्तुत कोशविज्ञान काफी व्यापक है, और इस रूप मे शब्दकोशविज्ञान उसका एक अश है या उसकी एक शाखा है। प्रस्तुत पुस्तक 'शब्दविज्ञान' है उसका सबध मात्र शब्दो के अध्ययन से है, अत इसमे केवल शब्दकोश बनाने का विज्ञान ही आ सकता है, और इसीलिए शब्दविज्ञान की एक शाखा के रूप मे शब्दकोशविज्ञान को ही यहा लिया जा रहा है न कि कोशविज्ञान को। यो आगे प्राय 'शब्दकोशविज्ञान' के स्थान पर 'कोशविज्ञान' का प्रयोग किया जाएगा तथा 'शब्दकोश' के स्थान पर 'कोश' का क्योकि कोश मुख्यत शब्दो के ही होते है। इस तरह 'कोश' बहुत करके शब्दकोश है तथा कोशविज्ञान बहुत करके शब्दकोशविज्ञान है।

अत्यत प्राचीनकाल मे मानव को शब्दकोश की आवश्यकता नही थी, क्योकि मानव का सम्बन्ध केवल अपनी भाषा से था। न तो उसके पास अपने पूर्वजो की भाषा का कोई रूप था जिसे जानने समझने के लिए वह ऐसा प्रयास करे और न एक भाषा भाषी कबीले का दूसरे से बहुत अधिक सपर्क ही आवश्यक था कि वह इस दिशा मे कुछ करे। साथ ही, कोश का आधार लिपि है। यह आधार भी उनके पास नही था, या था भी तो नगण्य रूप मे। लिपि के विकास के साथ-साथ मनुष्य को अपने पूर्वजो की रचनाएँ उत्तराधिकार के रूप मे मिली, जिन्हे समझने के लिए शब्दकोशो की आवश्यकता का अनुभव हुआ। इसी प्रकार व्यापारिक या सास्कृतिक कारणो से एक भाषा भाषी जब दूसरे के सपर्क मे आये और एक दूसरे की बातें गहराई से समझने की आवश्यकता हुई तो द्विभाषीय कोशो की नीव पडी। इस प्रकार समाज के विकास के साथ साथ अनेक प्रकार के कोशो का विकास हुआ है और होता जा रहा है।

भाषा के अध्ययन विश्लेषण के कई रूपो के साथ कोश निर्माण भी सबसे पहले

मे निघटुओ की रचना हुई। तब से लेकर 1000 ई० तक, इन दो हज़ार वर्षों मे भारत मे कई प्रकार के सैकडो कोश बनाए गये, जिनमे से 'अमरकोश' आदि बहुत स तो अब भी उपलब्ध है। यूरोप मे 1000 ई० के पूव ठीक अर्थों मे कोश नही मिलते। रूसी तथा अग्रेज़ी कोशा का इतिहास तो 16वी सदी के अन्तिम चरण म ही प्रारम्भ होता है, यद्यपि अब वे ससार म सम्भवत सबसे आगे हैं।

शब्दकोशो के प्रमुख प्रकार

अब तक विश्व की अनेकानक भापाओ मे अनेक प्रकार के कोश बने हैं, और आगे उनके प्रकारो की सख्या हमारे जीवन, ज्ञान और आवश्यकताओ क विकास के साथ साथ बढती ही जा रही है। मुख्यत निम्नाकित प्रकार के शब्दकोश मिलत है —

व्यक्ति कोश

किसी एक व्यक्ति (लेखक या कवि) द्वारा प्रयुक्त सभी शब्दो के कोश को व्यक्ति कोश कह सकत है। प्रस्तुत पक्तियो के लेखक द्वारा सम्पादित तुलसीदास द्वारा प्रयुक्त शब्दा का कोश 'तुलसी शब्द सागर' इस प्रकार का हिन्दी का पहला कोश था। बाद म मीरा (डा० शानी प्रभा) कबीर (परशुराम चतुर्वेदी तथा डा० महेन्द्र), सूर जायसी, केशव आदि क कोश प्रकाशित हुए। अग्रेज़ी मे शेक्सपियर तथा मिल्टन आदि के कोश इसी प्रकार क है।

पुस्तक कोश

किसी एक पुस्तक का कोश पुस्तक कोश है। बाइबिल कोश, कुरान कोश इस दृष्टि से काफी प्रसिद्ध है। हिन्दी म 'रामचरितमानस कोश' तथा विनय कोश' उल्लेख्य है।

भाषा कोश

भापाओ के कोश मूलत तीन प्रकार के मिलते हैं एकभापी, द्विभापी, बहुभापी। एकभापी कोप मे एक भापा के शब्दा का अथ उसी भापा मे होता है। अग्रेज़ी मे आक्सफाड, चैम्बर्स, वैब्स्टर या हिन्दी मे हिन्दी शब्द सागर, इसी प्रकार के कोश हैं। द्विभापी कोश मे एक भापा के शब्दा का अथ दूसरी भापा म देते है। उदाहरणाथ हिन्दी रूसी कोश, अग्रेज़ी हिन्दी कोश, उर्दू हिन्दी कोश या सस्कृत अग्रेज़ी कोश आदि। बहुभापी कोश मे दो से अधिक भापाओ क शब्द साथ साथ होते है। जसे प्राकृत-अग्रेज़ी हिन्दी, अग्रेज़ी हिन्दी उर्दू हिन्दी-मराठी अग्रेज़ी, हिन्दी उर्दू सिन्धी-अग्रेज़ी। उपर्युक्त भापा-कोशा मे पहल और दूसरे म अधिक गहराई होती है। तीसरे प्रकार के कोशो की श्रेणी म जो भी कोश अब तक प्रकाशित हुए हैं, प्राय उन सभी की शब्द-समूह और अथ दोनो ही

दृष्टियों से अपनी काफी सीमाएँ हैं। भाषा-कोश विशेषत एकभाषी और द्विभाषी प्राय दो प्रकार के होते हैं वर्णनात्मक ऐतिहासिक। तुलनात्मक सामग्री देकर दोनों ही को तुलनात्मक भी बनाया जा सकता है। कोश साहित्य म वर्णनात्मक और ऐतिहासिक कोशों का विशेष मूल्य है, अत इन पर नीचे कुछ विस्तार से विचार किया जा रहा है।

वर्णनात्मक कोश

इसम किसी भाषा में किसी एक काल में प्रयुक्त सारे शब्दों और उनके सारे अर्थों को देते हैं। इस प्रसग म यह प्रश्न विचारणीय है कि यदि एक शब्द के एक से अधिक अर्थ है, तो उन्हें किस क्रम से रखा जाए। हिन्दी मे नागरी प्रचारिणी सभा का 'हिन्दी शब्द-सागर' या उसका सक्षिप्त रूप, 'बृहत हिन्दी कोश' या 'प्रामाणिक हिन्दी कोश' आदि इसी प्रकार के वर्णनात्मक कोश है। उनमें अर्थ किसी भी क्रम से न दिये जाकर मनमाने ढंग से जैसे-जैसे याद आते गये, आगे पीछे दे दिये गये हैं। वस्तुत वर्णनात्मक कोश मे अर्थ प्रचलन के आधार पर क्रमबद्ध किए जाने चाहिए। जो अर्थ सबसे अधिक प्रचलित हो उसे सबसे पहले और जो अर्थ सबसे कम प्रचलित हो उसे बाद में। कभी-कभी अर्थ के कम या अधिक प्रचलन के सम्बन्ध में विवाद भी खड़ा हो सकता है और ऐसी स्थिति म, विवाद ग्रस्त अर्थों म किसी को भी आगे पीछे रखा जा सकता है।

ऐतिहासिक कोश

किसी भाषा का ऐतिहासिक कोश उसके विकास आदि को समझने के लिए बहुत सहायक होता है। ऐतिहासिक कोश मे किसी भाषा मे केवल प्रचलित शब्दों या उनके प्रचलित अर्थों को ही न लेकर सारे शब्दों और उस भाषा म प्रयुक्त उनके सारे अर्थों को लेते हैं। वर्णनात्मक कोश मे हमने देखा कि अर्थ को प्रचलन के आधार पर रखा जाता है। ऐतिहासिक कोश म अर्थ अपने इतिहास के आधार पर रखे जाते हैं। उदाहरणार्थ हम मान लें कि किसी भाषा का एक शब्द है 'अ'। उसके 'आ', 'इ', 'ई' 'उ' 'ऊ', ये पाच अर्थ है। यहाँ देखना होगा कि सबसे पहले किस अर्थ का प्रयोग हुआ और फिर किस किस का। मान लें कि उस भाषा का आरम्भ 1000 ई० से है और 'आ' अर्थ का प्रयोग 1600 ई० मे, 'इ' का 1100 मे, 'ई' का 1000 म 'उ' का 1700 मे और 'ऊ' का 1200 ई० म हुआ है। कहना न होगा यहाँ उन अर्थों को कालक्रम से सजाना होगा अर्थात 1000 ई० म प्रचलित अर्थ पहले दिया जायेगा, फिर क्रम स 1100, 1200, 1600 और 1700 ई० के अर्थ दिये जायेंगे। अर्थात् अ,ई इ, ऊ आ, उ। इस प्रकार का कोश बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उस भाषा का साहित्य उपलब्ध हो। ऐसे कोश के निर्माण के पूर्व दो बातें आवश्यक है (1) उस भाषा म प्राप्त सभी ग्रथों का पाठ पाठालोचन के आधार पर निश्चित कर लिया जाए। यहा यह ध्यातव्य है कि

प्रक्षिप्त अंशो को निकाल फेंकने की आवश्यकता नही, अपितु उनके रचे जाने का काल-निर्धारण करके, उन्हें भी उस काल या सदी की रचना मानकर उसके समकालीन साहित्य के साथ रखा जाए। (2) सभी रचनाओ का काल निश्चित कर लिया जाए।

ये दो कर लेने पर किस सदी मे कौन शब्द किस अर्थ मे प्रयुक्त हुआ, इसका निश्चय करना सरल हो जाएगा, और उनके आधार पर सरलता से ऐतिहासिक कोश बन जायेगा। इस प्रसग मे यह भी उल्लेख्य है कि ऐतिहासिक कोश प्रत्येक दृष्टि से बहुत पूर्ण नही बन सकता, क्योकि तयार होने के बाद नई खोजो के आधार पर यदि कोई नई रचना सामने आ गई, पुरानी रचना का नया पाठ आ गया, या किसी रचना का काल कुछ और सिद्ध हो गया तो उनके कारण कोश मे पर्याप्त परिवर्तन करना होगा। किसी भी आधुनिक भारतीय भाषा का इस प्रकार का ऐतिहासिक कोश अभी तक नही बना। संस्कृत का मानियर विलियम्स का कोश इसी प्रकार का है यद्यपि बहुत अपूर्ण है। संस्कृत का इस प्रकार का एक आदर्श कोश पूना से छप रहा है। अंग्रेजी की आक्सफोर्ड डिक्शनरी इस प्रकार का सर्वोत्तम प्रयास है।

पारिभाषिक कोश

पीछे शब्दो के वर्गीकरण मे पारिभाषिक और अर्धपारिभाषिक शब्दों का उल्लेख किया जा चुका है। सामान्य कोशो मे सामान्य शब्द तो होते ही है उनके साथ कोश के आकार प्रकार के अनुकूल पारिभाषिक शब्द भी होते है किन्तु पारिभाषिक कोशो मे केवल पारिभाषिक एव अर्धपारिभाषिक शब्द ही होते है।

ये पारिभाषिक कोश भी मुख्यत दो प्रकार के होते है। एक तो वे जिनमे शब्द का पूरा अर्थ समझाया जाता है। दूसरा वह जिनमे दो या अधिक भाषाओ के पारिभाषिक शब्दो का वर्णानुक्रम से सग्रह होता है। दूसरे वर्ग के राजनीति, चिकित्साविज्ञान, पत्रकारिता, दर्शन मनोविज्ञान अर्थशास्त्र आदि अनेकानेक विषयो के अनेक अंग्रेजी हिंदी कोश प्रकाशित हो चुके है। यूरोपीय देशो मे रूसी अंग्रेजी फ्रेंच जर्मन या फ्रेंच-अंग्रेजी जर्मन या इसी प्रकार के और भी बहुत से 3, 4 5, 7, 8, 10 भाषाओ के तुलनात्मक पारिभाषिक कोश छप चुके है।

पारिभाषिक कोशो मे जिनमे पारिभाषिक शब्दो की परिभाषा दी जाए उन्हें 'परिभाषा कोश' तथा जिनमे मात्र प्रतिशब्द हो उन्हें पारिभाषिक शब्दावली कहा जा सकता है।

पर्याय कोश

पर्याय कोश मे शब्दो के पर्याय होते है। ये कोश मुख्यत तीन प्रकार के होते है (1) थेसारस—जिनमे शब्दो का क्रम वर्णानुक्रम से न होकर विषयानुसार होता है। जसे वनस्पतियो के नाम, देवताओ के नाम आदि। मेरा बृहत पर्यायवाची

कोश' ऐसा ही है। इसमे पर्याय के साथ-साथ विलोम के भी संकेत होते हैं। हिन्दी मे इसके लिए कोई उपयुक्त नाम नही है। (2) पर्याय कोश—इसमें वर्णानुक्रम से शब्द होते हैं तथा साथ म उनके पर्याय दिए होते हैं। (3) विवेचनात्मक पर्याय कोश—इसमे पर्याय देन क साथ साथ उनमे अथ और प्रयोग की दृष्टि से अतरों पर भी विचार होता है। वेब्स्टर का 'अंग्रेजी पर्याय' ऐसा ही कोश है।

विलोम कोश

यह विलोम शब्दो का कोश होता है। अनेक व्याकरणो मे भी विलोमार्थी शब्दो की सूचियाँ दी रहती हैं। अब तक इस तरह का कोई अच्छा कोश मेरे देखने मे नही आया।

मुहावरा कोश

यह मुहावरो का कोश होता है। मुहावरा कोश वणनात्मक, ऐतिहासिक एव तुलनात्मक तीनो प्रकार का या मिलाजुला हो सकता है। वणनात्मक मे इनका अथ और प्रयोग रहता है ऐतिहासिक म इनका पूरा इतिहास (जस किस भाषा से आया है या मूलत किस पर आधारित है या अथ म क्या कुछ विकास हुआ है) देत हैं। तुलनात्मक म अन्य भाषाओं के समानार्थी मुहावरे भी होते हैं।

प्रयोग कोश

इसमे प्रयोग दिए होत है। उदाहरण के लिए यदि हिन्दी का प्रयोग कोश बन तो राज-राजा का भेद, ने को, मे, के ठीक प्रयोग सकना-पाना म अन्तर, बहुत अधिक मे भेद आदि जैसी बातो का विवेचन होगा। अंग्रेजी मे फाउलर का कोश इस दृष्टि से महत्त्वपूण है।

विश्वकोश

यह कोश आज के युग की अनिवाय आवश्यकता है ताकि एक ही पुस्तक मे अपेक्षित अधिक-से-अधिक जानकारी प्राप्त की जा सके। विश्वकोश दो प्रकार का होता है। एक तो सामान्य होता है, जिसम सभी विषयो की प्रविष्टिया होती हैं। ब्रिटेनिका, अमेरिकाना, हिन्दी विश्वकोश आदि इसी श्रेणी के हैं। दूसरे प्रकार का विश्वकोश अलग अलग विषयो का होता है। जसे—दशन विश्वकोश, इतिहास विश्वकोश, भौतिकी विश्वकोश आदि।

जीवनी कोश

इसम विभिन्न कालो के उल्लेख्य व्यक्तियो की जीवनियाँ रहती है। कथा कोश या अन्त कथा कोश भी इसी के अन्तगत आते हैं।

भौगोलिक कोश

इसमे भौगोलिक नामो के सम्बन्ध मे जानकारी रहती है। नामो के ठीक उच्चारण का ध्यान इसके लिए भी आवश्यक है।

उच्चारण कोश

इसमे शब्दो का उच्चारण देते हैं। ऐसे कोश मे वतनी और उच्चारण मे अन्तर (लोप जसे 'राम' का 'राम', आगम जैसे 'रखा' का 'रक्खा', परिवतन जैसे 'कोप' का 'कोश') का स्पष्ट उल्लेख रहता है। साथ ही आक्षरिक विभाजन और बलाघात का भी सकेत रहता है। ऐसा कोश ऐसी भाषाओ के लिए अधिक आवश्यक है जहाँ वतनी और उच्चारण मे बहुत अधिक भेद है। हिन्दी मे भी धीरे धीरे ऐसी स्थिति आ गई है। उपन्यास, कृष्ण, पाप, बलदेव, शेष आदि अनेकानेक शब्द हिन्दी मे ऐसे हैं जिनका उच्चारण अब वतनी के अनुरूप न रह-कर उपन्नयास, क्रिश्ड्ण, पाप बल्देव, शेश हो गया है।

कोश-निर्माण-विषयक कुछ आवश्यक बातें

शब्द सकलन

कोश निर्माण मे सबसे पहला काम कोशकार को इसी दिशा मे करना पडता है। कोश यदि जीवित भाषा का बनाना है, तो शब्द लोगो से सुनकर इकट्ठे करने पडते है। यदि साहित्य या पुरानी भाषा का बनाना हो तो पुस्तको से लेना पडता है। लोगो से सुनकर इकट्ठा करने मे पूर्ण कोश बनाना प्राय असम्भव सा है, क्योकि हर जीवित भाषा म शब्द बढते रहते हैं, नये शब्द विभिन्न स्रोतो से आते रहते हैं। साहित्य के आधार पर कोश बनाने के लिए सम्बद्ध सारी पुस्तको की पूरी शब्दानुक्रमणी बना लेना सबसे अच्छा होता है। ऐसा कर लेने पर कोई शब्द या अथ छूटने नही पाता। ऐतिहासिक कोशो के लिए तो यह अनिवाय है। पीछे शब्द सकलन' अध्याय मे इस सम्बन्ध मे विस्तार के साथ विचार किया गया है।

वतनी

शब्द-सकलन के बाद उन्हे कोश मे देने के लिए उनकी वतनी (spelling) निश्चित कर लेना आवश्यक है। इस दष्टि से सबसे अधिक आवश्यक चीज है एकरूपता। अनेकरूपता होने पर होता यह है कि कभी कभी 'शब्द' कोश म होता है किन्तु मिलता नही। इस विषय म आवश्यक निणयो का उल्लेख भूमिका म अवश्य किया जाना चाहिए, ताकि देखने वाले सहायता ले सकें। साथ ही यदि किसी शब्द की एक से अधिक वतनियाँ प्रचलित हो तो (जसे लिए लिये) अधिक प्रचलित रूप के साथ अथ देना चाहिए तथा दूसरे को यथास्थान देकर अथ के लिए प्रथम के सदभ का सकेत कर देना चाहिए।

अथ दने चाहिए। व्याकरण के साथ-साथ उसस बनन वाले अनियमित रूप भी अवश्य देने चाहिए (जसे जाना मे 'गया' या करना मे 'किया')।

अथ

वणनात्मक कोश मे अथ प्रचलन के आधार पर और ऐतिहासिक मे इतिहास के आधार पर दिया जाता है। इसे पीछे समझाया जा चुका है। अथ दो प्रकार से दते है। एक म केवल समानार्थी शब्द होते है (जसे गज का अथ हाथी) दूसरे मे परिभाषा देते हैं या समझाते है (जसे हाथी एक जानवर है जो)। शब्दकोश मे दोनो प्रकार का उचित प्रयोग होना चाहिए। यो व्याख्या जहा अपेक्षित हो वही दी जानी चाहिए। एकभाषिक कोश मे व्याख्या अधिक अपेक्षित होती है, कि तु द्विभाषी कोश म समानार्थी शब्द देना ही पयाप्त है। जसे अग्रेजी हि दी कोश मे elephant की हि दी मे व्याख्या निरथक है। वहाँ केवल 'हाथी' शब्द दे देना पर्याप्त है। हाँ यदि ऐसा शब्द यदि हि दीभाषी के लिए अपरिचित हो, तो व्याख्या अपेक्षित होगी।

उद्धरण

अथ के स्पष्टीकरण या उदाहरण के लिए अथ के साथ उसके प्रयोग भी दिए जाते हैं। ऐसे उद्धरण प्रामाणिक होने चाहिए। यदि कई दिये जाएँ तो उ ह काल-क्रमानुसार रखना अच्छा होता है।

चित्र

कभी-कभी अथ, पर्याय या व्याख्या से स्पष्ट नही होते। ऐसी स्थिति मे वस्तु का चित्र आवश्यक हो जाता है, प्रमुखत ऐसी चीजो का जिनसे कोश का प्रयोक्ता अपरिचित हो। उदाहरणाथ हाथी का चित्र भारतीय कोश मे अपेक्षित नही होगा कि तु ऐसे देश के कोश मे जहाँ हाथी नही होता यह बहुत आवश्यक है। भारतीय कोश मे कगारू का चित्र आवश्यक हो सकता है।

उच्चारण

कोश मे उच्चारण भी आवश्यक है। क्योकि मात्र सामा य वतनी (spelling) स वह स्पष्ट नही होता। अग्रेजी, फ्रेंच आदि कोशो मे इसी कारण उच्चारण दिया रहता है। इन भाषाओ के तो ऐसे उच्चारण-कोश प्रकाशित हो चुके हैं जिनका काम केवल उच्चारण बतलाना है। हि दी कोशो म उच्चारण नही रहता। नागरी लिपि के समथको का कहना है कि जसा हमारा उच्चारण है, वसा ही नागरी म लिखते हैं, अत अलग उच्चारण की हि दी म आवश्यकता नही। कि तु ऐसा मानना अवैज्ञानिक है। हि दी मे सभी शब्दो का उच्चारण वही नही है जो लिखा जाता है। उदाहरणाथ 'ऋषि' का उच्चारण 'रिशि', 'द्विवदी' का 'दुवदी',

'साहित्यिक' का 'साहितिक', 'उपन्यास' का 'उपन्नास', 'राम' का 'रामु' तथा 'समरथ' का 'सामरथ' है। हिन्दी में इस प्रकार के हजारों शब्द हैं जिनका उच्चारण वर्तनी के अनुरूप नहीं है। ऐसे सारे शब्दों का उच्चारण कोशों में दिया जाना चाहिए। हिन्दी छात्रों या हिन्दी पढ़ाने वालों को जिन्हें अनुभव है वे जानते हैं कि कोशों में ऐसा न होने से कितनी कठिनाई होती है। इसी प्रकार उच्चारण के साथ-साथ बलाघात (stress) तथा आक्षरिक विभाजन का संकेत भी कोश में अपेक्षित है।

12
शब्दप्रयोगविज्ञान

किसी भाषा म शब्दो के प्रयोग के वैज्ञानिक अध्ययन क लिए यहाँ शब्दप्रयोग विज्ञान नाम का प्रयोग किया जा रहा है। कहना न होगा कि भाषा शब्दो के प्रयोग स ही बनती है, इसीलिए भाषा और शब्दो के अध्ययन मे शब्दो क प्रयोग का महत्त्वपूर्ण स्थान है। किसी वक्ता लेखक या कवि की भाषा कितनी अच्छी या बुरी, प्रभावी या अप्रभावी है इसका पता उसके शब्दप्रयोग स ही लगाया जा सकता है।

पर्याय मे चयन

शब्दो के प्रयोग की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि विशिष्ट सदभ म प्रयोग के लिए कौन सा शब्द चुनें। यह चयन पर्यायो म से करना होता है। यह ध्यान दने की बात है कि यो तो पर्याय शब्द एकार्थी समझे जाते है, किन्तु तत्त्वत व एकार्थी न होकर समानार्थी होते हैं तथा एक ही शब्द के विभिन्न पयायो म सभी का प्रयोग सभी स्थानो पर नही हो सकता। उदाहरण के लिए 'पानी' और 'जल' पर्याय तो हैं किन्तु 'जलपान कर लीजिए' के स्थान पर न तो पानीपान कर लीजिए' कह सकते हैं और न 'शम के मारे पानी-पानी होना' के स्थान पर 'शम के मारे जल-जल होना'। इस तरह 'पानी' और 'जल' के पर्याय होने के बावजूद प्रयोक्ता के लिए यह जानना बहुत आवश्यक है कि कहाँ 'जल' शब्द का प्रयोग किया जाए और कहाँ 'पानी' का।

प्रयोग के लिए पर्यायो म से एक का चयन सबसे अधिक विशेषणो और सज्ञाओ मे करना होता है। यहा बानगी के लिए कुछ विशेषणो और सज्ञाओ पर विचार किया जा रहा है —

अधिक-बहुत—हिन्दी मे 'अधिक' और 'बहुत' दोनो ही ज्यादा के अथ म प्रयुक्त होते हैं, किन्तु प्रयोगो से पता चलता है कि 'बहुत' केवल ज्यादा होने का बोध कराता है —

राम बहुत बोलता है।
सीता बहुत सुदर है।

किन्तु दूसरी ओर 'अधिक' तुलनाबोधक शब्द है —

राम अधिक बोलता है।

इस दूसरे वाक्य का अथ यह है कि किसी और की तुलना मे यह बात कही जा रही है।

राम मोहन से अधिक बोलता है।

इसी प्रकार

सीता अधिक सुदर है।

अर्थात किसी की तुलना मे

सीता राधा से अधिक सुदर है।

ऊपर के दोनो वाक्यो म 'अधिक' के स्थान पर यदि 'बहुत' रखें तो और भी बातें सामन आती है —

(1) राम मोहन से अधिक बोलता है।
राम मोहन से बहुत बोलता है।

(2) सीता राधा से अधिक सुदर है।
सीता राधा से बहुत सुदर है।

स्पष्ट है पहले वाक्य म 'बहुत' रख देने से वाक्य का अथ बदल गया है, और दूसरे मे 'बहुत' का प्रयोग ठीक नही लगता। यहा केवल 'अधिक' ही आ सकता है 'बहुत' नही। इस तरह दोना शब्द समानार्थी तो हैं पर दोनो के प्रयोग मे अन्तर है। वस्तुत प्रयाग मे अन्तर का अथ यह है कि ऊपर से वे समानार्थी भले हो, सूक्ष्म दष्टि स उनका अथ एक नही है। दूसरे शब्दो मे वे समानार्थी हैं किन्तु एकार्थी नहीं हैं। इस समानार्थी होने' और 'एकार्थी न होने' को केवल अथ बतलाकर समझाना कठिन है। प्रयोग दिखलाकर ही शब्दो की शक्ति और सीमा स्पष्ट की जा सकती है। यो 'बहुत' और 'अधिक' कभी-कभी साथ साथ भी आते हैं—

वह बहुत अधिक सुदर है।

दोनो मिलकर अत्यधिक का भाव व्यक्त करते हैं। ऐसी स्थिति मे एक बात और भी सकेत्य है। 'बहुत' शब्द 'अधिक' के पहले आ सकता है किन्तु 'अधिक' 'बहुत' के पहल नही आ सकता।

क्रोधी क्रोधित—दोनो ही शब्द क्रोध' के आधार पर बने हुए विशेषण हैं, किन्तु दानो के प्रयोगो मे अतर है। क्रोधी' शब्द का प्रयोग किसी की आदत बतलान के लिए किया जाता है जबकि क्रोधित' का किसी विशिष्ट समय मे किसी का 'गुस्से होने' के लिए। उदाहरणाथ —राम बहुत क्रोधी है। राम बहुत क्रोधित है। पहले मे राम के स्वभाव का का वणन है, ता दूसरे मे उसकी वतमान मानसिक दशा का।

आहट टोह—दोनो ही शब्दो का प्रयोग 'लेना' क्रिया के साथ प्राय होता है किन्तु टोह लेना' का प्रयोग खुद आगे बढ़कर जानने के लिए होता है, जबकि 'आहट लेना के प्रयाग के लिए खुद जाना या आगे बढना आवश्यक नही है।

गीला भीगा—अर्थ की दृष्टि से दोनों पर्याय हैं, किन्तु दोनों के प्रयोग में अन्तर है। 'मैं भीगा हूं' तो कहा जा सकता है किन्तु 'मैं गीला हूँ' नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार आप 'भीगी बिल्ली' तो बन सकते हैं, 'गीली बिल्ली' नहीं बन सकते। किन्तु मेरे कपडे गीले हैं' और 'मेरे कपडे भीगे हैं', दोनों ही प्रयोग चलते हैं। लगता है कि जानदार के लिए 'भीगा' ही आता है किन्तु बेजान के लिए दोनों आते हैं। या दोनों के अर्थ में भी कुछ अन्तर है। 'गीला' की तुलना में 'भीगा' में अधिक गीले या भीगे होने का भाव है। किन्तु प्रयोग में अर्थ के इस अन्तर पर कदाचित् लोग विशेष ध्यान नहीं दे रहे हैं, हां ऊपर संकेतित प्रयोग पर पूरा ध्यान देते हैं।

होशियार-चालाक—होशियार' का प्रयोग कुशलता व्यक्त करने के लिए होता है किन्तु 'चालाक' में धूर्तता का भाव है। कुछ लोगों के प्रयोगों में 'होशियार' में भी कुछ धूर्तता का भाव मिलता है, किन्तु उनके प्रयोगों में भी 'चालाक' अपेक्षाकृत अधिक धूर्त है। सामान्यतः किसी का होशियार होना अच्छा माना जाता है किन्तु चालाक होना बुरा। रोगी होशियार डॉक्टर के यहां जाना और चालाक डॉक्टर से बचना चाहता है।

सरल-सुगम—पहला 'आसान' है और दूसरा 'सरलता से जाने योग्य'। इसीलिए कार्य को 'सरल' तथा मार्ग को 'सुगम' कहना अच्छा प्रयोग है। यों सरल मार्ग' भी चल जाता है किन्तु 'सुगम कार्य' नहीं चल सकता।

कारण-वजह—दोनों अर्थ की दृष्टि से एकार्थी हैं, किन्तु प्रयोग में थोडा अन्तर है। इसका कारण क्या है?' 'इसकी वजह क्या है?' दोनों प्रयोग ठीक हैं। किन्तु 'आप किस कारण आए' प्रयोग कभी-कभी सुनाई पड जाता है, परन्तु 'आप किस वजह आए' प्रयोग नहीं मिलता। 'वजह' के बाद ऐसी रचना में 'से' का आना आवश्यक है पर कारण के बाद से आता भी है और नहीं भी आता। इन दोनों में न आने का अनुपात ही कदाचित अधिक है। यों 'किस कारण के' स्थान पर 'किस लिए' का प्रयोग अधिक चलता है।

घमंड-गर्व—घमंड निन्दनीय है किन्तु गर्व अच्छा भी होता है मुझे अपने देश पर गर्व है। घमंड प्रायः व्यक्तिगत बातों पर होता है और गर्व सामूहिक पर भी।

ठीक सही—'ठीक' उचित या वाजिब के लिए प्रयुक्त होता है, किन्तु 'सही' गलत का उल्टा है। 'सवाल गलत है या ठीक' की तुलना में 'सवाल गलत है या सही' अधिक अच्छा प्रयोग है।

अनबन खटपट—पहले का प्रयोग ऐसी स्थिति को व्यक्त करने के लिए होता है जब दो (व्यक्ति या वर्ग) में बनती न हो। जिनमें अनबन होती है वे प्रायः एक-दूसरे से अलग रहते हैं बोलते चालते नहीं या संपर्क नहीं रखते। इसके विपरीत खटपट का प्रयोग यह व्यक्त करने के लिए होता है कि दोनों में संपर्क या बोलचाल है, किन्तु थोडा बहुत झगडा है, पटती नहीं। इस तरह झगडा खटपट

से आगे की चीज है।

भाषा में शब्दों का प्रयोग भाषा की विभिन्न शैलियों पर भी निर्भर करता है। उदाहरण के लिए हिन्दी भाषा की ही तीन शैलियाँ प्रचलित हैं हिन्दी—जिसमें संस्कृत शब्दों का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक होता है। उर्दू—जिसमें अरबी-फारसी-तुर्की शब्दों का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक होता है। हिन्दुस्तानी—जिसमें संस्कृत या अरबी-फारसी-तुर्की के दुरूह शब्द नहीं होते केवल वे होते हैं जो बोल-चाल में अपेक्षाकृत अधिक निकट हैं। यों सभी लेखक एवं वक्ता सभी स्तरों पर हिन्दी उर्दू हिन्दुस्तानी के इस भेद का निर्वाह नहीं करते, और शायद कर भी नहीं सकते, किन्तु अनेक प्रयोगों में यह अन्तर स्पष्ट हुए बिना नहीं रहता। प्रयोक्ता को पर्यायों में से प्रयोग के लिए शब्द चुनने में इस बात का ध्यान रखना चाहिए। हरिऔध के 'प्रिय-प्रवास', प्रसाद की 'कामायनी', और निराला की 'तुलसीदास' की हिन्दी, इस दृष्टि से बच्चन की 'मधुशाला' या नीरज के गीतों से भिन्न है। हरिऔध का ही 'प्रिय प्रवास' उनकी अन्य रचनाओं से इस दृष्टि से अलग है। इस प्रकार के कुछ शैलीय पर्याय हैं नगर-शहर, स्वयं-खुद, ग्राम गाँव आश्चर्य-अचरज प्रतिष्ठित इज्जतदार, कलम-लेखनी, पत्र चिट्ठी-खत, द्वार-दरवाजा, सुन्दर-खूबसूरत, बढ़िया उम्दा, आशा-उम्मीद, अनाज-गल्ला, कृषि-खेती-काश्त, दफ्तर-कार्यालय, घड़ा-सदन, वाटिका-बाग, नदी-दरिया, बुद्धि-अक्ल, वायु-हवा, सूर्य सूरज आदि। स्पष्ट ही हिन्दी में यह अन्तर तत्सम-तद्भव (सूर्य-सूरज) तत्सम विदेशी (वाटिका-बाग), तद्भव-विदेशी (अनाज गल्ला, खेती-काश्त) तथा तत्सम-तद्भव विदेशी (कृषि खेती-काश्त) शब्दों में है। भाषा के प्रयोक्ता को इस प्रकार के अन्तर का भी पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए।

भाषा में शब्दों के प्रयोग में इस बात का ध्यान रखना भी बहुत आवश्यक है कि बात किससे कही जा रही है या किसके बारे में कही जा रही है। जापानी भाषा में इस प्रकार का अंतर संसार की भाषाओं में सर्वाधिक है। वहाँ अनेक संज्ञाओं, सर्वनामों तथा क्रियाविशेषणों के लिए एक से अधिक शब्दों का वर्ग है, जिनमें एक का प्रयोग आदरार्थी माना जाता है तो दूसरे का सामान्य। उदाहरण के लिए दार (dare) सामान्य 'कौन' है तो दोनता (donata) आदरार्थी। हिन्दी उर्दू में तू-तुम आप, आना पधारना-तशरीफ लाना, बैठना विराजना-तशरीफ रखना में इसी प्रकार का अंतर है। इसे शब्दों में सामाजिक अर्थ का अंतर कहते हैं। शब्द प्रयोक्ता को इस तरह के सामाजिक अर्थ के अंतर का भी ध्यान रखना चाहिए।

सहप्रयोग

प्राय सभी भाषाओं में एक यह प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है कि कुछ शब्द कुछ विशेष शब्दों के साथ ही प्रयुक्त होते हैं जिसे शब्दों का सहप्रयोग कह सकते हैं। इसके कई भेद विभेद भाषाओं में प्रयोग के आधार पर किये जा सकते हैं। उदा

हरण के लिए हिन्दी मे सहप्रयोग के निम्नाकित भेद किए जा सकते हैं। कुछ शब्द हिन्दी म ऐसे हैं जो केवल किसी एक या बहुत सीमित शब्दा क साथ आत है, और केवल प्रारम्भ म ही आते है अजायब (अजायबघर, अजायबखाना), साठ (साठ गाँठ), आस (आस-पास)। दूसरी ओर कुछ शब्द ऐसे है जो एक या बहुत सीमित शब्दा के साथ आते है और केवल अत म ही आते हैं सुलफ (सौदा-सुलफ), बक्काल (बनिया-बक्काल) मुबाहिसा (बहस मुबाहिसा), घुप्प (अँधेरा-घुप्प) मडन (खडन मडन), गलौज (गाली गलौज)। भोजपुरी मे इसी प्रकार कोतर (कान कोतर), कुवाम (कर्जा कुवाम) गीठा (गहना-गीठो), पहिता (सग-पहिता) आदि हैं।

इसी प्रकार कुछ शब्द ऐसे हाते है जो केवल कुछ ही क्रियाओ के साथ प्रयुक्त हात है खचाखच (भरना, होना), गौर (करना, होना), गौरवान्वित (करना हाना), घिग्घी (बँधना)। इसके विपरीत कुछ क्रियाओ का प्रयोग सीमित होता है। मोहन क पिता जी आज गुजर गये' प्रयोग करते हैं किन्तु 'चूहा आज गुजर गया' नही।

कुछ विशेषण भी कुछ सीमित सज्ञाओ के साथ प्रयुक्त होते हैं। जस गँदला (पानी), झीना (कपडा, परदा, आवरण), दशनी (हुण्डी), बनैला (सूअर) आदि।

ऐसे ही 'खाना' का सहप्रयोग 'खाना' के साथ है (खाना खा लो) तो 'भाजन' का करना' के साथ (भाजन कर लो)। पूडी नाश्ते म भी ले सकते है खान मे भी। पर नाश्ता करते हैं और खाना खाते हैं।

इस तरह प्रयोक्ता को सहप्रयोग का भी ध्यान रखना चाहिए।

लिंग

व्याकरणिक लिंग सभी भाषाआ म नही होत। फारसी, उजबेक, इस्तानियन आदि विश्व म कई भाषाएँ हैं जिनमे लिंग का प्रयोग नही होता। उनमे क्रिया, विशेषण, सवनाम या सज्ञा के रूपा मे लैंगिक परिवतन बिलकुल नही होते। जिन भाषाओ मे लिंग होत भी हैं, उनमे भी आपस मे एकरूपता नही मिलती। चाँद (moon) अंग्रेजी मे स्त्रीलिंग है तो हिन्दी मे पुल्लिग। यही नही, भाषाआ के लिंग का प्राकृतिक लिंग से बहुत अधिक सम्बन्ध नही होता। मेज निर्लिंग है किन्तु हिन्दी मे स्त्रीलिंग है, दीवान भी निर्लिंग है किन्तु हिन्दी म पुल्लिग है। जमन म महिला (frau) स्त्रीलिंग है तो कुमारी (fraulein) नपुसक लिंग है। सस्कृत म 'दारा', स्नी और कलत्र' तीनो शब्द स्त्री के वाचक हैं किन्तु प्रयोग मे पहला शब्द पुल्लिग, दूसरा स्त्रीलिंग और तीसरा नपुसक लिंग है। स्त्री-पुरुष स सम्बन्ध का भी लिंग पर प्रभाव नही है। 'दाढी मूछ पुरुष को होते हैं किन्तु स्त्रीलिंग है जबकि 'कुच' पुल्लिग है। वस्तुत भाषिक लिंग प्रयोगाश्रित है।

लिंगप्रयोगी भाषाओ म शब्दा के प्रयाग मे लिंग की दृष्टि से भी ध्यान रखना

पडता है। ध्यान से आशय है उक्त भाषा मे प्रयोग किये जाने वाले शब्द के लिंग का ध्यान। इस दृष्टि से भाषाओ मे अनेकानेक गडबडिया मिलती है। हिन्दी मे गिद्ध, कौआ, चीटा आदि यद्यपि नर भी होते हैं और मादा भी, किन्तु इनका प्रयोग पुल्लिग मे ही होता है, इसी प्रकार चील, चीटी, मैना नर भी होते हैं किन्तु इनका प्रयोग केवल स्त्रीलिंग मे होता है। हिन्दी म पद तथा व्यवसायबोधक काफी शब्द ऐसे भी है जो उभयलिंगी है। पहले 'भारत के प्रधानमन्त्री' प्रयोग मे आता था, अब 'भारत की प्रधान मन्त्री' आता है। डॉक्टर, कम्पाउण्डर, इजीनियर, मिनिस्टर या मन्त्री, राज्यपाल या गवनर, रीडर, व्याख्याता या लेक्चरर, मैनेजर आदि सौ से ऊपर शब्द हिन्दी म उभयलिंगी हैं। इसका अथ यह हुआ कि हिन्दी म प्रयोग के स्तर पर दो लिंग है, किन्तु शब्द-वग के स्तर पर तीन।

कुछ भाषाओ के कुछ उदाहरणो म बडी अजीब बात मिलती है। मादा के लिए पुल्लिग शब्द का प्रयोग होता है और नर के लिए स्त्रीलिंग का। उदाहरणाथ हिन्दी मे पपीता पपीती। इसी प्रकार कुछ भाषाओ के कुछ उदाहरणो म स्त्रीलिंग के रूप का प्रयोग एक प्राणी (कीडा) के लिए मिलता है तो पुल्लिग का दूसरे के लिए। जैसे हिन्दी मे ही चीटा-चीटी।

कुछ स्थितियाँ ऐसी भी मिलती है जिनम पुल्लिग रूप पति के लिए आता है तो स्त्रीलिंग रूप उसकी पत्नी के लिए—चाचा चाची, मामा मामी, जीजा जीजी, नाना नानी, किन्तु कुछ उदाहरणो म पुल्लिग रूप भाई के लिए तो स्त्रीलिंग बहन के लिए साला-साली। कभी कभी ऐसा भी होता है एक पुल्लिग शब्द के दो अथ होते है और दोनो अर्थो मे उसके स्त्रीलिंग के रूप अलग-अलग होते हैं दादा (बडा भाई)—दीदी (बडी बहन) दादा (पितामह)—दादी (बाप की मा)।

कुछ उदाहरणो म लिंग परिवतन से अथ परिवतन भी हो जाता है गदेला —लडका, गद्दा) गदेली (गद्दी, हथोरी)।

यहाँ यह जोडन की आवश्यकता नही कि विभिन्न भाषाओ मे प्राप्त स्त्रीलिंग रूप प्राय पुल्लिग रूपो से बने माने तथा दिखाए जाते हैं। समाज मे पुरुष की महत्ता या प्रधानता के कारण, सामाजिक सम्बन्धो की प्रतीक भाषा म ऐसा होना तथा इस रूप मे उसका विश्लेषण असहज नही है। उदाहरणाथ अग्रेजी मे author-authoress, host hostess, lion lioness, actor actress, master-mistress, hero heroine सस्कृत म ब्राह्मण ब्राह्मणी नद नदी, सुत-सुता, प्रिय प्रिया भव भवानी अरबी मे साहब साहिबा वालिद-वालिदा तुर्की म खान खानम, बग-बेगम, हिन्दी म लडका लडकी दादा दादी, बेटा बिटिया, हिरन हिरनी सुनार सुनारिन ऊँट ऊँटनी ठाकुर ठकुराइन।

या इधर गहराई मे विश्लेषण करने पर पुल्लिग के प्रति यह पक्षपात कुछ शब्दो मे समाप्त हो गया है। उदाहरण के लिए पहले लडका' से 'लडकी को बना

माना जाता था। अब मूल शब्द न तो पुल्लिंग माना जाता है और न स्त्रीलिंग। यह निर्लिंग शब्द लड़क् है जिसमे पुल्लिंग प्रत्यय 'आ' जोडकर लडका बनता है तथा स्त्रीलिंग प्रत्यय 'ई' जोडकर लडकी। इसी प्रकार घोड्, बच्च्, गध् माम् आदि भी।

यो पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनने के विपरीत कुछ उदाहरण ऐसे भी मिल जाते हैं जहाँ स्त्रीलिंग रूप मूल है तथा पुल्लिंग इसके आधार पर बना है भेड-भेडा, भैंस भैंसा, राँड रडुआ।

हिंदी के सम्बन्धवाचक शब्दो म एक अजीब बात यह है कि परंपरागत भारतीय परिवार म जिन सम्बन्धियो के लिए स्थान था उनके लिए तो पुराने नाम रहे हैं, किन्तु जिनके लिए स्थान नहीं था उनके लिए नाम नही रहे है। अब जब उनका स्थान परिवार म हो गया है तो स्त्रीलिंग शब्दो के आधार पर उनके लिए नये शब्द बना लिय गये हैं। उदाहरण के लिए ननद, मौसी, बहिन क लिए परिवार मे स्थान पहले था, अत सस्कृत मे उनके लिए क्रमश ननद, मातस्वसृ, भगिनी शब्द थे जिनसे हिंदी म ननद, मौसी तथा बहन का विकास हुआ। किन्तु इसक विपरीत ननदोई मौसा, बहनोई के लिए परिवार मे विशेष स्थान न था, अत उनके लिए विशेष नाम का प्रयोग नही हुआ। अब जब उनका परिवार मे स्थान हो गया तो इन स्त्रीलिंग शब्दो के आधार पर पुल्लिंग शब्द बना लिय गये हैं ननद-ननदोई, मौसी-मौसा (अब उनमे मूल निर्लिंग मौस् मानकर आ, ई जोडे जा सकते हैं) बहन बहनोई। ऐसे ही जीजी से जीजा शब्द बना लिया गया है। इसका विकास बडा लम्बा है—सस्कृत तात+क>दादा (बडा भाई)>दीदी (बडी बहन)>जीजी>जीजा (ई का आ करके)।

वचन

वचन का प्रयोग विश्व की सभी भाषाओ मे होता है। कुछ मे दो का, कुछ मे तीन का और अपवादत कुछ मे चार का। यो यदि एकवचन, बहुवचन आदि के रूपो का सीधे इन्ही वचनो मे प्रयोग होता और सामान्यत सभी शब्दो के विभिन्न वचनो के रूप होते तो प्रयोग में कोई खास परेशानी न होती। किन्तु वास्तविकता यह है कि कभी तो एकवचन के रूप दूसरे वचन मे प्रयुक्त होते हैं, और कभी कुछ शब्दो का प्रयोग प्राय एकवचन में होता है तो दूसरा का प्राय बहुवचन म। प्रयोग की दृष्टि से इन बातो का ध्यान रखना आवश्यक है। कुछ उदाहरण लिय जा सकते हैं। सस्कृत, अंग्रेजी आदि मे क्रिया एकवचन कर्त्ता के साथ एकवचन मे होती है किन्तु फारसी, हिन्दी, आदि मे आदरार्थ मे एकवचन कर्त्ता के साथ बहुवचन की क्रिया आती है शख सादी मी गूयन्द = शेख सादी कहते है। शुद्ध व्याकरणिक दृष्टि से फारसी मे 'गोयद' तथा हिंदी मे 'कहता है' होना चाहिए किन्तु होता है 'मी गूयन्द' और 'कहते है'। इसी तरह हिंदी म प्रश्नवाचक तथा उत्तम पुरुष को छोड कर अन्य अधिकांश सर्वनामो

के एकवचन रूपों के स्थान पर आदर के लिए बहुवचन का प्रयोग होता है। तू-तुम, वह वे, यह-ये, जिस जिन्ह। उत्तम पुरुष में अब 'मैं' के स्थान पर 'हम' का ही प्रयोग अधिक हो रहा है।

विश्व की अनेक भाषाओं में ऐसी बहुत सी संज्ञाएँ है जिनके बहुवचन के रूप प्राय नहीं प्रयुक्त होते। अंग्रेजी में अगणनीय (noncountable) संज्ञाएँ इसी प्रकार की है। जैसे copper, tin, wood, (लकडी), iron, kindness, air, good, force इनके प्रयोग एकवचन में ही होते हैं। यदि उनके बहुवचन के रूप बनाए जाएँ तो अर्थ बदल जाते हैं coppers=ताँबे के सिक्के, tins=टिन के डिब्बे, woods=जंगल, irons—बेडियाँ, kindnesses=कृपापूर्ण कार्य (बहुवचन), airs= अकड, goods=सामान, forces=सेनाएँ।

कुछ शब्दों के एकवचन में दो अर्थ होते हैं। किंतु बहुवचन केवल एक अर्थ में ही होता है। उदाहरण के लिए people (1 राष्ट्र, 2 लोग)—peoples (कई राष्ट्र), practice (1 आदत, 2 अभ्यास)—practices (आदतें)।

कुछ शब्दों के दो बहुवचन होते हैं किन्तु दोनों के दो अर्थ होते हैं। उदाहरणार्थ अंग्रेजी में cloth cloths=बिना सिले कपडे, clothes=पोशाक, brother-brothers=एक माँ-बाप के लडके, bretheren=एक समाज या सम्प्रदाय के सदस्य, die dies=सिक्के की मुहरें, dice=खेल की गोटियाँ।

कुछ भाषाओं में कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो सर्वदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी में 'दर्शन' ऐसा ही शब्द है उनके दर्शन हुए, आपके दर्शनों के लिए आया हूँ। घुघराला' की भी यही स्थिति है। 'घुघराले' रूप में ही प्रयुक्त होता है। घुघराले बाल। अंग्रेजी में भी ऐसे शब्द हैं, cattle people, poultry।

कुछ शब्द ऐसे भी होते है जो अपनी रूपरचना की दृष्टि से बहुवचन लगते हैं किन्तु वे एकवचन के होते हैं और उनका प्रयोग एकवचन में ही होता है -physics, news, mechanics, innings politics। हिन्दी में लडके, घोडे बच्चे, गदहे आदि भी ऐसे ही शब्द है। उदाहरणार्थ —

उस लडके का क्या नाम है?

राम घोडे पर है।

अनुवादकों के सामने वचन-संबंधी एक अजीब समस्या कभी कभी आ जाती है। एक भाषा में जहाँ एकवचन का प्रयोग होता है वहां दूसरी भाषा में बहुवचन का होता है। उदाहरण के लिए हिन्दी-अंग्रेजी में —

तुम्हारा चश्मा कहा है?

Where are your spectacles?

इसी प्रकार कैंची=scissors, चिमटा=tongs, सँडसी= pincers, दराज=drawers पाजामा=trousers, चेचक=measles गलसुआ= mumps, विलियर्ड=billiards, कहानी, इतिहास=annals धन्यवाद= thanks।

क्रम

शब्दों के प्रयोग म क्रम (जिसे वाक्य मे शब्दक्रम या पदक्रम कहते है) काफी महत्त्वपूर्ण है। क्रम मे परिवतन से अर्थ कुछ का कुछ हो जाता है —

राम मोहन कहता है।
मोहन राम कहता है।
Ram killed Mohan
Mohan killed Ram

किन्तु यह बात अयोगात्मक या विश्लेषणात्मक या क्रमप्रधान भाषाओ मे ही विशेष महत्त्व रखती है। पुरानी अरबी, ग्रीक, सस्कृत जैसी योगात्मक भाषाओ मे शब्द के क्रम मे परिवतन से अथ मे अन्तर नही आता।

राम मोहन अहनत।
मोहन राम अहनत।

सस्कृत के उपर्युक्त दोना वाक्यो मे शब्द-क्रम एक नही है, किन्तु अथ दोना ही वाक्यो का एक है।

हिन्दी, अग्रेजी, चीनी जैसी भाषाओ मे शब्द क्रम का महत्त्व है किन्तु इन भाषाओ की पुस्तको म प्राय कर्ता, कम, क्रिया क्रियाविशेषण आदि के क्रम का ही सामान्य उल्लेख रहता है। उदाहरण के लिए हिन्दी के बारे मे कहा जाएगा कि कर्ता प्रारम्भ म आता है, क्रिया अन्त मे और कम या क्रियाविशेषण बीच म। या फिर बल देने के लिए इस क्रम म परिवतन करके बलयुक्त को पहले रख देते हैं। वस्तुत क्रम की ये बडी मोटी बातें हैं। भाषा मे शब्दो के प्रयोग मे क्रम और भी कई स्तरो पर काम करता है जो कम महत्त्वपूर्ण नही है। उदाहरण के लिए वाक्य म केवल कर्ता, क्रिया, कम क्रियाविशेषण ही नही, उपवाक्य और पदवध भी विशेष क्रम से आते है वस्तुत क्रम की पूरी व्यवस्था कुछ इस प्रकार है शब्द विशेष क्रम से समस्त पदो (ग्राममल्ल, मल्लग्राम)तथा पदो (राम ने) मे आते है, तथा इसी प्रकार पद विशेष क्रम से पदवध (मकान की ऊपरी मजिल पर मोहन रहता है) एव उपवाक्यो मे, पदवध विशेष क्रम से उपवाक्यो या वाक्यों म और उपवाक्य विशेष क्रम म वाक्यो मे आते है। इन क्रमो का ध्यान न रखने पर कभी तो कुछ अथ ही नही निकलता और कही भाषा की सहज गति प्रभावित होती है और वाक्य अजीब-सा लगने लगता है।

यहाँ हिन्दी को लेकर क्रम सम्बन्धी कुछ बातें ली जा रही हैं। हिन्दी मे विशेषण का प्रयोग कभी तो सज्ञा के पूव होता है —

अच्छा लडका

और कभी सज्ञा के बाद होता है —

लडका अच्छा है।

पहले को विशेष्य विशेषण और दूसरे को विधेय विशेषण कहते

यह समझा जाता है कि सभी विशेषण शब्द इन दोनो क्रमो मे आ सकते हैं। किन्तु वास्तविक स्थिति यह नही है। हिन्दी मे ऐसे विशेषण भी है जो सज्ञा क पूव नही या नही के बराबर आते हैं। उनका प्रयोग विधेय विशेषण के रूप म ही प्राय होता है। उदाहरण के लिए 'वे अग्रसर हुए', 'मैं इस बात से अवगत हूँ', 'वह देश पर कुर्बान, हो गया', 'मुझे यह स्थिति गवारा नहीं' आदि म अवगत, कुर्बान, गवारा ऐसे ही हैं। इस दृष्टि से अभी तक काम नही हुआ है। मुझे विश्वास है कि ऐसे शब्द काफी मिल सकते है, जिनका प्रयोग विशेष्य के पूव या तो बिल्कुल नही होता या बहुत ही कम होता है, और वह भी विशेष प्रकार की रचनाओ मे। हिन्दी विशेषणो के प्रयोग को पूरी तरह समझने के लिए इनका सकलन एव विश्लेषण आवश्यक है।

इसी प्रकार 'कलाँ' और 'खुद' ऐसे शब्द है जो केवल स्थानवाचक नामो के बाद ही ('बडे' और 'छोटे' के अथ मे) आते हैं, शेरपुर कलाँ, शेरपुर खुद। कभी कभी विशेषणो की भी विशेषता बतानेवाले विशेषणो का प्रयोग हिन्दी म होता है जिन्हें प्रविशेषण कहा जा सकता है। इनके भी क्रम की एक सामान्य व्यवस्था है। उदाहरण के लिए 'वह बहुत अधिक सुन्दर है' तो प्रयोग होता है किन्तु 'वह अधिक बहुत सुन्दर है' नही होता। ऐसे ही 'वह बडा धूत है','वह बहुत धूत ह' तो प्रयुक्त होते हैं किन्तु 'वह बडा बहुत धूत है' नही होता। इसी तरह 'बडा भारी' या निहायत घटिया' तो प्रयोग मे आते हैं किन्तु 'भारी बडा' या 'ज्यादा बहुत' आदि नही। इस दिशा मे काय अपेक्षित है। ऐसे प्रयोगा के भीतर एक व्यवस्था है, जिसकी जानकारी ठीक प्रयोगो के लिए आवश्यक है।

कभी कभी एक से अधिक विशेषण एक साथ आते हैं, और उनमे भी एक सामान्य क्रम होता है। उदाहरण के लिए यदि सावनामिक और गुणवाचक विशेषण का प्रयोग अपेक्षित हो तो सामान्यत सावनामिक पहले आयगा तथा गुणवाचक बाद मे इतनी अच्छी पुस्तक, वह बडा घोडा, यह सुन्दर चित्र, वह काला आदमी। सख्यावाचक विशेषण और गुणवाचक विशेषण हा ता सख्यावाचक पहले आयेगा दो काले कुत्ते तीन खूखार शेर। सम्बन्धवाचक विशेषण और गुणवाचक विशेषण हो तो पहले सम्बन्धवाचक आयगा उसका सफेद रूमाल, मेरी काली पेंसिल। सम्बन्धवाचक, सख्यावाचक तथा गुणवाचक हा तो इसी क्रम से आयेंगे मोहन की एक नई पुस्तक, सीता की दो सुनहरी चूडियाँ। सख्यावाचक, प्रविशेषण और गुणवाचक हो तो वे भी इसी क्रम से प्रयुक्त होंग। एक बडी अच्छी पुस्तक, दो बडे अच्छे कवि।

यह तो विभिन्न प्रकार के विशेषण थे। कभी-कभी एक विशेष्य क साथ एक से अधिक गुणवाचक विशेषण भी आते ह, और उनका भी एक विशेष क्रम ही प्राय प्रयोग होता है। पुराना लाल कोट, उसकी काली बडी-बडी आँखें, सफेद ऊँची इमारत, अच्छा भला आदमी। कभी-कभी क्रम बदला भी जा सकता है किन्तु तब अथ बदल जाता है 'अच्छा खासा आदमी — खासा अच्छा आदमी',

'काली बडी आँखें'—'बडी काली आखें', 'बडी भारी पुस्तक'—'भारी बडी पुस्तक'।

लगभग या निश्चय का भाव व्यक्त करने के लिए कभी-कभी एक से अधिक सख्यावाचक विशेषणो का प्रयोग होता है। उनका भी एक निश्चित क्रम होता है क्रम पहले, अधिक बाद मे एक-दो, दो-तीन, दो चार, दस-बीस पचास-साठ, सत्तर-अस्सी, दो सौ-चार सौ, दस-बीस-पचास। किन्तु इनमे भी कुछ प्रयोग अपवादस्वरूप ऐसे भी हैं जिनमे दोनो प्रकार के प्रयोग चलते है पचास-सौ, सौ पचास, पाँच सौ-हजार, हजार-पाँच सौ, पाँच दस, दस पाच, पच्चीस-पचास, पचास-पच्चीस।

यहाँ हिन्दी से कुछ थोडे से उदाहरण थे। वास्तविक स्थिति यह है कि सभी भापाओ मे विशेपणो के प्रयोग मे क्रम सबधी अनेकानक नियम काम करते है। अभी तक विश्व की किसी भी भापा मे प्रयुक्त इन नियमो पर काम नही हुआ है।

अव्यय के प्रयोग मे भी क्रम का महत्त्व कम नही है। अव्यय शब्द हिन्दी वाक्यो मे प्राय तीन स्थानो पर आते हैं —

मुडते ही शेर ने बल की पीठ पर अपना पजा इतनी जोर से मारा कि धराशायी हो गया।

इनमे भी विशेप क्रम होता है, जिसमे कुछ सीमा तक ही परिवतन किये जा सकते है। 'कि' को उपर्युक्त वाक्य मे स नही हटा सकते। पहले तीन को, तीन के स्थान पर दो (शेर ने मुडते ही बल की पीठ पर) या एक (मुडने ही बल की पीठ पर इतनी जोर स) स्थान पर कर सकते हैं, किंतु क्रम को सामान्यत नही बदल सकते जब तक कि किसी पर बल देना अभीष्ट न हो।

जब एक से अधिक क्रिया शब्दो का एक वाक्य मे प्रयोग हो तो उनमे भी विशेप क्रम होता है सना बढती चली आ रही है, अब दरवाजा खोल दिया जा सकता है। मुख्य अथ की द्योतक क्रिया (खोल) पहले आती है, उसके बाद रजक क्रिया (देना), फिर वाच्यसूचक (जा) फिर सक-वर्गीय (सक, चुक आदि) और अन्त मे 'होना' के रूप।

क्रिया के साथ भर, ही, मात्र, तो, भी, मत, नही, न का प्रयोग भी अवधारण या निपेध के लिए होता है। ये भी क्रम मे स्वतत्र नही हैं। इनकी सीमाएँ हैं, उदाहरणाथ —

पुस्तक नही खरीदी जा सकती।
पुस्तक खरीदी नही जा सकती।

तो ठीक हैं किन्तु,

पुस्तक खरीदी जा नही सकती।

अल्पप्रयुक्त है और आता भी है तो विशेप अथ म। दूसरा उदाहरण है —

सांप को नही मारा जा सकता था। (बहुप्रयुक्त)
सांप को मारा नही जा सकता था। (प्रयुक्त)

साप को मारा जा नही सकता था। (अल्पप्रयुक्त)
साप को मारा जा सकता नही था। (प्राय अप्रयुक्त)
साप का मारा जा सक्ता था नही। (प्राय अप्रयक्त)

क्रम से शब्दो के वाग्भाग मे भी अतर पडता है

खभे टेढे गडे हैं।
टेढे खभे गडे है।

13

समाजशब्दविज्ञान

समाज के सन्दर्भ में भाषा के अध्ययन को समाजभाषाविज्ञान कहा जाता है। उसी प्रकार समाज के संदर्भ में शब्दों के अध्ययन के लिए यहाँ समाजशब्दविज्ञान नाम का प्रयोग किया जा रहा है। यों यदि इस नाम के दो अर्थ ले लिए जाएँ तो भी कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इस दृष्टि से समाजशब्दविज्ञान का एक अध्ययन-क्षेत्र तो है 'समाज के परिप्रेक्ष्य में शब्दों का अध्ययन' तथा दूसरा अध्ययन-क्षेत्र है 'समाज पर प्रकाश डालने के लिए या समाज विशेष को जानने के लिए शब्दों का अध्ययन'। यहाँ क्रमशः दोनों को लिया जा रहा है।

समाज के परिप्रेक्ष्य में शब्दों का अध्ययन

वस्तुतः समाजभाषाविज्ञान में शब्दों के स्तर पर जो अध्ययन किया जाता है, वह यही है। उदाहरण के लिए हिंदी में मध्यम पुरुष के लिए तीन सर्वनाम शब्द हैं तू, तुम, आप। इनका प्रयोग सामाजिक संबंधों पर आधारित है। अपवादों की बात छोड़ दें तो जो लोग सामाजिक संबंधों में वक्ता से छोटे हैं, तथा जिनके साथ सामाजिक संबंधों में औपचारिकता नहीं है, उनके लिए वक्ता 'तू' का प्रयोग करता। वह व्यक्ति अपना बच्चा भी हो सकता है नौकर भी और घनिष्ठ मित्र भी। 'तुम' इसकी तुलना में कुछ ऊपर है। यह भी अनौपचारिक है किंतु 'तू' जितना नहीं। 'आप' का प्रयोग सामाजिक संबंधों की दृष्टि से अपने से बड़े या तथा ऐसों के लिए करते हैं जिनके साथ वक्ता के संबंध औपचारिक हैं। यह व्यक्ति पिता भी हो सकता है समाज का कोई धनी मानी व्यक्ति भी हो सकता है बड़ा अधिकारी भी हो सकता है और अच्छे स्तर का [illegible] भी। इस तरह इन शब्दों के प्रयोग के नियम भाषा की संरचना में [illegible] हैं व सामाजिक मान्यताओं में निहित हैं।

ऐसे ही बहुत से शब्द औपचारिक होते हैं। औपचारिक सामाजिक संबंधों के होने पर ही इनका प्रयोग होता है। जैसे शुभनाम (आपका शुभनाम क्या है?) शुभस्थान (आपका शुभस्थान कहाँ है?), कृपा (बस फिर एक बार आने की कृपा करें) कष्ट (इस अवसर पर आप भी पधारने का कष्ट करें) आदि [illegible] की तुलना में 'नाम' में वह औपचारिकता नहीं है जो 'शुभनाम' [illegible] 'स्थान' में है। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि [illegible]

औपचारिकता या अनौपचारिकता नही होती। सामाजिक मान्यताएँ ही एक को औपचारिक शब्द बना देती हैं और दूसरे को अनौपचारिक।

कभी-कभी हम देखते हैं कि भाषा का एक शब्द ठीक माना जाता है किंतु उसी अर्थ का दूसरा शब्द अश्लील माना जाता है। प्रश्न यह उठता है कि एक ही अर्थ में प्रयुक्त दो शब्दों में एक अश्लील शब्द क्यों हो गया और दूसरा अश्लील क्यों नही माना गया। इसका कारण न तो भाषा की संरचना में है और न शब्द में। इसका कारण भी समाज ही है। वस्तुतः पाखाना, पिशाब जननेन्द्रिय आदि से संबद्ध शब्द जब समाज में बहुत प्रचलित हो जाते हैं तो समाज उन्हें अश्लील ठहरा देता है जिसका परिणाम यह होता है कि शिष्ट भाषा में उनका प्रयोग वर्जित हो जाता है तथा समाज उनके स्थान पर नए शब्दों का प्रयोग शुरू कर देता है। इस तरह नए शब्द पुराने अश्लील शब्दों को धक्का देकर सामाजिक प्रयोग से बाहर कर देते हैं। इसी तरह अंग्रेजी के शिष्ट प्रयोग से 'लैट्रिन' और 'यूरिनल' को 'बाथरूम' ने निकाल बाहर किया, फिर 'बाथरूम' भी अश्लील हो गया तो 'ट्वॉयलेट' आया। हिंदी में मल, मूत्र, वीर्य आदि के समानार्थी समाज प्रचलित अनेक शब्द इसी तरह अश्लील माने जाने के कारण प्रयोग से निकल गए हैं। 'वह गर्भवती है' न कहकर 'उसका पैर भारी है' कहना इसीलिए पसंद किया जाता है। अंग्रेजी में इसी तरह 'प्रेगनेंट' का प्रयोग न करके 'इन फेमिली वे' का प्रयोग करते हैं। तो हमने देखा कि शब्दों पर 'अश्लीलता' समाज द्वारा आरोपित होती है।

इस प्रसंग में कुछ अन्य प्रकार के शब्दों की वर्जना की बात भी की जा सकती है। हिंदी क्षेत्र के अनेक गाँवों में दिन में तो लोग 'साँप' तथा 'बिच्छू' शब्दों का प्रयोग करते हैं किंतु रात में वे लोग 'साँप' को 'जेवर' या 'रसरी' तथा 'बिच्छू' को 'टेढ़की' कहते हैं। इसका कारण यह है उनका विश्वास है कि रात में नाम लेने से ये दोनों काट खाने को आ जाएँगे। इसी तरह के भय ने कुछ बीमारियों को अच्छे-अच्छे नामों द्वारा या शब्दों द्वारा पुकारने को बाध्य किया है। उदाहरण के लिए चेचक के विभिन्न प्रकारों के लिए 'माता', 'शीतला', 'दुलारो' जैसे शब्दों के प्रयोग के पीछे इसी तरह की भावना काम कर रही है।

कभी कभी ऐसा भी देखने में आता है कि बहुत से शब्द ... स दो ... हो जाता है। उदाहरण के लिए कलेक्टर, कमिश्नर, डिप्टी-कले... प्रोफेसर, डॉक्टर आदि शब्द पहले पुल्लिंग थे, किंतु अब ये पु... भी। ऐसे ही 'नर्स' शब्द पहले केवल स्त्रीलिंग था, किंतु ऐसा क्यों हुआ, इसका कारण हमें हिन्दी भाषी समाज में य... चूँकि कलेक्टर, कमिश्नर आदि के पदों ... पुरुष काम ... वर्ग के शब्द पुल्लिंग थे, अब इन प... भी काम ... ये शब्द स्त्रीलिंग भी हैं। इसी प्रका... ... इस ... ही करती थी, अब यह शब्द स्त्री... ... के

पुरुप भी यह काम करते हैं, अत यह शब्द अब उमर्भानगी हो गया है । इस तरह के शब्द लिंग परिवतन के पीछे सामाजिक परिवतन काम करते हैं ।

शब्दो मे ध्वनिया की दृष्टि से परिवतन होते हैं, तथा कभी-कभी इन परिवतना के पीछे सामाजिक कारण होते हैं । उदाहरण के लिए, पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा पश्चिमी बिहार के बहुत से ब्राह्मण घरा मे 'गोभी' को 'कोभी' कहत रहे हैं। 'ग' के 'क' म इस परिवतन क पीछे कारण यह रहा है कि 'गो' का अथ 'गाय' है, अत. खान क नाम म इसे नही आना चाहिए। इसलिए 'गोभी' का 'कोभी' करके अत्यधिक धर्मांध लोगा ने यह सोचकर सतोप की सास ली कि उन्होंने 'गोभी' खा भी ली और उनका धम भी बच गया। कुछ ऐसे ही कारणों से पजाव तथा पश्चिमी हिंदी प्रदेश मे 'मसूर' शब्द के स्थान पर 'मलका' शब्द चल पडा । हुआ यह कि, 'सूअर' मुसलमानो के लिए 'हराम' है, और 'सूअर' को पश्चिमी क्षेत्र म 'सूर' भी कहते हैं, यह 'सूर' चूकि 'मसूर' शब्द म भी आता है, अत किसी खाद्य पदाथ को 'मसूर' कहना मुसलमानों को उचित नही लगा और व अपनी इस पसदीदा दाल को 'मलका' कहन लग। इसीलिए बहुत स लोग 'मसूर' को 'मलका मसूर' भी कहते हैं । बहुत से हिंदू 'मास' से परहेज करत हैं, और 'मसूर' मे प्रारभ मे 'मस' है, अत उत्तर प्रदेश के काफी हिंदू घरो म 'मसूर' की दाल नही खाई जाती । 'मसूर' का मास की तरह लाल होना भी इसका एक कारण है।

यह तो ध्वनि और शब्द के बदलने की बात थी। कभी-कभी सामाजिक कारणा स शब्दो के अथ भी बदल जाते हैं । उदाहरण के लिए 'बौद्ध' का अथ है 'बुद्ध का अनुयायी , किंतु इसी से विकसित शब्द 'बुद्धू' का अथ है 'मूख'। हुआ यह कि भारत म जब बौद्ध धम का ह्रास होने लगा तथा इसके अनुयायिया मे तरह तरह की बुराइयाँ आने लगी तो स्वभावत हिंदू समाज इस धम को 'हीन' तथा इसके अनुयायियो को 'मूख' मानन लगा, और परिणाम यह हुआ कि 'बुद्धू' शब्द का अथ 'बुद्ध धम का अनुयायी से हटकर मूख हो गया । हिंदी का 'नगा-लुच्चा' शब्द भी कुछ इसी प्रकार हेयार्थी बना । प्रारभ मे कुछ जन साधुओ को 'नग्न' (दिगबर) रहने के कारण नग्नक' तथा आत्मपीडन के लिए अपन बाल नोचन के कारण 'लुचक' कहते थे। बाद मे इन साधुआ का समाज जब भ्रष्ट हो गया तो नगा-लुच्चा' रूप मे इनका नाम हेयार्थी विशेषण बन गया । वस्तुत कोई भी समाज च्युत होता है तो उसका नाम भी अपन उच्चार्थ खोकर हेयार्थी बन जाता है। इसी तरह स्वतत्रता पूव के उच्चार्थी शब्द 'काग्रेसी तथा 'नता अब हेयार्थी हो गए है। इसके विपरीत भी कुछ परिवतन देखे जाते है। 1930 40 के आस पास इग्लड म इडियन' का जो अथ था, आज निश्चय ही वह नही है ।

इस तरह शब्दा का अध्ययन विश्लेषण, अनक दृष्टियो से समाज के सदभ म करना सभव है।

समाज की जानकारी के लिए शब्दो का अध्ययन

समाज विशेष की जानकारी के लिए शब्दा का अध्ययन विश्लेषण काफी काम का होता है। अनेक पुरानी सस्कृतियो के अध्ययन मे वहा के पुराने शब्द भाडार का अध्ययन इसी रूप मे सहायक होता है। भाषाविज्ञान के अध्येताओं से यह बात छिपी नही है कि जब पिछली सदी के उत्तरार्ध मे तथा इस सदी के पूर्वार्ध मे यह प्रश्न उठा कि सस्कृत, अवस्ता, पुरानी फारसी, ग्रीक, जर्मन, रूसी आदि की मूलभाषा 'भारोपीय' बोलने वाले लोग (जिन्हे कुछ लोगो ने आर्य भी कहा है) मूलत कहा रहते थे, तो विद्वानो को शब्दो के अध्ययन की ही सहायता सर्वाधिक लेनी पडी। किया यह गया कि इन सभी भाषाओं के शब्द भाडार की तुलना करके मिलते-जुलते शब्द अलग कर लिए गए और यह माना गया कि य शब्द उस मूल भाषा म भी किसी न किसी रूप म रहे होंगे। फिर इन शब्दो का विषयानुसार वर्गीकरण किया गया। इसके उपरात इन वर्गीकृत शब्दा के आधार पर उस पुरान समाज की बहुत सी बाता को खोज निकालने का प्रयास किया गया। उदाहरण के लिए नाते रिश्ते की समान शब्दावली के आधार पर यह पता लगाया गया कि उस समाज मे किन किन सबधो को स्वीकृति मिली थी, तो खाद्य विषयक समान शब्दावली से यह पता चला कि वे लोग क्या खाते-पीते थे। इसी तरह पशु पक्षियो की समान शब्दावली ने उनके परिचित पशु-पक्षियो की जानकारी दी। इसी तरह उनके धर्म और विश्वास उनके व्यवसाय तथा उनकी गणना पद्धति आदि के बारे मे भी अत्यत महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले गए। इन सबके साथ-साथ शब्दों के आधार पर भौगोलिक जानकारी भी प्राप्त की गई और उसके आधार पर उनके मूल निवास-स्थान के बारे मे अनुमान लगाए गए। इस तरह समाज विशेष पर प्रकाश डालने के लिए शब्द बहुत ही महत्त्वपूर्ण साधन है।

कभी-कभी तो शब्दो के विश्लेषण और उनकी तुलना से सस्कृतियो के बारे मे ऐसी ऐसी बाता का उदघाटन होता है जिनकी ओर सामान्यत हमारा ध्यान नही जाता। उदाहरण के लिए भारत म अभिवादन के शब्द सामाजिक सबधा पर आधारित हैं 'दडवत (श्रद्धा से बडे के समान किसी के सामने भूमि पर पड जाना) का प्रयोग लोग बहुत पहुँचे हुए साधू महात्माओ के लिए करत है, 'पालागन (पैर छूना) अपने से बडे सगे सबधियो आदि के लिए करत है, 'प्रणाम' (अर्थ है विशेष झुकना) अपने स बडे किसी का भी कर सकते है, यह अधिक औपचारिक है, 'नमस्कार' (अर्थ है झुकना), 'नमस्ते', 'आशीर्वाद' (पुरान लोग अपन से छोटा के लिए इसका प्रयोग करते हैं) भी एस ही क्रमश सामाजिक मापदड पर ऊपर स नीचे आते हैं। इसकी तुलना अग्रेजी आदि यूरोपीय अभिवादन प्रणाली स करें तो हम पाते हैं कि उनके शब्द (Goodmorning, Goodevening, Goodnight) सामाजिक सबधा पर

आधारित न होकर समय विभाजन पर आधारित है। क्या इसका अथ यह नही हूँ कि हमारा समाज 'सामाजिक' सबधो मे 'बडे होने छोटे होने' को अधिक महत्त्व दता है तो उनका समाज 'समय' को अधिक महत्त्व देता है। यह ध्यान देन की बात है कि शब्द इस तरह की बडी पते की बहुत सारी बातें विभिन्न समाजो के बारे मे बता सकते हैं, यदि उनका इस दृष्टि से अध्ययन विश्लेषण अच्छी तरह किया जाए।

कुछ और तरह के उदाहरण ले। यदि कोई यह पूछे कि प्राचीन भारतीयो मे कौन कौन से अधविश्वास प्रचलित थे तो सामान्यत उनका लेखा जोखा कही एक स्थान पर नही मिलेगा, किंतु सस्कृत के शब्दो मे ऐसे काफी सकेत हैं जो इस बात पर अच्छा प्रकाश डालते हैं। उदाहरण के लिए 'चाद' के कुछ सस्कृत पर्याया को लें सुधाकर, सुधारश्मि, अमृताशु, सुधानिधि। इनके विश्लेषण से स्पष्ट हो जाएगा कि लोगो का यह विश्वास रहा है कि चद्रमा म अमृत की निधि है जो उसकी किरणो के माध्यम से पृथ्वी पर आती है। आज भी बहुत से लोग कार्तिक पूर्णिमा की रात म चादनी मे खीर रखकर प्रात जो खाते हैं उसके पीछे इसी विश्वास का अवशेष है। वही अमृत उस खीर को दीर्घायुता की विशेषता प्रदान करता है। इसी तरह चाद के 'मगाक' और 'हरिणाक पर्याय यह बता रहे हैं कि लोगो का विश्वास था कि चाद मे जो काला निशान है वह 'हिरन' है। इसी आधार पर ये शब्द बनाए गए हैं। 'कपूर' के लिए सस्कृत मे 'घनसार' तथा 'मेघसार' शब्द का प्रयोग मिलता है। इसके पीछे यह अधविश्वास है कि स्वाति नक्षत्र के बादल की बूँदें केले के पेड मे पडकर कपूर बन जाती हैं और पथ्वी के अचला, निश्चला, स्थिरा पर्याय शब्द क्या कहते है ? कहते हैं कि पथ्वी अचल है, निश्चल है, स्थिर है—ऐसी मान्यता इन शब्दो के रचयिताओ के मस्तिष्क म निश्चय ही रही होगी। कहना न होगा कि यह मान्यता भी अधविश्वास है, सत्यत ता पथ्वी चला, अस्थिरा है, अचला, स्थिरा नही।

हिंदू गोहत्या के बहुत ही विरोधी रहे हैं किंतु वदिक साहित्य मे अतिथि का पर्यायवाची शब्द 'गोघ्न' कुछ और कहानी कहता है। 'गोघ्न' का अथ है जिसके लिए गो मारें। बृहदारण्यक उपनिषद् म भी आता है कि सम्मान्य अतिथि के आने पर महोक्ष (अच्छा बैल) मारे जाते थे। कुछ सस्कृत नाटको मे भी इस प्रकार के उल्लेख हैं। वास्तविकता यही है कि पहले आय गोमास खात थे बाद मे 'गाय' और 'बल' की उपयोगिता देखकर 'गोहत्या पर वदिश लगी और तब 'गाय' के लिए एक नए पर्याय का निर्माण हुआ। वह पर्याय है 'अघ्न्या अथात् 'वह जो मारने योग्य न हो'। इस प्रकार 'गोघ्न' तथा 'अघ्न्या' शब्द हिंदू समाज की वतमान मान्यताओ से पूर्णत अलग एक लुप्त परपरा का उद्घाटन करते हैं।

हिंदुओ मे मुर्दा जलाते हैं तथा मुसलमानो और ईसाइयों म गाडते हैं। किंतु वास्तविकता यह है कि पुराने आय भी अपने मुर्दे गाडत थे। 'श्मशान शब्द का सबध शी' धातु से है। 'शी' का अथ है 'लेटना', 'सोना'। अर्थात् 'श्मशान' वह

है जहाँ मुर्दे लिटाए या गाडे जाते थे। भारतीय संस्कृति के प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य क्षितिमोहन सेन भी अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'भारतीय संस्कृति' में इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि आर्य अपने मुर्दे गाड़ते थे, जलाते नहीं थे। वस्तुतः जलाने की परंपरा आर्यों ने बाद में अनार्यों से ग्रहण की।

एक बार भारतीय संस्कृति पर मेरा एक भाषण था। भाषण के बाद एक पंडित जी मेरे पास उठकर आए। भाषण की प्रशंसा करते हुए बोले, 'डाक्टर साहब, आप भारतीय संस्कृति के इतने अच्छे जानकार होकर भी पैंट-बुशर्ट पहनते हैं, यह आपको शोभा नहीं देता। आपको तो 'कुर्ता' पहनना चाहिए। पंडित जी कुर्ता पहने हुए थे। पहले तो मैंने सोचा कि चुप रहूँ फिर मन में आया कि उनका भ्रम दूर हो जाना चाहिए, अतएव मुझे उन्हें बताना पड़ा कि 'कुर्ता' तुर्की शब्द है, और यह कपड़ा मुसलमानों के साथ भारत में आया है। ऐसे ही 'पजामा' फारसी शब्द है। मूल है 'पायजामा'। 'पाय' अर्थात 'पैर' और 'जामा' यानी कपड़ा। तो 'पैजामा' का फारसी अर्थ है 'पैर का कपड़ा'। इस तरह पैंट-बुशर्ट जितने विदेशी हैं, उतने ही विदेशी पायजामा कुर्ता भी हैं। वस्तुतः अपने यहाँ के पुराने कपड़े 'अंगरक्षक' तथा 'अधोवस्त्र' थे। पहले का अर्थ है 'अंगों की रक्षा करने वाला'। यही शब्द मध्यकाल में 'अँगरखा' बन गया था। दूसरे शब्द 'अधोवस्त्र' का अर्थ है नीचे पहनने का कपड़ा'। इसी का विकास धोती है। अपवादों की बात छोड़ दें तो यह प्रायः पाया जाता है कि जब किसी संस्कृति से कोई वस्तु आती है तो उसका नाम भी वहीं से आता है। इस तरह ऐसे ही अपने यहाँ अंग पोछने के लिए पहले एक कपड़े का प्रयोग होता था जिसे 'अंगप्रोक्षक' कहते थे, इसका अर्थ है 'अंग पोछने वाला'। 'अंगोछा' यही है। पुर्तगालियों के साथ 'तौलिया' शब्द आया। प्रायः लोग 'तौलिया' को अंग्रेजी 'टॉवेल' से निकला समझते हैं किंतु ऐसा है नहीं। अंग्रेजों के आने के पूर्व तौलिया, बिस्कुट, लालटेन —वस्तुएँ तथा शब्द—पुर्तगालियों के साथ भारत में आ चुके थे। 'मैदा' और सेवई' (सेंवियाँ) दोनों की ही प्रयोग परंपरा यूनान से भारत में आई है, और ये दोनों शब्द मूलतः यूनानी शब्द 'सेमिदालिस' है। मिठाइयों में कौन भारतीय हैं तथा कौन विदेशी, उनके नामों के आधार पर यह भी सरलता से जाना जा सकता है। उदाहरणार्थ 'मोदक, लड्डू' अपने हैं तो 'जलेबी, 'बर्फी' मुसलमानों के साथ आए हैं। ये फारसी शब्द हैं। आधुनिक काल की मिठाइयाँ (पेस्ट्री, केक टाफी चॉकलेट) के बारे में हम जानते ही हैं कि वे हमारे समाज को अंग्रेजों की देन हैं।

इस तरह कोई समाज क्या सोचता रहा है, क्या मानता रहा है, कैसा रहा है क्या उसका अपना है तथा क्या उसने अन्यों से लिया है—आदि इत्यादि बातों का बहुत अच्छा लेखा जोखा हम उस समाज की भाषा के शब्द दे सकते हैं, यदि हम गहराई से उनका अध्ययन-विश्लेपण करें।

14

आधारभूत शब्दावली

'आधारभूत शब्दावली' में 'शब्दावली' का अर्थ है किसी भाषा में प्रयुक्त शब्दों का समूह। इसके हिंदी में अन्य नाम 'शब्दसमूह', 'शब्दभंडार' तथा 'शब्द-भांडार' हैं। अँग्रेज़ी में इसे 'वाक्बुलरी' (Vocabulary) कहते हैं। 'आधारभूत' का अर्थ है 'जो आधार हो'। इसे 'मूल' या 'मूलभूत' या 'बुनियादी' भी कहते हैं। अंग्रेज़ी में इसे 'बेसिक' (Basic) कहा जाता है। इस तरह 'आधारभूत शब्दावली' अंग्रेज़ी 'बेसिक वॉकेबुलरी' का हिंदी पर्याय है।

जैसा कि पीछे 'शब्दसमूहविज्ञान' (आरेख के लिए वहीं देखिए) शीर्षक अध्याय में हम देख चुके हैं 'प्रयोग' और 'प्रकृति' की दृष्टि से किसी भी भाषा की शब्दावली या उसके शब्दसमूह के शब्दों को तीन वर्गों में रखा जा सकता है: उच्च, मध्यवर्ती तथा आधारभूत। उच्च शब्द भाषा के शब्दसमूह में सबसे बाहरी होते हैं। इस वर्ग में उस भाषा में विभिन्न विज्ञान, शास्त्रों, कलाओं एवं [illegible] के पारिभाषिक शब्द आते हैं तथा कुछ वे शब्द आते हैं जो साहित्य [illegible] प्रयुक्त होते हैं, अतः प्रायः क्लिष्ट माने जाते हैं तथा इनका ज्ञान [illegible] को होता है। मध्यवर्ती शब्द उच्च शब्दों की तुलना में [illegible] भीतरी होते हैं किंतु उतने नहीं जितने आधारभूत [illegible] हैं। [illegible] अपेक्षाकृत काफी लोगों को होता है, किंतु इनमें [illegible] शब्दावली के भाग होते हैं सक्रिय शब्दावली के [illegible] विभिन्न विधाओं में ही इनका प्रयोग प्रायः होता है। [illegible] आधारभूत शब्द भाषा की संरचना में भीतरी होते हैं। [illegible] रह सकता।

बहुत छोटी होती है तथा उसमें उन सभी सामान्य एवं सार्वजनीन वस्तुओं एवं संकल्पनाओं (concepts) की अभिव्यक्ति के लिए अपेक्षित संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण क्रिया तथा अव्यय शब्द होते हैं जो किसी भाषायी समाज के दैनिक जीवन में आपसी सम्पर्क के आधार होते हैं। प्रत्येक भाषा में अन्य शब्दों की तुलना में आधारभूत शब्दों का ही प्रयोग अधिक होता है। किसी भाषा की अधिकांश बोलियों में ये शब्द यदि ध्वन्यात्मक परिवर्तनों की बात छोड़ दें तो प्राय समान होते हैं। एक बोली भाषी व्यक्ति दूसरे बोली भाषी को इन्हीं के आधार पर समझ लेता है।

आधारभूत शब्दावली की एक यह विशेषता भी उल्लेख्य है कि उच्च या मध्यवर्ती शब्दावली की तुलना में यह अन्य भाषाओं से बहुत कम प्रभावित होती है। बाह्य प्रभाव तकनीकी क्षेत्र में पहले उच्च में आता है तथा अन्य क्षेत्रों में प्राय मध्यवर्ती में। अन्य भाषाओं के कम ही शब्द, आधारभूत शब्दसमूह तक पहुँच पाते हैं, और जो पहुँचते हैं वे भी कुछ अपवादों को छोड़कर, प्राय बहुत देर में।

किसी भाषा की आधारभूत शब्दावली का वैज्ञानिक ढंग से पता लगाने का कार्य इस सदी के तीसरे दशक में शुरू हुआ। 1922 में डॉ० थार्नडाइक (Thorndike) ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय से अंग्रेजी के सर्वाधिक प्रयुक्त बीस हजार शब्दों की सूची (Teacher s Wordbook of Twenty Thousand Words found most frequently and widely in general literature) प्रकाशित की। इस कार्य के लिए प्रयोगों के एक करोड़ कार्ड बनाए गए थे जिनके आधार पर इन 20 हजार शब्दों की छँटाई हुई। यह सूची सच्चे अर्थों में आधारभूत शब्दावली की तो थी नहीं किन्तु कार्य उसी दिशा में था। ये बीस हजार वे शब्द थे जो सर्वाधिक प्रयुक्त होते थे। आगे चलकर इनके आधार पर शिक्षा के लिए स्तरित (graded) पाठ्यपुस्तकें बनाई गई थीं। 1927 में कैम्ब्रिज के आर्थोलाजिकल इंस्टीट्यूट ने अंग्रेजी की आधारभूत शब्दावली पर कार्य शुरू किया जिसके परिणामस्वरूप अंग्रेजी भाषा में आधारभूत शब्द 850 माने गए। रूसी भाषा पर इस दृष्टि से बहुत विस्तृत कार्य हुआ है। सोवियत संघ की इस्तोनिया जनतन्त्र की राजधानी ताल्लिन की अकादमी के रूसी विभाग ने 300 व्यक्तियों से इस दिशा में 3 वर्षों (1959 1962 तक) काम कराया और बाद में रूसी भाषा के सर्वाधिक प्रयुक्त शब्दों पर पुस्तक प्रकाशित की। भारत में इस दिशा में अभी कुछ ही कार्य हुआ है। गुजराती (Phonemic and Morphemic Frequencies of the Gujarati Language—P B Pandit, Poona 1965) तथा मराठी (Phonemic and Morphemic Frequencies of the Marathi Language—S V Bhagwat) में इस दिशा में दो महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं।

हिन्दी में इस दृष्टि से कई काम हुए है। 1958 में मूलत श्रीराम शर्मा द्वारा तैयार की गई, हिन्दी के 500 शब्दों की सूची (Basic Hindi Vocabulary)

भारत सरकार ने प्रकाशित की। उसी वर्ष मूलत उमेशलाल सिंह द्वारा प्रस्तुत हिन्दी के 2000 शब्दों की सूची (Basic Hindi Vocabulary) भी भारत सरकार ने छापी। 1964 म पूना से हिन्दी के सर्वाधिक प्रयुक्त 19,211 शब्दों की एक सूची (Phonemic and Morphemic Frequencies in Hindi —A M Ghatge) प्रकाशित हुई इस प्रसग म बद्रीनाथ कपूर के 1102 हिन्दी शब्दों की सूची (Basic Hindi, वाराणसी 1962) अजमल खाँ की 1100 शब्दों की सूची [नवभारत टाइम्स (18 10 62) म लेख 'बुनियादी हिन्दी का नया प्रयोग'] तथा जगदीशप्रसाद अग्रवाल की 800 शब्दों की सूची (बेसिक हिन्दी शब्द-सूची मुरादाबाद) भी उल्लेख्य हैं। 1967 मे केंद्रीय हिन्दी सस्थान, आगरा की ओर से 5 हजार हिन्दी शब्दों की एक सूची (हिन्दी की आधारभूत शब्दावली) प्रकाश मे आई। उसके एक वर्ष बाद डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया की 2005 शब्दों की सूची (हिन्दी की बेसिक शब्दावली) अलीगढ विश्वविद्यालय से छपी, जो हिन्दी म इस दिशा मे अब तक के हुए सारे कार्यों म निश्चित रूप से सर्वश्रेष्ठ है।

इस प्रसग म यह प्रश्न सहज ही उठता है कि किसी भाषा की आधारभूत शब्दावली खोजने का उद्देश्य क्या है। इसका उद्देश्य है भाषा विशेष के शब्दभडार के सबसे आवश्यक एव मूल अश की जानकारी। यह जानकारी कई क्षेत्रो म हमारे बडे काम की होती है। उदाहरणार्थ उस भाषा को मातृभाषा या अन्य भाषा के रूप मे पढने के लिए, बिना किसी क्रम से शब्द सिखाने की तुलना मे सबसे पहले इन्ही शब्दों की स्तरीकृत जानकारी देना अधिक लाभकर होता है। भाषा शिक्षण के क्षेत्र मे आधारभूत शब्दावली का प्रयोग आधुनिक युग की एक बहुत बडी देन है। इससे अपेक्षाकृत कम समय म, भाषा सीखने वाला अध्येय भाषा म अच्छी गति प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार आशुलिपि निर्माण, मशीनी अनुवाद ऐतिहासिक भाषाविज्ञान (विशेषत भाषाकालक्रमविज्ञान जैसे क्षेत्रो म), अन्य भाषाओ से तुलना के आधार पर पारिवारिक वर्गीकरण तथा उस भाषा के बोलने वालो की मूलभूत आवश्यकताओ एव मनोविज्ञान को समझना आदि अनेकानेक अन्य क्षेत्रो मे भी किसी भाषा की आधारभूत शब्दावली हमारी बहुत सहायता करती है।

किसी भाषा की आधारभूत शब्दावली ज्ञात करने के लिए सबसे पहले हम सामग्री सकलित करनी पडती है। वस्तुत यही सबसे टेढी खीर है। आधार सामग्री म अन्तर के कारण परिणाम मे अन्तर पडना स्वाभाविक है। केन्द्रीय सरकार, केन्द्रीय हिन्दी सस्थान आगरा डक्कन कालिज पूना तथा कैलाशचन्द्र भाटिया ने हिन्दी शब्दभडार के सम्बन्ध म उपर्युक्त पुस्तिकाएँ प्रकाशित की हैं किन्तु तीनो म काफी असमानता है। यह असमानता मुख्यत आधार सामग्री म अन्तर के कारण है। वस्तुत अभी तक भाषाविज्ञान इस सम्बन्ध मे कोई सिद्धान्त नही दे सका है कि किसी भाषा की आधारभूत शब्दावली ज्ञात करने के लिए

आधार सामग्री कितनी और कैसी हो। अर्थात् उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, निबन्ध, आलोचना, रेखाचित्र, जीवनी, सम्मरण, पत्र पत्रिका आदि म क्या क्या लिया जाए। किसका प्रतिशत क्या हो? सोवियत सघ के जिस वृहत काय की चर्चा ऊपर की गई है, उसमे आधार सामग्री इस प्रकार थी —

उप यास, कहानी	59%
नाटक	7%
आलोचना, लेख	14%
पत्र पत्रिकाए	20%

गुजराती पर जिस काय की चर्चा ऊपर है, उसम तीन प्रकार के साहित्य से शब्द लिए गए —

(1) पुस्तको से	28500 शब्द
(2) रेडियो प्रोग्राम से	21500 शब्द
(3) समाचार पत्रो से	49687 शब्द
	99687

पूना से प्रकाशित हिन्दी सूची मे —

(1) पत्र पत्रिकाओ से	45208 शब्द
(2) सरल साहित्य से	23153 शब्द
(3) वैज्ञानिक और गम्भीर साहित्य से	15340 शब्द
(4) अनुवाद, बाल साहित्य, रडियो वार्ता तथा स्त्री साहित्य आदि से	14210 शब्द
	97911

उपयुक्त स स्पष्ट है कि आधार सामग्री म कोई एकरूपता नही है। इस अनेकरूपता के कारण ही एक भाषा के एक ही काल को लेकर यदि चार स्थानो पर अलग-अलग काम हो तो परिणामो म अन्तर होगा। सभी क परिणाम पूणत एक नही हो सकत। इसलिए गणना के आधार पर कोई भी व्यक्ति यह नही कह सकता कि अमुक भाषा के अमुक काल म इतने ही और य ही आधारभूत शब्द थे। वस्तुत आधारभूत शब्दावली के शब्द और उनकी सख्या केवल 'लगभग ही हो सकती है।

मोटे रूप से यह अवश्य कहा जा सकता है कि आधार सामग्री जितनी ही अधिक होगी, परिणाम उतन ही अच्छे होगे। आधारभूत शब्दावली ज्ञात करने

की पद्धति यह है कि आधार-सामग्री से एक एक शब्द को अलग-अलग काड पर लिखते है। फिर सारे कार्डों को वर्णानुक्रम से रख लेते है। ऐसा करने से प्रत्येक शब्द के सार काड एक स्थान पर आ जाते ह, जिनसे यह पता चल जाता है कि कौन शब्द कितनी बार आया है। जो शब्द सबसे अधिक बार आया है उसे सबसे पहले रखते हैं, उससे कम आने वाले को उसके बाद और इसी प्रकार आगे भी। इस तरह से जो सूची बनती है, उससे प्रथम 500, 700, 1000, 2000, 2500 या 3000 शब्द, जसी भी आवश्यकता हो, आधारभूत शब्दावली माने जा सकत है। यो सामान्यत यह देखा गया है कि अधिकाश भाषाओ मे 2000 से 3000 तक एस शब्द खोजे जा सकते हैं जो विभिन्न प्रकार के साहित्या एव बोलचाल मे 65 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक आते हैं। शेष 35 से 20 प्रतिशत तक शब्द उच्च या मध्यवर्ती होते ह।

यहा स्पष्टीकरण के रूप मे कुछ बातें और कही जा सकती हैं। शब्द से यहा अथ है ऐसी भाषिक इकाई, (लेखन मे) जिसके दोनो ओर खाली जगह होनी है। उदाहरणाथ वह घर चला गया' वाक्य मे 'वह' 'घर' 'चला' 'गया' ये चार शब्द हैं। एक शब्द के यदि अनेक रूप (घोडा, घोडे, घोडो) हो तो सूची मे मूल शब्द (घाडा) ही रखा जाता है। कभी-कभी एक ही शब्द दो या अधिक पूणत भिन्न अर्थो म आता है आम (सामान्य, एक फल), पर (परन्तु पख), सोना (स्वण साने की क्रिया)। ऐसे शब्दो के आने पर इन्हे अलग-अलग शब्द मानना चाहिए। अथ के साथ इनके अलग-अलग काड बनन चाहिए। अतिम सूची म भी ये अलग अलग रखे जाएँगे साथ ही स्पष्टता के लिए हर एक के साथ अथ का भी सकेत रहेगा।

बहुत से लोग यह सोचते है कि सभी भाषाओ की आधारभूत शब्दावली एक होती है। इसी धारण से कुछ लोगो न अग्रेजी के आधारभूत शब्दावली के आधार पर अन्य भाषाओ (जस हिन्दी) की आधारभूत शब्दावली एकत्र करने का प्रयास किया है, किन्तु ऐसा सोचना पूणत भ्रामक है। प्रत्यक भाषा की अपनी भौगोलिक, सामाजिक राजनीतिक तथा सास्कृतिक पृष्ठभूमि अलग होती है इसी कारण प्रत्येक भाषा की मूलभूत आवश्यकताएँ भी एक सी नही हो सकती। भारत जसे कृषिप्रधान देश की भाषाओ के शब्दभडार म खेती' शब्द का जितना प्रयोग होगा, कुवत जसे देश की भाषा मे नही हो सकता। इसी प्रकार रूसी भाषा मे धम शब्द का उतना प्रयोग नही हो सकता, जितना हिन्दी आदि धमप्रधान क्षेत्र की भाषाओ मे होगा। अमरीकी अग्रेजी के लिए वीडियो, टेलीविजन, एलीवटर जसे शब्द आधारभूत शब्दावली मे होंगे किन्तु अत्यन्त पिछडे दश की भाषाओ मे ऐसा नही हो सकता।

यही नही किसी एक भाषा के आधारभूत शब्दभडार मे भी समय के साथ परिवतन आता रहता है। हिन्दी के आदि काल म 'पाठशाला' का प्रयोग बहुत होता था, किन्तु अब स्कूल' का प्रयोग उसकी तुलना मे कही अधिक होता है

अभी कुछ वर्ष पहले तक आना, दुअन्नी, सेर, छटाक हिन्दी मे बहुत प्रयुक्त होते थे, बीच मे नया पैसा भी आ गया था, किन्तु अब मात्र पैसा, किलोग्राम ही प्रयोग मे आते हैं।

निष्कर्षत न तो दो भाषाओ की आधारभूत शब्दावली एक हो सकती है, और न किसी एक भाषा की आधारभूत शब्दावली सर्वदा एक रह सकती है। इस तरह किसी भाषा की आधारभूत शब्दावली देश, काल, सभ्यता और संस्कृति पर बहुत कुछ आधारित होती है।

इस प्रसग मे कुछ बातें मैं अपनी ओर से भी कहनी चाहूँगा। मेरे विचार म केवल उपर्युक्त ढग की गणना के आधार पर भी किसी भी भाषा की आधारभूत शब्दावली सूचीबद्ध नही की जा सकती। उदाहरण के लिए, आगर की शब्दसूची मे 'गुरुवार' है किन्तु 'बृहस्पतिवार' नही है हालांकि इसका प्रयोग 'गुरुवार' से कम नही होता। इसी तरह 'दोगुना' है, 'तीनगुना' नही है, 'चौथा' है पर 'पाँचवाँ', 'छठा' नही है, 'उन्होने' है, 'इन्होने' नही है। इस तरह की कमियाँ सांख्यिक आधार पर बनी सभी शब्द-सूचियो मे मिलती है। शिक्षा मत्रालय की सूची म कमर, नमस्कार पैर, फिल्म जैसे शब्द नही हैं। इस प्रकार के कुछ मूल भूत शब्द तो आधारभूत शब्दावली मे, सामग्री का विश्लेषण चाहे जो भी कहे, सम्मिलित कर ही लेना चाहिए। मेरे विचार मे किसी भी भाषा की आधारभूत शब्दावली मे सभी मुख्य सर्वनाम, दिनो तथा महीनो के सभी प्रचलित नाम, 1 से 100 तक की, क्रमबोधक तथा अपूर्णांकबोधक संख्याएँ प्रमुख रगो, फलो, अनाजो, खानो अगो, कपडो तथा सबधियो आदि के नाम, सर्वसामान्य विशेषण तथा क्रियाविशेषण एव सामान्य क्रियाओ के बोधक शब्द (धातुएँ) आदि निश्चित ही आने चाहिए।

इस तरह उपर्युक्त पद्धति पर तैयार की गई आधारभूत शब्दावली म इस प्रकार के अतिरिक्त शब्दो को जोडकर सूची को अधिक पूर्ण तथा सच्चे अर्थों म भाषा विशेष की आधारभूत शब्दावली बनाया जा सकता है।

15

पारिभाषिक शब्द

कुछ शब्द तो सामान्य होते हैं (जैसे खाना, कपडा, मकान आदि), जिनका प्रयोग सामान्य रूप से बोलचाल आदि में किया जाता है, इसके विपरीत कुछ शब्द असामान्य होते हैं जो सामान्यत प्रयुक्त न होकर मात्र प्रशासन, विभिन्न विज्ञानो तथा शास्त्रो आदि विविध प्रकार के विषयो मे ही प्रयुक्त होते हैं। जैसे दर्शन में 'अद्वैत', साहित्यशास्त्र मे 'कथानक' या भाषाविज्ञान मे 'रूपिम' आदि।

'पारिभाषिक शब्द' में दो शब्द है 'परिभाषा' और 'शब्द'। 'शब्द' पर इस पुस्तक के दूसरे अध्याय में विचार किया जा चुका है। अत यहा पहले 'परिभाषा' पर विचार किया जा रहा है।

परिभाषा

अर्थ भाव या सिद्धान्त आदि की दृष्टि से किसी शब्दादि के सम्बन्ध मे सुनिश्चित और स्पष्ट कथन को परिभाषा कहते हैं।

परिभाषा मे निम्नांकित गुणो का होना अपेक्षित होता है—

(1) परिभाषा मे अतिव्याप्ति दोष नही होना चाहिए। अर्थात् उसे ऐसी नही होनी चाहिए कि जितने पर उसके लिए लागू होना अपेक्षित है, उससे अधिक पर लागू हो। जैसे 'पुस्तक उसे कहते हैं जिसे पढा जाए।' इस परिभाषा में अतिव्याप्ति दोष है, क्योकि वह किसी भी पढी जाने वाली चीज (समाचार पत्र, पत्रिका, चिट्ठी आदि) पर लागू हो रही है।

(2) परिभाषा मे अव्याप्ति दोष भी नही होना चाहिए। अर्थात उसे ऐसा नही होना चाहिए कि जितने पर उसके लिए लागू होना अपेक्षित हो, उससे कम पर वह लागू हो। उदाहरण के लिए 'पुस्तक उसे कहते है जिस पर जिल्द हो' मे अव्याप्ति दोष है, क्योंकि बिना जिल्द की भी पुस्तक होती है।

(3) परिभाषा एकवाक्यीय होनी चाहिए। अर्थात उसे एक वाक्य का होना चाहिए। उदाहरण के लिए 'दो अथवा अधिक शब्दो के मिलकर, अर्थ के स्तर पर एक हो जाने को समास कहते हैं।' (व्याकरण), अथवा 'वे प्रक्रियाएँ शिक्षा कहलाती है जिनके माध्यम से व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक और सामाजिक आदि सभी पक्षो का विकास होता है। (शिक्षाशास्त्र)।

(4) परिभाषा मे क्रिया ऐसी होनी चाहिए जिससे सार्वकालिकता का बोध

हो। जैसे 'है', 'होता है' आदि। 'था', 'रहा', 'रहा था', 'रहा होगा', 'होगा', आदि जैसी क्रियाओं का नहीं, जो एककालिक हैं।

(5) परिभाषा में यथासम्भव ऐसे शब्दों का प्रयोग करना चाहिए जो ऐसे न हों कि उनका अर्थ किसी से पूछना या कहीं देखना पड़े।

(6) परिभाषा के स्पष्ट करने वाले अंश में उसी पारिभाषिक शब्द या उससे बने रूप का प्रयोग नहीं होना चाहिए जिसकी परिभाषा दी जा रही हो।

(7) परिभाषा निर्वैयक्तिक होनी चाहिए। उसमें उत्तम पुरुष का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

(8) परिभाषा यथासाध्य संक्षिप्त, सुगठित और स्पष्ट होनी चाहिए।

संक्षेप में, 'किसी भी शब्द आदि के सम्बन्ध में सिद्धांत या अर्थ की दृष्टि से ऐसे सुनिश्चित तथा स्पष्ट कथन को परिभाषा कहते हैं जो अतिव्याप्ति तथा *अव्याप्ति दोष से रहित, एकवाक्यीय, सार्वकालिकताबोधक क्रियायुक्त, तथा निर्वैयक्तिक हो।'*

परिभाषा' पर विचार कर लेने के बाद अब 'पारिभाषिक शब्द' को निम्नांकित रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

पारिभाषिक शब्द

जो शब्द सामान्यतः न प्रयुक्त होकर, केवल विभिन्न शास्त्रों, विज्ञानों तथा प्रशासन आदि विशिष्ट विषयों में ही सुनिश्चित अर्थ में प्रयुक्त होते हैं तथा विभिन्न विषयों के संदर्भ में जिनकी निश्चित परिभाषा दी जा सकती है, पारिभाषिक शब्द कहलाते हैं।

वस्तुतः इन शब्दों की परिभाषा दी जा सकती है, इसीलिए इन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं।

पारिभाषिक शब्दों को हिंदी में 'तकनीकी शब्द' (Technical Term) भी कहते हैं। तकनीकी अंग्रेजी शब्द 'टैकनिकल' का हिंदी रूपांतर है। 'टैकनिकल' का सम्बन्ध या तो टैक्नीक' और टैकनॉलजी से है, किन्तु तकनीकी शब्द' का प्रयोग मात्र 'टैकनीक' या टैक्नालजी' से सबद्ध शब्दों के लिए न होकर सभी तरह के पारिभाषिक शब्द के अर्थ में ही होता है जिसमें प्रशासन, मानविकी, विज्ञान तथा टैकनालजी (विज्ञान का अनुप्रयुक्त रूप) आदि सभी के शब्द आ जाते हैं।

पारिभाषिक शब्द की विशेषताएं

पारिभाषिक शब्दों में मुख्यतः निम्नांकित विशेषताएँ होनी चाहिए —

(1) उनका अर्थ स्पष्ट और सुनिश्चित होना चाहिए।

(2) एक विषय या सिद्धांत में उनका एक ही अर्थ होना चाहिए।

(3) एक विषय में, एक संकल्पना या वस्तु के लिए एक ही पारिभाषिक

शब्द होना चाहिए।

(4) पारिभाषिक शब्द यथासम्भव छोटा होना चाहिए ताकि प्रयोग में असुविधा न हो।

(5) उसे यथासाध्य मूल होना चाहिए, व्याख्यात्मक नहीं। उदाहरण के लिए, जीवविज्ञान में 'दीमक' शब्द ठीक है, उसी के लिए चलनेवाला दूसरा शब्द 'सफेद चींटी' (white ant) नहीं, जो व्याख्यात्मक है। ऐसे ही 'अनशन' ज्यादा अच्छा है बनिस्बत 'भूख हड़ताल' (hunger strike) के।

(6) पारिभाषिक शब्द ऐसा होना चाहिए, जिससे सरलतापूर्वक नये शब्द बनाये जा सकें। जैसे 'मानव', जिससे मानवता, मानवीय, मानवीयता, मानवीकरण, मानविकी आदि सरलता से बन गये हैं। इसके स्थान पर 'नर' लें तो उससे इस प्रकार शब्द बनाना कठिन होगा, यद्यपि उसका भी अर्थ 'मानव' ही है।

(7) समान श्रेणी के पारिभाषिक शब्दों में एकता होनी चाहिए। जैसे भाषाशास्त्र में स्वनिम, रूपिम, अर्थिम, लखिम या उपस्वन, उपरूप, उपार्थ, उपलेख आदि। इसके विपरीत यदि स्वनिम को ध्वनिग्राम कहें तो रूपिम आदि के साथ उसकी एकरूपता नहीं रहेगी। इसी प्रकार रसायनशास्त्र में नाइट्रोजन, आक्सिजन तथा हाइड्रोजन इत्यादि।

प्रकार

कुछ पारिभाषिक शब्द ऐसे भी मिलते हैं जो विषय विशेष में तो पारिभाषिक अर्थ में प्रयुक्त होते हैं किन्तु उस विषय से बाहर उनका प्रयोग सामान्य भाषा में सामान्य अर्थ में भी होता है। दूसरे शब्दों में, ये शब्द कुछ प्रयोगों में पारिभाषिक होते हैं तो कुछ में सामान्य। इस बात को दृष्टि में रखते हुए पारिभाषिक शब्दों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है —

(1) पूर्णपारिभाषिक—वे शब्द जो मात्र पारिभाषिक अर्थ में ही प्रयुक्त होते हैं। इनका प्रयोग क्षेत्र ज्ञान विज्ञान का क्षेत्र ही होता है। सामान्य बोलचाल का नहीं। उदाहरण के लिए व्याकरण का 'क्रियाविशेषण' दर्शन का 'अद्वैत' नाट्यशास्त्र का 'प्रकरी' या गणित का 'दशमलव' इसी प्रकार के शब्द हैं।

(2) अर्धपारिभाषिक—इस नाम का यह अभिप्राय नहीं है कि इन शब्दों के सभी प्रयोगों में इनकी पारिभाषिकता आधी या खण्डित रहती है। वस्तुतः अर्धपारिभाषिक ऐसे शब्दों को कहते हैं, जो कि एक तरफ तो विशिष्ट विज्ञान या शास्त्र में प्रयुक्त होने पर पूर्ण पारिभाषिक शब्द का कार्य करते हैं, और दूसरी ओर साधारण व्यवहार की भाषा में प्रयुक्त होने पर सामान्य शब्द के रूप में आते हैं। उदाहरण के लिए, असंगति, शक्ति, अक्षर, आपत्ति, रेखा तथा ध्वनि आदि शब्द इसी प्रकार के हैं, जो क्रमशः अलंकारशास्त्र, भौतिकी, व्याकरण, विधिशास्त्र, ज्यामिति तथा भाषाविज्ञान में तो पारिभाषिक अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, किन्तु साधारण बोलचाल की भाषा में अपारिभाषिक अथवा सामान्य अर्थ

मे। निष्कपत यह कहा जा सकता है कि अधपारिभाषिक शब्द वे शब्द होते हैं जो पारिभाषिक एव सामा य दोनो ही अर्थों मे व्यवहृत होते हैं, कि तु जब पारिभाषिक अथ मे प्रयुक्त होते हैं तो उनका सामा य अथ नही लिया जा सकता, और जब सामा य अथ मे प्रयुक्त होते हैं तो उनका पारिभाषिक अथ अभिप्रेत नही होता। इस तरह ये शब्द ऐसे नौकर होते हैं, जिनको दो स्वामिनियो की सेवा करनी पडती है, कभी सामा य भाषा की, तो कभी शास्त्रीय भाषा की।

प्रयुक्ति-भेद और पारिभाषिक शब्द

'प्रयुक्ति' का अर्थ है 'प्रयोग-क्षेत्र', अर्थात 'विषय'। या प्रयोग हर विषय मे प्रयुक्त भाषा दूसरे किसी विषय म प्रयुक्त उसी भाषा से, कुछ न-कुछ अलग होती है। उदाहरण के लिए हि दी के प्रयोग क्षेत्र साहित्य, राजनीति अथशास्त्र, रसायन, भौतिकी, कार्यालय आदि अनेकानक है, और इन सभी की हि दी एक दूसरे स अलग है। हि दी के ये अलग-अलग रूप ही हि दी की अलग अलग प्रयुक्तियाँ हैं। हि दी की विभि न प्रयुक्तियो म वाक्य प्रयोग की दृष्टि से अ तर अपेक्षाकृत कम मिलता है कि तु पारिभाषिक शब्दावली का अ तर काफी मिलता है। प्रयुक्ति-भेद और पारिभाषिक शब्द की दृष्टि से मुख्य रूप से तीन बातें संदेय है (क) हर विषय या हर प्रयुक्ति मे आनवाले पारिभाषिक शब्द काफी कुछ अलग हैं। उदाहरण के लिए ब्रह्म माया, अद्वत आदि दशन के श द हैं, तो सक्रिय पूजी, सौदा शक्ति, अवमूल्यन केता एकाधिकार अथशास्त्र के, लक्षणा, अभिधा रूपक, वक्रोक्ति आदि साहित्य के, विशेषण, अव्यय क्रियाविशेषण, सम्प्रदान, अपादान आदि व्याकरण के और विद्वत्परिषद क्लासकाय वस्तुनिष्ठ परीक्षा शिक्षा शास्त्र के। (ख) दूसरी बात यह है कि एक ही शब्द का हि दी की अलग अलग प्रयुक्तियो मे कभी कभी अलग-अलग अथ होता है। उदाहरण क लिए 'धातु शब्द का व्याकरण मे एक अथ है, रसायन म दूसरा है तथा आयुर्वेद म तीसरा है। ऐसे ही व्युत्पत्ति' का का यशास्त्र मे एक अथ है तो व्याकरण या भाषाविज्ञान मे दूसरा। (ग) हम लोग पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग, प्राय अंग्रेजो शब्द को मस्तिष्क मे *रखकर करत है। इसीलिए यह भी यहाँ सकेत करना आवश्यक है कि समशब्दो* की दृष्टि से हि दी और अंग्रेज़ी मे, विभि न प्रयुक्तियो म पूण समानता नही है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी म व्याकरण और वनस्पतिविज्ञान मे 'रूट' श द है, कि तु हि दी मे इसके लिए व्याकरण मे धातु' है तो वनस्पतिविज्ञान म 'जड'। इसके विपरीत, हि दी म व्याकरण, आयुर्विज्ञान तथा रसायन म 'धातु' शब्द है तो इन तीना ही के लिए अँग्रेजी म क्रमश तीन शब्द है रूट, एलिमेंट तथा 'मेटल'। ऐसे ही अँग्रेजी काकार्डेंस के लिए हि दी म व्याकरण मे अ विति, या 'अ वय शब्द चलता है तो पुस्तकालविज्ञान मे 'श दानुक्रमणी, अंग्रेजी फाकस' के लिए हि दी म गणित मे नाभि है तो भौतिकी मे 'फोकस' और भूगोल म 'उदगमके द्र', फक्शन' के लिए भाषाविज्ञान मे 'प्रकाय शब्द है तो विधि (लॉ) मे

'कृत्य', 'डिनोटेशन' के लिए आलोचना मे 'मुख्याथ' तो तकशास्त्र मे 'वस्त्वथ'।

इस तरह प्रयुक्ति भेद के अनुसार पारिभाषिक शब्दा का अथ समझने तथा उनका प्रयोग करने में काफी सतकता अपेक्षित है।

हिन्दी मे पारिभाषिक शब्दो के ग्रहण और निर्माण की मुख्य प्रवृत्तिया

हि दी मे पारिभाषिक शब्दो के ग्रहण और निर्माण की प्रवत्तियाँ या सप्रदाय पाँच हैं राष्ट्रीयतावादी अथवा पुनरुद्धारवादी अतर्राष्ट्रीयतावादी अथवा आदानवादी, प्रयोगवादी, लोकवादी तथा समन्वयवादी। इनम से मुय निम्नाकित चार ही हैं —

1 राष्ट्रीयतावादी

इस प्रवत्ति को पुनरुद्धारवादी, शुद्धतावादी आदि भी कहा गया है। इसम विश्वास रखने वाले लाग पारिभाषिक शब्दो के लिए या तो सस्कृत से शब्द ग्रहण करना चाहते है या सस्कृत के उपसग, प्रत्यय, धातु, शब्द आदि के आधार पर नये शब्द बनाना चाहते है। ऐसे बहुत सारे शब्द लिये तथा बनाये भी गये हैं। इस सप्रदाय के लोगो द्वारा लिये जाने वाले शब्दो म नेपालज (सखिया) तथा शुल्वारि (गधक) आदि हैं, तो बनने वाले शब्दो मे मुद्रणालय, विश्वविद्यालय, कार्यालय, यायालय, मुख्यालय, दूरभाष, दूरदशन, दूरमुद्रक आदि है।

इस प्रवृत्ति के पक्ष में एक ही बात कही जा सकती है और वह यह कि सस्कृत मे शब्दो के ग्रहण करन पर उनके आधार पर आवश्यकतानुसार नये शब्द सुविधा से बनाये जा सकते है। जैसे—'विधान' से विधान सभा, विधान परिषद सविधान, वैधानिकता, सवधानिक आदि। लोक म प्रचलित या अग्रेजी से गृहीत श दो से ऐसा करना सभव नही है। उनमे इतनी उवरता नही होती।

इस प्रवृत्ति के विरुद्ध निम्नाकित बातें कही जा सकती है (1) हि दी मे प्रचलित देशज, विदेशी तथा बहुत से तदभव शब्दा का लाभ इस सप्रदाय ने नही उठाया जब कि ये हि दी की सम्पत्ति हैं। उदाहरणाथ इसन 'दूरबीन' के स्थान पर 'दूरेक्ष' 'क्लक' के स्थान पर लिपिक' या 'चेक' के स्थान पर 'धनादेश' जैसे शब्दो के प्रयोग पर बल दिया है। (2) शब्दा के निर्माण मे इसने या तो सस्कृत के उपसग प्रत्ययो की सहायता ली, या नये प्रत्यय बनाये, कि तु हि दी के बहुप्रचलित उपसर्गों प्रत्ययो (जसे ना, बे, दार बद, ची आदि) का पूणत बहिष्कार किया है। (3) इस सप्रदाय न प्राचीन-साहित्य से जो शब्द लिये हैं, वे आज इतने दुरूह हैं कि उ हे सामा यत समझना कठिन है। (4) जो नये शब्द बनाये गये हैं उनम बहुत से शब्दो की रचना अँग्रेजी शब्द के उपसर्गों प्रत्ययो को दखकर यत्रवत् (जसे mani+pula+tion=प्र+हस्त+न, per+meter= परि+माप, आदि) कर दी गयी है बिना इन बातो का ध्यान रखे कि वे आज की

जीवित भाषा म चल भी सकते हैं या नही—जैसे 'दिवालियापन' के लिए 'नष्ट-निधिता'। (5) हमारी आज की सस्कृति मिश्रित सस्कृति है, अत हमार शब्दा को भी उसका प्रतिनिधित्व करना चाहिए, किन्तु इस सप्रदाय ने मध्यकाल म अरबी फारसी तुर्की तथा आधुनिक काल म अंग्रेजी के योगदान को नकारते हुए दो हज़ार वर्ष पीछे जाकर हमारी भाषा को सस्कृत के अनुरूप बनाना चाहा है, तथा उसे जनता के बीच से उठाकर वेदा शास्त्रा के सस्कृत मडित सिंहासन पर आसीन करने का प्रयास किया है।

2 अतर्राष्ट्रीयतावादी

इसे आदानवादी, शब्दग्रहणवादी, स्वीकारवादी आदि नाम भी दिये गए ह। हमार अधिकाश वैज्ञानिक इसी मत के हैं। उनका कहना है कि अंग्रेजी तथा अतर्राष्ट्रीय शब्दा के लिए हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओ म पारिभाषिक शब्द बनाने या सस्कृत आदि से लेने की आवश्यकता नही। इससे अच्छा यह है कि इन शब्दा का ज्या का त्यो, या हिन्दी आदि की ध्वनि व्यवस्था के अनुरूप इन्ह अनुकूलित करके, ले लिया जाय। इससे तीन लाभ होग (क) शब्द बनाने या प्राचीन साहित्य से शब्द खोजने आदि के झझट से हम बच जायेंगे, (ख) इन शब्दा का ले लेन से, अंग्रेजी, या अतर्राष्ट्रीय स्तर पर हम अन्य ऐसी भाषाओ से अपने प्रयोग म जुडे रहगे जो इन शब्दा का प्रयोग करती हैं (ग) पूर्णतया नयी पारिभाषिक शब्दावली स्वीकारने पर व भारतीय वैज्ञानिक जो अपने अपने क्षेत्रो मे लगे है भारतीय भाषाओ म ग्रथ रचना करना भी चाह तो नही कर सकते क्याकि नये शब्दो से परिचित होने तथा उन्ह याद करने का समय निकालना उनके लिए सभव नही है। यदि अतर्राष्ट्रीय तथा अंग्रेजी शब्दा को ले लें, तो यह कठिनाई उनके सामने नही आएगी और व सरलता से हिन्दी म भी पुस्तकें लिख सकेंग।

यो तो इसम सन्देह नही कि हमने काफी ऐसे शब्दो को ग्रहण किया है और सभी जीवित भाषाएँ ऐसा करती हैं किन्तु सच्चाई यह है कि सारे के सारे शब्दा को ग्रहण करना किसी भी भाषा के लिए उचित नही कहा जा सकता। इस सबध म दो-तीन बातें ध्यान देने की है (क) किसी भी समुन्नत देश म ऐसा नहा है कि सार के सारे शब्द किसी दूसरी भाषा से लिये गये हो। मूलत यह प्रश्न देश के व्यक्तित्व से जुडा होता है, अत सारे शब्द हम अंग्रेजी स नही ले सकते, (ख) अंग्रेजी के सारे पारिभाषिक शब्द हिन्दी पचा भी नही सकती, वस्तुत कोई भी भाषा मुख्यत अंग्रेजी हिन्दी जस अतरवाली किसी दूसरी भाषा के सार शब्द नही पचा सकती (ग) गहीत शब्द (लोन वर्ड स) अक्षमत होते हैं क्याकि उनमे जनन शक्ति (नये शब्द बनाने की क्षमता) या तो बहुत कम होती है या बिलकुल नही होती। किन्तु हमारे शब्दा को ऐसा होना चाहिए कि उनस सुविधानुसार नय शब्द बनाये जा सकें। या हिन्दी ने एक सीमा तक एसे अतर्राष्ट्रीय शब्द लिये ह तथा उनके आधार पर नये शब्द भी बनाये है। जैसे मीटर, लीटर, राडार, टन,

रेडियो, आक्सीजन, नाइट्रोजन, फोकसित, रजिस्ट्रीकृत, काडरित, मोटर गोकार्ट आदि।

इस प्रसग म यह उल्लेख्य है कि भारत सरकार के शिक्षा मत्रालय द्वारा स्थापित शब्दावली-आयोग का भी निणय है कि निम्नाकित दो प्रकार के शब्द भारतीय भाषाओ म ले लिए जाएँ (क) एस शब्द जो व्यक्तियो क नाम क आधार पर बनाय गय हैं, जसे मार्क्सवाद (कालमाक्स) ब्रेल (ब्रेल), वायकाट (कप्टिन वायकाट), गिलोटिन (डा० गिलोटिन), आदि, (ख) ऐसे अ य शब्द जिनका विश्व की काफी भाषाओ म प्रयोग होता है—जैसे टेलीफोन लाइसेंस, रायल्टी परमिट, टरिफ आदि।

3 लोकवादी

लोकवादी सम्प्रदाय लोकप्रचलित शब्दो के आधार पर पारिभाषिक शब्द बनाने का पक्षधर रहा है। उदाहरण के लिए यदि मटर्निटी होम को अपनाने के पक्ष म अ तर्राष्ट्रीयतावादी रहे हैं, तो प्रसूतिगृह को लेने के पक्ष म राष्ट्रीयतावादी किंतु लोकवादी लोकप्रचलित 'जच्चा तथा घर' म 'जच्चाघर' बना कर अपनाने क पक्ष म रहे ह। घुसपठिया दलबदलू पावती भी इसी प्रकार क शब्द हैं। वस्तुत इसम सन्देह नही कि हिन्दी की अपनी पूरी शब्दावली यदि इस श्रेणी की बनायी जा सके तो बहुत अच्छा हो किन्तु कठिनाई यह है कि सभी पारिभाषिक शब्दो का निर्माण लोक प्रचलित शब्दो के आधार पर सभव नही है, क्योकि लोकप्रचलित शब्द इस दृष्टि से पर्याप्त नही है। उदाहरण के लिए, आकाशवाणी और रेडियो के समकक्ष कोई लोकनिर्मित शब्द रखना कठिन है। यही स्थिति टेलीविजन दूरदर्शन, टेलीफोन-दूरभाष, मिनिस्ट्री मत्रालय सक्रेटरी सचिव क सबध म भी है। यो जिन शब्दो के लिए लोक शब्द उपलब्ध हो उन्ह अवश्य अपनाया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए 'कचहरी' क रहते, 'कोर्ट' और 'न्यायालय' के हिन्दी म प्रचलित होने या स्वीकार होने का शली भेद के अतिरिक्त कोई और औचित्य नही है।

4 समन्वयवादी

वस्तुत काफी पढे लिखे लोग इस पक्ष म है कि हिन्दी ही नही, सभी भारतीय भाषाओ के लिए सर्वोत्तम माग समन्वयवाद का हो सकता है अर्थात उपयुक्त तीनो का यथोचित समन्वय। इसकी मूलभूत बातें य है (क) अपने लोकप्रचलित शब्द भडार, उपसग तथा प्रत्यय आदि का पूरा उपयोग करें। चाहे शब्द ग्रहण करने की समस्या हो, अथवा नये शब्द बनाने की, (ख) ऐसे विदेशी, देशज तथा तदभव शब्द जो खूब चल पड़े है या नये है किन्तु जिनके लिए नये शब्द लेने या गढने की आवश्यकता नही है वे ले लिये जाएँ। यह लेना अतर्राष्ट्रीय शब्दो का भी हो सकता है अग्रेजी शब्दो का भी अपनी परपरा के प्राचीन शब्दो का भी तथा

अन्य भारतीय भाषाओं या बोलियों में शब्दों का भी। हर जीवित भाषा ऐसा करती है और उसे करना भी चाहिए, (ग) लिया जाने वाला कोई शब्द यदि ध्वनि की दृष्टि से हमारी ध्वनि-व्यवस्था में अनुकूल नहीं, तो उसे अनुकूलित कर लेना चाहिए—जैसे 'एकेडमी' के लिए 'अकादमी' या 'टेक्नीक' के लिए 'तकनीक', (घ) अनिवार्य होने पर अपनी भाषा के उपसर्ग, प्रत्यय, शब्द, धातु या अन्य भाषाओं से गृहीत शब्दों के आधार पर नये शब्द बनाए जायें, किन्तु यह ध्यान रखा जाये कि उनमें अटपटापन न हो तथा वे अपनी भाषा में प्रयोक्ता, श्रोता या पाठक को चौंकाये बिना सरलता से चल सकें, (ङ) और अंत में, हिन्दी की शैलियों की दृष्टि से किसी एक पारिभाषिक शब्द के लिए, हमारे पास यदि एकाधिक शब्द हों तो हमें कोई आपत्ति नहीं होना चाहिए। ऐसी स्थिति में शैली के अनुसार चयन की गुंजाइश रहेगी। उदाहरणार्थ —

Suspense Account	उचंती खाता, निलंबित लेखा
Actual Cost	असली कीमत, वास्तविक मूल्य
Absurd Statement	बेतुका बयान, अर्थहीन वक्तव्य
Affidavit	हलफनामा, शपथपत्र
Agreement Form	करारनामा, अनुबंधपत्र
Adulterated Drugs	मिलावटी दवाएँ, अपमिश्रित औषधियाँ
No Admission	अंदर आना मना है, प्रवेश निषेध
Rejected Application	नामंजूर अर्जी, अस्वीकृत आवेदनपत्र

पारिभाषिक शब्दों की रचना

हिंदी में पारिभाषिक शब्दों की कमी दूर करने के लिए दो प्रकार के प्रयास किये गये हैं —

(क) विभिन्न भाषाओं और बोलियों से शब्द ग्रहण

(ख) नये शब्दों का निर्माण

शब्द ग्रहण मुख्यतः निम्नांकित स्रोतों से हुए है—

(अ) संस्कृत से—जैसे तस्कर (स्मगलर)

(आ) हिंदी भाषा की बोलियों से—जैसे दलबदल (डिफेक्शन), दलबदलू (डिफेक्टर), घुसपैठिया (इनफिल्ट्रेटर) भाई भतीजावाद, आया राम गया राम (दलबदलू) आदि।

(इ) भारत की आधुनिक भाषाओं से—जैसे बँगला से साजगृह (ग्रीनरूम), कन्नड से प्रतिष्ठान (इस्टब्लिशमेंट) आदि।

(ई) विदेशी भाषाओं (मुख्यतः अंग्रेजी) से—जैसे मोटर, लीटर, विटामिन, राडार, आक्सीजन आदि।

नये शब्दों का निर्माण उपसर्ग, प्रत्यय तथा समास पद्धति की सहायता से हुआ

है। इनमे प्राय तो सस्कृत के तत्सम शब्दो का प्रयोग हुआ है, और कुछ अग्रेजी शब्दों का। तदभव तथा हिन्दी मे गृहीत अरबी फारसी शब्दो से अपेक्षाकृत कम ही शब्दो की रचना हुई है। यो कभी कभी विदेशी शब्दो की छाया पर भी पारिभाषिक शब्द बना लिये जाते हैं। जैसे — 'ट्रैजेडी' से 'त्रासदी', 'कमेडी' से 'कामदी', 'इटरिम' से 'अतरिम' पराबोला' से 'परवलय' आदि।

निर्माण और प्रयोग की अशुद्धिया

हिंदी म पारिभाषिक शब्दो के निर्माण और उनके प्रयोग से सबद्ध अशुद्धिया मुख्यत दस ग्यारह प्रकार की हो सकती हैं —

(1) **रचना सबधी**—पारिभाषिक शब्दो की रचना मे प्राय अशुद्धियाँ हो जाती है। जैसे 'अतरपणन (आविट्रेज) के लिए 'अतपणन' (अ तर+पणन), अ त श्वसन' (इनहेलेशन) के लिए 'अतश्वसन' (अत +श्वसन), 'अत पाशी' (इटरलाकिंग) के लिए 'अ तर्पाशी (अ त +पाशी), पुन स्मरण' (रीकाल) के लिए पुनस्मरण(पुन +स्मरण), 'पुनरधिगम (रीलर्निंग) के लिए पुन अधिगम' या 'पुनरअधिगम' (पुन +अधिगम), 'वाक्-सुधार' (स्पीच-करेक्शन) के लिए वाग्सुधार' या 'वाग सुधार' या 'वाकसुधार' (वाक+सुधार), 'प्राणिविनान' (बाइलजी) के लिए 'प्राणीविज्ञान', 'प्राणिजात (फाना) के लिए 'प्राणीजात' आदि। य अशुद्धिया उपसग, प्रत्यय तथा समास प्रक्रिया स बनाये गय यौगिक पारिभाषिक शब्नो मे सधि आदि की दृष्टि से होती हैं। यह आवश्यक है कि शन्दनिर्माण करते समय सधि और समास प्रक्रिया सबधी नियमा का ध्यान रखा जाए।

(2) **प्रयोग-सबधी**—पारिभाषिक शब्नो की मात्र जानकारी ही पर्याप्त नही है, उनका ठीक प्रयोग भी जानना चाहिए। उदाहरण के लिए अग्रेजी म एक शब्द 'इमोशनल' है। इसके लिए हिंदी मे 'भावुक' और 'भावप्रधान' दो शब्द हैं, किन्तु इन दोनों का प्रयोग एक सदभ मे नही किया जा सकता। व्यक्ति तो 'भावुक' होता है और रचना 'भावप्रधान' होती है अर्थात् रचना को 'भावुक नही कहा जा सकता और न व्यक्ति को 'भावप्रधान'। यदि ऐसा कहा जाये तो प्रयोग-सबधी अशुद्धि हो जायगी। इसी प्रकार तकशास्त्र का एक अग्रेजी शब्द है 'इनफरेंस'। इसके लिए हिंदी मे 'अनुमान' और 'अनुमिति' दो शब्द है। दानो ही सना ह किन्तु वाक्य म 'अनुमान करना' या 'अनुमान लगाना तो कह सकते है किन्तु 'अनुमिति करना' या 'अनुमिति लगाना नही कह सकते। इसी प्रकार अग्रेजी जेनेरेटर' के लिए हिंदी म 'जनित्र' और 'जनक' दो पारिभाषिक शब्द हैं और दानो का अथ एक है, किन्तु 'जनित्र' का प्रयोग 'यत्र के लिए ही होता है, जबकि 'जनक' का प्रयोग अन्यत्र।

(3) **अथ-सबधी**—कुछ पारिभाषिक शब्द रूपीय साम्य के कारण काफी मिलते जुलते होते हैं, किन्तु उनके अथ मे अन्तर होता है। ऐसे शब्दो के प्रयोग मे

सतक रहना चाहिए नही तो अथ की अशुद्धि हो जाती है। उदाहरण के लिए, भाग, विभाग, अनुभाग, प्रभाग लें। इनमे 'भाग' पाट/पोशन है, तो 'विभाग डिपाटमट, 'अनुभाग सेक्शन तथा 'प्रभाग' डिवीजन। एस ही आदेश (आडर), अनुदेश(इन्स्ट्रक्शन), निदेश (रफरेंस), प्रवर, अवर आर्थिक (इकनामिक) आर्थी, विज्ञानी, वैज्ञानिक, विज्ञप्ति, अनुज्ञप्ति, दाता, आदाता (रिसीवर), अनुदाता (ग्राटर), निर्देशक (सुपरवाइजर), निदेशक (डायरेक्टर), निरीक्षक (इस्पेक्टर), अधीक्षक (सुपरिंटेंडेंट), पयवेक्षक (सुपरवाइजर) न्यास (ट्रस्ट) विन्यास, दशक, परिदशक (विजिटर) नियम परिनियम (स्टैच्यूट), परिरोध (कनफाइनमट), अनुरोध (रिक्वेस्ट) निरोध (डिटेंशन), योजना (प्लान), परियोजना (प्रोजेक्ट), अनुलिपि (ट्रासक्रिप्शन), प्रतिलिपि (कापी) युक्ति, प्रयुक्ति, नियुक्ति, शासन, प्रशासन, अनुशासन, अनुष्ठान (सालेमनाइजेशन), प्रतिष्ठान (फाउडेशन), पूरक (काम्प्लीमटरी), अनुपूरक (सप्लीमटरी), सकाय (फैकल्टी), निकाय (बॉडी), तथा अतिक्रमण (वायोलेशन), अधिक्रमण (एनक्रोचमट) आदि।

कुछ शब्दो मे रूप की समानता तो नही होती किन्तु अथ का अतर होता है, अत उनके प्रयोग म भी सतक रहना चाहिए, जसे निकालना, निलबन करना, बर्खास्त करना निवृत्त करना, या निष्कासन (एक्सपल्शन), निलबित (ससपेंशन), बर्खास्तगी (डिस्मिसल) निवृत्ति (रिटायरमट), आदि।

(4) **प्रयुक्ति-सबधी**—प्रयुक्ति का अथ है प्रयोग-क्षेत्र या विषय-क्षेत्र के अनुसार भाषा के विविध रूप या शैलीय भेद। उदाहरण के लिए, साहित्य की हिंदी, वकीलो की हिंदी सरकारी कार्यालय की हिंदी, इजीनियरो की हिंदी पूणत एक नही होती। ये हिंदी की अलग अलग प्रयुक्तियाँ हैं। इनमे वाक्य रचना का तो अतर होता ही है, मुख्य अतर शब्दावली का होता है। यो कुछ पारिभाषिक शब्द तो एकाधिक विषयो म एक ही रहते हैं, जस गणित, भौतिकी, भूगोल तथा भूविज्ञान म अग्रेजी शब्द 'डामिनेंट' के लिए हिंदी म 'प्रभावी' शब्द चलता है, या धातु' शब्द धातुविज्ञान आयुर्वेद तथा व्याकरण तीनो म ही चलता है, किन्तु बहुत से शब्द ऐसे होते हैं जो हर विषय के लिए अलग अलग होते हैं। उदाहरण के लिए अग्रेजी मे गणित, भौतिकी तथा भूगोल म एक ही शब्द 'फोकस चलता है, किन्तु हिंदी मे इसके लिए गणित मे 'नाभि', भौतिकी म 'फोकस' तथा भूगोल म 'उदगम-केंद्र' प्रयुक्त होते हैं। अत यदि कोई भूगोल म 'नाभि' या गणित में 'उदगम केंद्र' का प्रयोग करे तो यह प्रयुक्ति की अशुद्धि मानी जाएगी। एसे ही अग्रेजी 'इक्वाडेंस' के लिए पुस्तकालयविज्ञान मे 'शब्दानुक्रमणी' है तो भाषा विज्ञान मे 'अन्वय', या अग्रेजी 'सेक्यूलर' के लिए राजनीति म 'धर्मनिरपेक्ष' तो अथशास्त्र म 'सुदीघकालीन'।

(5) **रूपातर-सबधी**—कभी-कभी पारिभाषिक शब्द स, प्रयोग के अनुसार अन्य रूप बनाने की भी आवश्यकता पडती है। इसकी व्यावहारिक जानकारी भी प्रयोक्ता के लिए आवश्यक है। यदि वह नहीं जानता तो उसके लिए प्रयोग करना

कठिन होता है। जसे 'पजीयन' या 'पजीकरण', किन्तु 'पजीकृत पत्र' 'निलबन' किन्तु 'निलबित व्यक्ति', 'भाषा-अधिगम' किन्तु 'अधिगत भाषा , 'ग्रहण' किन्तु 'गृहीत', 'अनुवाद' किंतु 'अनूदित', 'परित्याग' किंतु 'परित्यक्त', अनुराग' किंतु 'अनुरक्त', 'विराग' किंतु 'विरक्त', 'परिग्रहण' किंतु 'परिगृहीत', 'विस्तार' किंतु 'विस्तत', 'व्यपदेशन' (रिप्रेजेंटेशन) किंतु 'व्यपदिष्ट' (रिप्रेजेंटिड), 'आरक्षण' किंतु 'आरक्षित', या कार्यान्वयन कार्यान्वित', 'सपोषक-सपोषण-सपुष्ट', 'आदेश आदिष्ट' आदि।

(6) सहप्रयोग-सबधी—'सहप्रयोग' का अर्थ है 'साथ-साथ प्रयोग'। कभी-कभी एक ही विषय मे अलग-अलग शब्दो के सदर्भों मे अलग-अलग शब्दो का प्रयोग अपेक्षित होता है। उदाहरण के लिए राजनीतिविज्ञान के 'सेक्युलर लाइफ', 'सेक्युलर पालिटिक्स', 'सेक्युलर पावर' तीन शब्द लें। अग्रेजी मे तीनो मे 'सेक्युलर' है, किंतु हिंदी मे इनके लिए क्रमश 'ऐहिक जीवन', 'धर्मनिरपेक्ष राजनीति' तथा 'लौकिक शक्ति शब्द चलते है अर्थात् 'जीवन' के साथ 'ऐहिक' राजनीति के साथ 'धर्मनिरपेक्ष' और 'शक्ति' के साथ 'लौकिक'। यदि कोई व्यक्ति तीनो शब्दो मे 'ऐहिक', 'धर्मनिरपेक्ष' या 'लौकिक' का प्रयोग करे तो सहप्रयोग-सबधी अशुद्धि हो जायेगी। ऐसे ही अर्थशास्त्र मे 'प्रकाशित दर' (पेपर रेट), 'रुक्के पर उधार' (पेपर क्रेडिट), 'करेंसी नोट' (पेपर करेंसी) तथा 'कागजी मुद्रा' (पेपर मनी) मे अग्रेजी 'पेपर' के लिए चार शब्द हैं।

(7) हम लोग प्राय पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग अग्रेजी प्रयोग को दृष्टि म रखकर करते हैं। ऐसे म प्राय यह हो जाता है कि अग्रेजी मे कोई शब्द यदि कई अर्थों म आ रहा है तो हिंदी मे एक ही शब्द को उन अर्थों म प्रयुक्त करन का प्रयास करते हैं। एक विज्ञापन आता है प्रथम कक्षा का बनर। स्पष्ट ही अनुवादक न अग्रेजी 'क्लास' क शिक्षाशास्त्रीय प्रतिशब्द का प्रयोग अनपेक्षित स्थान पर करने की अशुद्धि इसम की है। होना चाहिए प्रथम श्रेणी का बनर या 'बहुत ही अच्छा बनर'। ऐसे ही यह आवश्यक नही कि अग्रेजी मे विभिन्न विज्ञानो और शास्त्रो मे एक शब्द का प्रयोग हो रहा है तो हिंदी मे भी ऐसा ही हो। उदाहरण के लिए अग्रेजी 'रूट' व्याकरण मे भी आता है वनस्पतिविज्ञान म भी किंतु उसके स्थान पर हिंदी मे एक मे 'धातु' का प्रयाग होगा तो दूसरे मे 'जड' का ऐसे ही अग्रेजी 'फाउडेशन हिंदी म प्रशासन मे 'प्रतिष्ठान है तो वास्तुशास्त्र म नीव है। इसके विपरीत कभी कभी अग्रेजी मे कई शब्दो का प्रयाग हाता है, और हिंदी म उन सभी के लिए एक शब्द आता है। उदाहरण के लिए, अग्रेजी म धातुविज्ञान म 'मटल', आयुर्विज्ञान मे 'एलिमेंट' तथा व्याकरण मे 'रूट है, किंतु हिंदी म तीनो के लिए धातु है।

(8) तकनीकी शब्द के स्थान पर सामान्य शब्द का प्रयोग नही किया जा सकता। उदाहरण के लिए रसायन म पानी' और 'नमक का प्रयोग न कर 'जल' और 'लवण का प्रयोग करना चाहिए। ऐसे ही प्रशासन मे आदेश' शब्द

उपयुक्त है न कि 'आज्ञा'।

(9) पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग, जहाँ अपेक्षित न हो, सामान्य भाषा मे नही करना चाहिए। उदाहरण के लिए 'ऐज ए मैटर आफ फैक्ट' के लिए 'तथ्य के पुद्गल के रूप मे' का प्रयोग नहीं किया जा सकता, यद्यपि 'मैटर' के लिए दर्शन मे 'पुदगल' तथा 'फैक्ट' के लिए 'तथ्य' का प्रयोग होता है। इसके लिए 'तत्त्वत ', 'वस्तुत ', या 'वास्तव मे' उपयुक्त होंगे। ऐसे ही सामान्य भाषा मे 'आज्ञा' का प्रयोग ही ठीक है, 'अनुदेश' का नही।

(10) यो तो किसी भी एक भाषा मे एक सकल्पना या एक वस्तु आदि के लिए एक ही पारिभाषिकशब्द होना चाहिए, किंतु हिंदी मे अभी तक पारिभाषिक शब्दो का पूर्ण निश्चयन नही हुआ है, अत एक सकल्पना के लिए एकाधिक शब्द चल रहे हैं। उदाहरण के लिए, भाषाविज्ञान के पारिभाषिक शब्द 'फोनीम' के लिए हिंदी में ध्वनिग्राम, ध्वनिम, स्वनिम, 'एलोफोन' के लिए सध्वनि, सस्वन, उपस्वन, या 'फिजिक्स' के लिए भौतिकी, भौतिकविज्ञान, भौतिकशास्त्र। ऐसी स्थिति मे यह ध्यान देने की बात है कि एक लेख, पुस्तक, भाषण या बातचीत मे एक का ही प्रयोग किया जाए, कभी एक, और कभी दूसरे का नही।

(11) हिंदी में हिंदी-हिंदुस्तानी उर्दू तथा अंग्रेजी मिश्रित शैलियो के कारण कई पारिभाषिक शब्द एक ही अर्थ में चल रहे हैं। जैसे प्रसूतिगृह-जच्चाघर-मैटरनिटी होम, राजयक्ष्मा तपेदिक-टी०बी०, मसूरिका चेचक माता-स्मालपॉक्स मूल्य दाम-कीमत प्राइस आदि। प्रयोक्ता को अपनी शैली के अनुसार इनमें से शब्द चुन लेने चाहिए। एक शैली में दूसरी शैली का प्रयोग अटपटा लगता है। या ज्यादा अच्छा हो कि मैटरनिटी होम', 'टी०बी०', स्मालपॉक्स' तथा 'प्राइस' जसे अंग्रेजी शब्दो का प्रयोग हिंदी में न किया जाय और पढे लिखे लोगो में प्रचलित अंग्रेजी मिश्रित शैली से बचा जाए।



डॉ॰ भोलानाथ तिवारी

तिवारी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले के एक गाव म १९२३ म हुआ था। आपकी शिक्षा दीक्षा मुख्यत प्रयाग विश्वविद्यालय म हुई। तिवारी जी का जीवन बहुत ही सघपपूण रहा है तथा कुली, चपरासी, एकाउटट, टाइपिस्ट से लेकर महाराज रीवा के मत्री के रूप मे आपने दसिया नौकरिया करते हुए अपने पैरा पर खडे होकर अपनी शिक्षा प्राप्त की है। भारतीय स्वतत्रता सग्राम से भी आपका अत्यत निकट का सबध रहा है। 1942 के 'भारत छोडो' आदोलन मे आपके सीने पर दो गोलिया मारी गई थी किंतु मत्यु और जीवन के सघष म जीवन की विजय हुई और तिवारी जी मरकर भी बच गए।

पचास से अधिक पुस्तका के लेखक तिवारी जी भाषा-विज्ञान क जाने माने विद्वान है। इनकी कुछ प्रमुख कृतिया है —

हिंदी ध्वनिया और उनका उच्चारण, हिंदी वतनी की समस्याएँ हिंदी भाषा, अच्छी हिंदी, राजभाषा हिंदी, ताजुज्बेकी (सोवियत सघ की हिंदी बोली), अनुवादविज्ञान, अनुवाद की व्यावहारिक समस्याएँ, काव्यानुवाद की समस्याएँ कार्यालयी अनुवाद की समस्याएँ, पारिभाषिक शब्दावली कुछ समस्याएँ, कोशविज्ञान, हिंदी मुहावरा कोश, बहत पर्यायवाची कोश, भाषाविज्ञान काश, तुलसी शब्दसागर, शैलीविज्ञान, शब्दा का जीवन, शब्दा की कहानी, भाषाविज्ञान, आधुनिक भाषाविज्ञान, भारतीय भाषाविज्ञान की भूमिका